एम.एस.डब्ल्यू. उत्तरार्द्ध
द्वितीय प्रश्नपत्र

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य एवं समूह कार्य

(SOCIAL CASE WORK AND GROUP WORK)

मध्यप्रदेश भोज (मुक्त) विश्वविद्यालय – भोपाल
MADHYA PRADESH BHOJ (OPEN) UNIVERSITY – BHOPAL

Reviewer Committee

1. Dr. Deepika Gupta
   Assistant Prof.
   IEHE College, Bhopal (M.P.)

2. Dr. Shailja Dubey
   Professor
   IEHE College, Bhopal (M.P.)

3. Dr. Archana Chauhan
   Professor
   Govt. S.N.G. (PG) Autonomous College
   Bhopal (M.P.)

Advisory Committee

1. Dr. Jayant Sonwalkar
   Hon'ble Vice Chancellor
   Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal (MP)

2. Dr. L.S. Solanki
   Registrar
   Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal(MP)

3. Dr. Anjali Singh
   Director
   Student Support Madhya Pradesh Bhoj (Open)
   University, Bhopal(MP)

4. Dr. Deepika Gupta
   Assistant Prof.
   IEHE College, Bhopal (M.P.)

5. Dr. Shailja Dubey
   Professor
   IEHE College, Bhopal (M.P.)

6. Dr. Archana Chauhan
   Professor
   Govt. S.N.G. (PG) Autonomous College
   Bhopal (M.P.)

COURSE WRITERS

Dr Rajesh Kushwaha, Assistant Professor, Department of Social Work, Institute of Social Sciences, Dr. B. R. Ambedkar University, Agra
Units (1-4)

Copyright © Reserved, Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal

All rights reserved. No part of this publication which is material protected by this copyright notice may be reproduced or transmitted or utilized or stored in any form or by any means now known or hereinafter invented, electronic, digital or mechanical, including photocopying, scanning, recording or by any information storage or retrieval system, without prior written permission from the Registrar, Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal.

Information contained in this book has been published by VIKAS® Publishing House Pvt. Ltd. and has been obtained by its Authors from sources believed to be reliable and are correct to the best of their knowledge. However, the Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal, Publisher and its Authors shall in no event be liable for any errors, omissions or damages arising out of use of this information and specifically disclaim any implied warranties or merchantability or fitness for any particular use.

Published by Registrar, MP Bhoj (Open) University, Bhopal in 2020

Vikas® is the registered trademark of Vikas® Publishing House Pvt. Ltd.

VIKAS® PUBLISHING HOUSE PVT. LTD.
E-28, Sector-8, Noida - 201301 (UP)
Phone: 0120-4078900 • Fax: 0120-4078999
Regd. Office: A-27, 2nd Floor, Mohan Co-operative Industrial Estate, New Delhi 1100 44
• Website: www.vikaspublishing.com • Email: helpline@vikaspublishing.com

SYLLABI-BOOK MAPPING TABLE

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य एवं समूह कार्य

Syllabi	Mapping in Book
इकाई–1 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की एक व्यावसायिक समाज कार्य की प्रविधि के रूप में आवश्यकतायें– सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की व्यावसायिक समाज कार्य की एक प्रविधि के रूप में अवधारणा, सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के व्यावसायिक समाज कार्य की एक प्रविधि के रूप में उद्देश्य, सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के एक व्यावसायिक समाज कार्य की प्रविधि के रूप में क्षेत्र; सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के अंग– सेवार्थी या व्यक्ति, समस्या, संस्था या स्थान, प्रक्रिया, सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के अंगों के मध्य संबंध	**इकाई 1** : सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य, व्यावसायिक समाज कार्य की प्रविधि के रूप में **(पृष्ठ 3–25)**
इकाई–2 समाज कार्य : सामाजिक स्थिति और भूमिका, अहम् और अनुकूलन– सामाजिक स्थिति का अर्थ, सामाजिक स्थिति की उत्पत्ति, सामाजिक स्थिति की अवधारणायें, सामाजिक भूमिका का अर्थ एवं परिभाषायें, सामाजिक भूमिका का वर्गीकरण, सामाजिक भूमिका की विशेषतायें, अहम् का अर्थ, अहम् की दृढ़ता, अहम् के कार्य, अनुकूलन का अर्थ, अनुकूलन के प्रकार, अनुकूलन की प्रक्रिया; सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के अनुप्रयोग के रूप में समाज कार्य के सामान्य सिद्धांत– वैयक्तिकरण का सिद्धांत, भावनाओं के उद्देश्यपूर्ण प्रगटन का सिद्धांत, नियंत्रित संवेगात्मक संबंधों का सिद्धांत, स्वीकृति का सिद्धांत, अनिर्णायक मनोवृत्ति का सिद्धांत, आत्मनिश्चय का सिद्धांत, गोपनीयता का सिद्धांत	**इकाई 2** : समाज कार्य की प्राथमिक अवधारणायें और सामान्य सिद्धांत **(पृष्ठ 27–52)**
इकाई–3 समूह : परिभाषा, प्रकार, विशेषताएं, गतिकी या गतिशीलता और महत्व– समूह की परिभाषा, समूह के प्रकार, समूह की विशेषतायें, समूह गतिकी या गतिशीलता, समूह का महत्व; समाज कार्य की प्रविधि के रूप में सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य की अवधारणा– समाज कार्य की प्रविधि के रूप में सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य के उद्देश्य, समाज कार्य की प्रविधि के रूप में सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य की विशेषतायें	**इकाई 3** : समूह तथा समाज कार्य की प्रविधि के रूप में सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य **(पृष्ठ 53–76)**
इकाई–4 सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रम नियोजन और विकास– सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रम का अर्थ, प्रकृति एवं उद्देश्य, सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रम एक प्रक्रिया के रूप में, सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रम प्रक्रिया के तत्व एवं सिद्धांत, नियोजन का अर्थ, विकास का अर्थ, कार्यक्रम नियोजन तथा विकास में कार्यकर्ताओं की भूमिका, सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रम के माध्यम; नेतृत्व का अर्थ– नेतृत्व के प्रकार, समूह कार्य प्रक्रिया के माध्यम से नेतृत्व विकास	**इकाई 4** : सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य अभ्यास में कार्यक्रम नियोजन एवं विकास **(पृष्ठ 77–101)**

विषय–सूची

परिचय 1

इकाई 1 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य, व्यावसायिक समाज कार्य की प्रविधि के रूप में 3–25

1.0 परिचय

1.1 उद्देश्य

1.2 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की एक व्यावसायिक समाज कार्य की प्रविधि के रूप में आवश्यकतायें

1.2.1 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की व्यावसायिक समाज कार्य की एक प्रविधि के रूप में अवधारणा

1.2.2 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के व्यावसायिक समाज कार्य की एक प्रविधि के रूप में उद्देश्य

1.2.3 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के एक व्यावसायिक समाज कार्य की प्रविधि के रूप में क्षेत्र

1.3 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के अंग

1.3.1 सेवार्थी या व्यक्ति

1.3.2 समस्या

1.3.3 संस्था या स्थान

1.3.4 प्रक्रिया

1.3.5 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के अंगों के मध्य संबंध

1.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

1.5 सारांश

1.6 मुख्य शब्दावली

1.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

1.8 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 2 समाज कार्य की प्राथमिक अवधारणायें और सामान्य सिद्धांत 27–52

2.0 परिचय

2.1 उद्देश्य

2.2 समाज कार्य : सामाजिक स्थिति और भूमिका, अहम् और अनुकूलन

2.2.1 सामाजिक स्थिति का अर्थ

2.2.2 सामाजिक स्थिति की उत्पत्ति

2.2.3 सामाजिक स्थिति की अवधारणायें

2.2.4 सामाजिक भूमिका का अर्थ एवं परिभाषायें

2.2.5 सामाजिक भूमिका का वर्गीकरण

2.2.6 सामाजिक भूमिका की विशेषतायें

2.2.7 अहम् का अर्थ

2.2.8 अहम् की दृढ़ता

2.2.9 अहम् के कार्य

2.2.10 अनुकूलन का अर्थ

2.2.11 अनुकूलन के प्रकार

2.2.12 अनुकूलन की प्रक्रिया

2.3 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के अनुप्रयोग के रूप में समाज कार्य के सामान्य सिद्धांत

2.3.1 वैयक्तिकरण का सिद्धांत

2.3.2 भावनाओं के उद्देश्यपूर्ण प्रगटन का सिद्धांत

2.3.3 नियंत्रित संवेगात्मक संबंधों का सिद्धांत

2.3.4 स्वीकृति का सिद्धांत

2.3.5 अनिर्णायक मनोवृत्ति का सिद्धांत

2.3.6 आत्मनिश्चय का सिद्धांत

2.3.7 गोपनीयता का सिद्धांत

2.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
2.5 सारांश
2.6 मुख्य शब्दावली
2.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
2.8 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 3 समूह तथा समाज कार्य की प्रविधि के रूप में सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य 53–76

3.0 परिचय
3.1 उद्देश्य
3.2 समूह : परिभाषा, प्रकार, विशेषताएं, गतिकी या गतिशीलता और महत्व
  3.2.1 समूह की परिभाषा
  3.2.2 समूह के प्रकार
  3.2.3 समूह की विशेषतायें
  3.2.4 समूह गतिकी या गतिशीलता
  3.2.5 समूह का महत्व
3.3 समाज कार्य की प्रविधि के रूप में सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य की अवधारणा
  3.3.1 समाज कार्य की प्रविधि के रूप में सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य के उद्देश्य
  3.3.2 समाज कार्य की प्रविधि के रूप में सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य की विशेषतायें
3.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
3.5 सारांश
3.6 मुख्य शब्दावली
3.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
3.8 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 4 सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य अभ्यास में कार्यक्रम नियोजन एवं नेतृत्व 77–101

4.0 परिचय
4.1 उद्देश्य
4.2 सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रम नियोजन और विकास
  4.2.1 सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रम का अर्थ, प्रकृति एवं उद्देश्य
  4.2.2 सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रम एक प्रक्रिया के रूप में
  4.2.3 सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रम प्रक्रिया के तत्व एवं सिद्धांत
  4.2.4 नियोजन का अर्थ
  4.2.5 विकास का अर्थ
  4.2.6 कार्यक्रम नियोजन तथा विकास में कार्यकर्ताओं की भूमिका
  4.2.7 सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रम के माध्यम
4.3 नेतृत्व : अर्थ, प्रकार एवं विकास
  4.3.1 नेतृत्व का अर्थ
  4.3.2 नेतृत्व के प्रकार
  4.3.3 समूह कार्य प्रक्रिया के माध्यम से नेतृत्व विकास
4.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
4.5 सारांश
4.6 मुख्य शब्दावली
4.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
4.8 सहायक पाठ्य सामग्री

परिचय

टिप्पणी

प्रस्तुत पुस्तक 'सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य एवं समूह कार्य' का लेखन विश्वविद्यालय के एम.एस.डब्ल्यू. उत्तरार्द्ध के निर्धारित पाठ्यक्रम के अनुरूप किया गया है। मानव जीवन, जन्म से लेकर मृत्यु तक आशा व निराशा के झंझावातों से परिपूर्ण होता है। मानव के जीवन के हर एक आयाम में संघर्ष एवं सफलता–असफलता का महत्वपूर्ण योगदान रहता है। यदि मानव अपने जीवन से संबंधित विभिन्न प्रकार के संघर्षों से सामंजस्य स्थापित कर लेता है तो वह एक सुव्यवस्थित जीवन–यापन करता है। वहीं यदि मानव अपने जीवन में आये संघर्षों से सामंजस्य स्थापित नहीं कर पाता है तो वह अपने आप को समाज में असमायोजित महसूस करने लगता है। जिसकी परिणति उसके जीवन को अस्त–व्यस्त कर देती है। परिणामतः वह संघर्षों का सामना नहीं कर पाता है।

मानव जीवन में कुसमायोजन को सही दिशा प्रदान करने का कार्य, समाज कार्य के द्वारा विभिन्न प्रणालियों के माध्यम से किया जाता है। वास्तव में समाज कार्य मानव जीवन में असामंजस्य को सामंजस्य की स्थिति में लाने का प्रयास करता है। इस हेतु समाज कार्य, व्यक्तियों को ऐसे अवसर उपलब्ध कराता है जिससे कि व्यक्ति स्वयं इस योग्य हो जाता है कि वह अपने कुसमायोजन को अपनी योग्यताओं के आधार पर समाप्त करने का प्रयास करने लगता है। यही कार्य जो व्यक्ति के साथ समाज कार्य करता है वह सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य कहलाता है। इस प्रविधि में व्यक्ति को एक इकाई मानकर उसकी सहायता की जाती है।

प्रस्तुत पुस्तक में सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की व्यावसायिक प्रविधि के रूप में व्याख्या प्रस्तुत की गई है। प्रत्येक इकाई के आरंभ में संदर्भित विषय का परिचय व उद्देश्य स्पष्ट कर दिया गया है। इकाई के बीच–बीच में शिक्षार्थियों के स्व–मूल्यांकन के लिए 'अपनी प्रगति जांचिए' स्तंभ के तहत वैकल्पिक प्रश्न भी दिए गए हैं। अध्ययन की सुविधा के लिए संपूर्ण पाठ्यक्रम को चार इकाइयों में समायोजित किया गया है। इन इकाइयों का विवरण इस प्रकार है–

पहली इकाई में सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की एक व्यावसायिक प्रविधि के रूप में आवश्यकताओं, अवधारणाओं, उद्देश्यों तथा क्षेत्रों का विस्तृत वर्णन प्रस्तुत किया गया है। इसमें सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के अंगों जैसे–सेवार्थी, समस्या, संस्था तथा प्रक्रिया के बारे में प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है। इसमें सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के अंगों के मध्य संबंधों के बारे में भी विवरण प्रस्तुत किया गया है।

दूसरी इकाई में समाज कार्य की मूल अवधारणाओं के बारे में प्रकाश डाला गया है। जिसमें सामाजिक स्थिति क्या है? तथा इसकी भूमिका क्या होती है? के बारे में वर्णन किया गया है। वास्तव में सामाजिक स्थिति से आशय व्यक्ति द्वारा समाज में बनायी गयी या अर्जित की गयी स्थिति से है। इसी इकाई में अहम् एवं अनुकूलन के बारे में प्रकाश डाला गया है तथा समाज कार्य के सामान्य सिद्धांतों के बारे में वर्णन प्रस्तुत किया गया है जो सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के अनुप्रयोग के रूप में प्रयुक्त किये जा सकें।

टिप्पणी

तीसरी इकाई में समूह की परिभाषा, प्रकार और विशेषताओं तथा समूह गतिकी एवं समूह के महत्व के बारे में प्रकाश डाला गया है। इसी इकाई में समूह समाज कार्य, समाज कार्य की एक प्रविधि के रूप में की गई अवधारणा, उद्देश्यों और विशेषताओं का वर्णन प्रस्तुत किया गया है। वास्तव में व्यक्ति की आवश्यकतायें अनंत हैं जिनकी पूर्ति हेतु व्यक्ति हमेशा प्रयासरत रहता है। इन्हीं आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिये व्यक्ति समूह का सहारा लेता है।

अंत में चौथी इकाई में सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रम नियोजन तथा विकास की प्रक्रिया का वर्णन किया गया है जिसमें बताया गया है कि समूह समाज कार्य में कार्यक्रम नियोजन एवं विकास क्या होता है तथा इसका निर्माण कैसे किया जाता है? इसी इकाई में नेतृत्व का अर्थ, प्रकार तथा समूह समाज कार्य के द्वारा नेतृत्व का विकास आदि पर प्रकाश डाला गया है।

प्रस्तुत पुस्तक की रचना इस प्रकार की गई है जिससे कि पाठकों को समाज कार्य की मूलभूत अवधारणाओं के बारे में विस्तृत ज्ञान प्राप्त हो सके और वे अपने जीवन में इसका उपयोग कर सकें। हमें आशा ही नहीं बल्कि पूर्ण विश्वास है कि यह पुस्तक सभी अध्येताओं का ज्ञानवर्धन कर उनके मार्गदर्शन में सहायक सिद्ध होगी।

इकाई 1 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य, व्यावसायिक समाज कार्य की प्रविधि के रूप में

संरचना

1.0 परिचय
1.1 उद्देश्य
1.2 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की एक व्यावसायिक समाज कार्य की प्रविधि के रूप में आवश्यकतायें
  1.2.1 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की व्यावसायिक समाज कार्य की एक प्रविधि के रूप में अवधारणा
  1.2.2 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के व्यावसायिक समाज कार्य की एक प्रविधि के रूप में उद्देश्य
  1.2.3 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के एक व्यावसायिक समाज कार्य की प्रविधि के रूप में क्षेत्र
1.3 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के अंग
  1.3.1 सेवार्थी या व्यक्ति
  1.3.2 समस्या
  1.3.3 संस्था या स्थान
  1.3.4 प्रक्रिया
  1.3.5 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के अंगों के मध्य संबंध
1.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
1.5 सारांश
1.6 मुख्य शब्दावली
1.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
1.8 सहायक पाठ्य सामग्री

1.0 परिचय

समाज कार्य का व्यवसाय के रूप में प्रादुर्भाव बीसवीं शताब्दी में ही हुआ है। वास्तव में इसका उद्भव उन लोगों की प्रेरणा से हुआ जो लोग समाज सुधार के रूप में असहायों की सहायता किया करते थे। देखा जाय तो समाज कार्य का प्रारम्भिक स्वरूप दान एवं निर्धनों की सहायता से प्रेरित होकर व्यावसायिक होता गया। समाज कार्य करने वाले व्यक्तियों की प्रेरणा को ध्यान में रखते हुए कुछ सामाजिक विद्वानों ने इसको एक विषय का रूप प्रदान किया। धीरे–धीरे जब समाज कार्य विषय का विकास हुआ तब इसकी कई प्रविधियों का जन्म हुआ जो अलग–अलग सेवार्थियों के लिये अलग–अलग थी। सर्वप्रथम मैरी रिचमण्ड के प्रयास से सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य प्रविधि का विकास हुआ। इस प्रविधि को समाज कार्य की प्राथमिक प्रविधि के रूप में मान्यता मिली हुई है। वस्तुतः समाज कार्य की प्राथमिक प्रविधि होने के कारण ही यह प्रविधि अत्यधिक प्रयोग में लायी जाती है।

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के बारे में मैरी रिचमण्ड ने अपने प्रकाशित पेपर 'दि लॉन्ग व्यू' में लिखा है कि, 'सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की परिभाषा में कहा जा सकता है कि यह कला है जिसके द्वारा विभिन्न प्रकार के व्यक्तियों के साथ सहयोग करके विभिन्न प्रकार के कार्य किये जाते हैं, जिनसे व्यक्ति के कल्याण के साथ ही साथ समुदाय का भी कल्याण होता है।'

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य, समाज कार्य की प्राथमिक प्रणाली है, जिसके द्वारा किसी व्यक्ति की मनोसामाजिक समस्याओं को हल करने का प्रयास किया जाता है। यह प्रणाली में सेवार्थी की अन्तर्दृष्टि को प्रेरित करने वाली एक प्रक्रिया है, जो सेवार्थी के विभिन्न आयामों की जानकारी प्रदान करती है। इसके द्वारा सेवार्थी के वातावरण, जिसमें वह जीवन–यापन कर रहा है, में परिवर्तन लाने का प्रयास किया जाता है जिससे सेवार्थी की दृष्टि एव क्षमताओं का विकास हो सके और वह अपनी समस्याओं का समाधान स्वयं करने में सफल हो सके तथा परिस्थितियों के साथ उचित समायोजन कर सके।

प्रस्तुत इकाई में सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की व्यावसायिक प्रविधि के रूप में आवश्यकताओं, अवधारणाओं, उद्देश्यों तथा विभिन्न क्षेत्रों के बारे में अध्ययन किया गया है। साथ ही समाज कार्य के अंगों जैसे–सेवार्थी, समस्या, संस्था और प्रक्रिया तथा इन अंगों के मध्य संबंधों की व्याख्या की गई है।

1.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप–

- सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की व्यावसायिक समाज कार्य की एक प्रविधि के रूप में आवश्यकताओं को जान पाएंगे;
- सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की व्यावसायिक समाज कार्य की एक प्रविधि के रूप में अवधारणाओं के बारे में ज्ञान प्राप्त कर पाएंगे;
- सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के व्यावसायिक समाज कार्य की एक प्रविधि के रूप में उद्देश्यों के बारे में जानकारी प्राप्त कर पाएंगे;
- सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के अंगों जैसे, सेवार्थी, समस्या, संस्था तथा प्रक्रिया के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त कर पाएंगे;
- सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के अंगों के मध्य संबंध स्थापित कर पाएंगे।

1.2 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की एक व्यावसायिक समाज कार्य की प्रविधि के रूप में आवश्यकतायें

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का प्रयोग व्यक्ति की समस्याओं के समाधान हेतु किया जाता है। व्यक्ति जब सामाजिक जीवन में रहते हुए अपने उत्तरदायित्वों का निर्वाह करता है तो वह कभी–कभी समस्याग्रस्त हो जाता है। इस समस्या से निजात पाने के लिए वह लोगों से अन्तःक्रिया करता है। अंतःक्रिया में वह अपने द्वारा अनुभव की गई समस्याओं को दूसरे व्यक्ति को बताता है तथा उससे समाधान प्राप्त करने का

टिप्पणी

प्रयास करता है। जब व्यक्ति सामाजिक अन्तःक्रिया करता है तो उसके फलस्वरूप दो प्रकार की शक्तियों का प्रादुर्भाव होता है। पहली शक्ति संगठनात्मक होती है तथा दूसरी शक्ति विघटनात्मक होती है। इन दोनों शक्तियों का प्रभाव व्यक्ति पर पड़ता है। जब तक व्यक्ति पर संगठनात्मक शक्तियों का प्रभुत्व व्यक्ति पर रहता है तब तक व्यक्ति सामान्य रूप से अपने कार्यों एवं उत्तरदायित्वों का निर्वहन करता रहता है। लेकिन जब कभी ऐसी परिस्थिति उत्पन्न हो जाती है जिसमें संगठनात्मक शक्तियां कमजोर हो जाती हैं तब ऐसी परिस्थिति में यही संगठनात्मक शक्तियां व्यक्ति को सामान्य जीवन–यापन करने में बाधा उत्पन्न करने लगती हैं। ऐसी परिस्थिति में व्यक्ति को बाहर से सहायता लेने की आवश्यकता पड़ती है। ऐसी परिस्थिति में सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की भूमिका शुरू होती है, क्योंकि सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य व्यक्ति की सहायता वैयक्तिकएवं अंतर्वैयक्तिक समस्याओं को हल करने में करता है।

व्यक्ति जब जन्म लेता है तब वह असहाय एवं निर्बल प्राणी होता है। उसमें आशा व विश्वास का संचार वैयक्तिक सहायता द्वारा ही किया जा सकता है। व्यक्ति का जब तक सामान्य रूप से विकास नहीं हो सकता तब तक वह अपनी क्षमताओ एवं शक्तियों को रचनात्मक कार्यों में नहीं लगा सकता। अतः यदि व्यक्ति का विकास सामान्य रूप से हो तब वह अपनी शक्तियों एवं क्षमताओं का प्रयोग रचनात्मक कार्यों में कर सकता है और यह तभी सम्भव हो सकता है जब व्यक्ति को उसकी आवश्यकता के अनुरूप सहायता प्राप्त होती रहे, क्योंकि जीवन के प्रत्येक स्तरों पर उसे समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

वैयक्तिक सेवा कार्य में जब हम मनोवैज्ञानिक रूप से अवलोकन करते हैं तो हमें ज्ञात होता है कि व्यक्ति के इदं, अहम् तथा पराहम् में संतुलन बनाये रखने के लिए व्यक्ति को मनोवैज्ञानिक आलंबन की आवश्यकता होती है। जब संगठनात्मक एवं विघटनात्मक शक्तियों में सामंजस्य नहीं स्थापित हो पाता है तब अहम् कमजोर हो जाता है, ऐसी परिस्थिति में व्यक्ति सामान्य कार्य नहीं कर पाता है। तब व्यक्ति को सार्वजनिक सहायता की आवश्यकता होती है।

स्पष्ट है कि सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य को समाज कार्य व्यावसायिक सेवा की एक प्रणाली के रूप में दोनों शक्तियों यथा संगठनात्मक एवं विघटनात्मक के मध्य समायोजनात्मक संबंध होने चाहिए अन्यथा व्यक्ति में असमायोजन की स्थिति उत्पन्न हो जायेगी और व्यक्ति कोई भी रचनात्मक कार्य नहीं कर पायेगा। इन्हीं आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए व्यक्ति को सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के द्वारा सहायता प्रदान की जाती है। उपरोक्त तथ्यों के आलोक में हम कह सकते हैं कि सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य को समाज कार्य व्यावसायिक सेवा की एक प्रणाली के रूप में संगठनात्मक एवं मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं पूर्ति हेतु सहायतापरक प्रणाली के रूप में मान्यता प्राप्त है। इन्हीं आवश्यकताओं को पूर्ण करने हेतु हम सामाजिक वैयक्तिक प्रणाली का प्रयोग करते हैं जिससे व्यक्ति के अन्दर अन्तर्दृष्टि का विकास हो सके और वह समाज में अपना जीवन–यापन आसानी से कर सके।

टिप्पणी

1.2.1 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की व्यावसायिक समाज कार्य की एक प्रविधि के रूप में अवधारणा

व्यक्ति जब जन्म लेता है और समाज में अपना जीवन–यापन करता है तब वह सामाजिक प्राणी होता है। व्यक्ति समाज में रहते हुए रचनात्मक कार्यों को करता है। इसी समाज से व्यक्ति को मनोसामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। व्यक्ति मनोसामाजिक रूप से मनोवैज्ञानिक प्राणी है। देखा जाय तो मानव के सामाजिक जीवन का इतिहास ही मानव का इतिहास है। लेकिन एक तरफ जहां पर व्यक्ति के सामाजिक जीवन ने व्यक्ति को अस्तित्व प्रदान कर सामाजिक गुणों को विकसित किया वहीं पर दूसरी तरफ व्यक्ति के जीवन में दरिद्रता, निर्धनता, बेरोजगारी, गरीबी, रोग तथा पारिवारिक एवं व्यक्तिगत दोनों ही प्रकार की समस्याओं को जन्म दिया। फलस्वरूप इन समस्याओं से निपटने के लिए समाज को अनेक सुरक्षात्मक कदम उठाने पड़े। अतः सुरक्षात्मक कदम के रूप में समाज कार्य भी एक प्रणाली के रूप में कार्य करता है जिसके द्वारा लोगों की सहायता तथा भावात्मक अनुकूलन संबंधी समस्याओं के समाधान में प्रयोग की जाती है। सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य भी समाज कार्य का एक व्यावसायिक रूप है जिसकी अवधारणा स्पष्ट करना आवश्यक एवं उचित प्रतीत होता है।

जब हम सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की अवधारणा की बात करते हैं तो यहां इससे संबंधित विभिन्न विद्वानों द्वारा प्रदान की गई परिभाषाओं का अवलोकन आवश्यक प्रतीत होता है जिससे हम सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की अवधारणा को आसानी से समझ सकें। इसी परिप्रेक्ष्य में हम सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य से संबंधित कुछ परिभाषायें जो विभिन्न विद्वानों द्वारा प्रदान की गई हैं, को अग्रलिखित रूप में प्रस्तुत कर रहे हैं–

रिचमण्ड, मैरी (1915) के अनुसार, ''सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य विभिन्न व्यक्तियों के लिए उनके साथ मिलकर उनके सहयोग से विभिन्न प्रकार के कार्य करने की एक कला है जिससे एक ही साथ स्वयं अपनी एवं समाज की उन्नति की जाती है।''

इस परिभाषा में अग्रलिखित तत्वों का समावेश है–

- सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य एक कला है।
- सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के द्वारा व्यक्ति की समस्याओं का समाधान किया जाता है।
- चूंकि समस्याओ का स्वरूप भिन्न होता है। अतः समस्याओं में भिन्नता के कारण भिन्न–भिन्न कार्य सम्पादित किये जाते हैं।
- सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में सेवार्थी का सहयोग चिकित्सा प्रक्रिया में आवश्यक होता है।

टैफ्ट (1920) के अनुसार, ''सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य समायोजन रहित व्यक्ति की सामाजिक चिकित्सा है जिसमें इस बात का प्रयास किया जाता है कि उसके व्यक्तित्व, व्यवहार एवं सामाजिक संबंधों को समझा जाये और उसकी सहायता की जाये कि वह एक उच्चतर सामाजिक एवं वैयक्तिकसमायोजन प्राप्त कर सके।''

टिप्पणी

टैफ्ट की इस परिभाषा में अग्रलिखित तत्व दृष्टिगोचर होते हैं–

- सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य एक समायोजन रहित व्यक्ति की सामाजिक चिकित्सा है।
- सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य व्यक्ति को कुसमायोजन से समायोजन की तरफ ले जाने वाली एक प्रक्रिया है।
- सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के द्वारा सर्वप्रथम कुसमायोजित व्यक्ति के व्यक्तित्व व्यवहार को एवं सामाजिक संबंधों को समझा जाता है और उसकी सहायता हेतु रूप का निर्धारण किया जाता है। अतः स्पष्टतः कहा जा सकता है कि व्यक्ति की समस्यायें समान होने पर भी उनका कारण तथा उनकी व्यक्ति में प्रतिक्रिया भिन्न–भिन्न होती है।

डे खीनिज (1939) के अनुसार, ''वे प्रतिक्रियायें जो व्यक्तियों की सामाजिक संस्थाओं के प्रतिनिधियों द्वारा निश्चित नीतियों के अनुसार और वैयक्तिक आवश्यकताओं को सामने रखकर सेवा प्रदान करने, आर्थिक सहायता देने या वैयक्तिक परामर्श देने से संबद्ध हैं, सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के अन्तर्गत सम्मिलित की जाती हैं।''

डे खीनिज की परिभाषा में निम्नलिखित तत्व सम्मिलित हैं–

- सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य द्वारा व्यक्ति को वैयक्तिक परामर्श प्रदान किया जाता है।
- सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में सहायता प्रदान करने का कार्य किसी सामाजिक संस्था के कर्मचारी द्वारा किया जाता है।
- सामाजिक सेवा कार्य में सहायता प्रदान करने हेतु कुछ निश्चित नियम व शर्तें एवं नीतियां होती हैं जिसका सेवा प्रदान करने वाला कर्मचारी अनुपालन करता है।

स्वीथन, वीवर्स (1949) के अनुसार, ''सामाजिक वैयक्तिक कार्य एक कला है जिसमें मानवीय संबंधों के विज्ञान के ज्ञान और संबंधों में निपुणता का उपयोग इस दृष्टि से किया जाता है कि व्यक्ति में उसकी योग्यताओं और समुदाय में साधनों को गतिमान किया जाये जिससे सेवार्थी और उसके पर्यावरण के कुछ या समस्त भागों के बीच उच्चतर समायोजन स्थापित हो सके।''

स्वीथन, वीवर्स द्वारा दी गई इस परिभाषा में निम्नलिखित तत्व परिलक्षित होते हैं–

- सामाजिक वैयक्तिक कार्य एक कला है, और इस कला का प्रयोग व्यक्ति के असमायोजित व्यवहार को दूर करने में किया जाता है।
- सामाजिक वैयक्तिक कार्य एक कला है। इसको व्यवहार में प्रयोग किये जाने के लिये विशेष ज्ञान एवं निपुणताओं की आवश्यकता होती है।
- सामाजिक वैयक्तिक कार्य एक कला है जो मानव संबंधों के ज्ञान पर आधारित है।
- सामाजिक वैयक्तिक कार्य में मानवीय व्यवहार और संबंधों में ज्ञान तथा निपुणता का प्रयोग बहुत ही सावधानी से करना चाहिए।

टिप्पणी

- सामाजिक वैयक्तिक कार्य एक कला है जिसका प्रयोग सेवार्थी की शक्तियों को गतिमान करने में किया जाता है। सेवार्थी के अहम् को शक्तिशाली बनाया जाता है तथा समायोजन प्राप्त किया जाता है।
- समायोजन के उद्देश्य को प्राप्त करने के लिये समाज के साधनों को गतिमान किया जाता है।

पर्लमैन (1957) के अनुसार, ''सामाजिक वैयक्तिक कार्य एक प्रक्रिया है जिसका प्रयोग कुछ मानव कल्याण संस्थाएं करती हैं ताकि व्यक्तियों की सहायता की जाए कि वे सामाजिक कार्यात्मकता की समस्याओं का सामना उच्चतर प्रकार से कर सकें।''

पर्लमैन द्वारा प्रस्तुत इस परिभाषा के तत्व अग्रलिखित हैं–

- सामाजिक वैयक्तिक कार्य एक प्रक्रिया है।
- इस प्रक्रिया का प्रयोग कुछ मानव कल्याण संस्थाएं करती हैं जिससे व्यक्तियों की सहायता की जा सके।
- इसमें सामाजिक कार्यात्मकता को बढ़ाने का कार्य किया जाता है जिससे सेवार्थी को समायोजित किया जा सके।
- इसमें कुसमायोजित व्यक्ति को समायोजन प्रदान किया जाता है।

वाटसन (1922) के अनुसार, ''सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य असंतुलित व्यक्तित्व को इस प्रकार संतुलित बनाने और उसका पुनर्निर्माण करने की एक कला है कि व्यक्ति अपने पर्यावरण से समायोजन प्राप्त कर सके।''

वाटसन द्वारा प्रतिपादित इस परिभाषा के निम्नलिखित तत्व स्पष्टतः दिखाई देते हैं–

- सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य असंतुलित व्यक्तित्व को संतुलित बनाने का कार्य करता है।
- यह व्यक्ति में निहित शक्तियों का पुनर्निर्माण करने की एक कला है।
- इसमें सेवार्थी को उसके पर्यावरण से संतुलन बैठाने का प्रयास किया जाता है।
- असंतुलन ही सभी समस्याओं की जड़ है, अतः इसके माध्यम से पर्यावरणीय समायोजन कर व्यक्ति को संतुलन की ओर ले जाने का प्रयास किया जाता है।

इस प्रकार हम उपरोक्त परिभाषाओं के आलोक में कह सकते हैं कि सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य एक सहायतामूलक कार्य है जो ऐसे व्यक्ति को प्रदान की जाती है जो मनोसामाजिक समस्याओं से ग्रसित है और जिसके पर्यावरण में परिवर्तन की आवश्यकता है, जिससे कि उसकी क्षमताओं का विकास हो सके और वह समाज में बेहतर समायोजन स्थापित कर सके।

1.2.2 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के व्यावसायिक समाज कार्य की एक प्रविधि के रूप में उद्देश्य

उद्देश्य कुतुबनुमा यंत्र (जिससे दिशा का ज्ञान होता है) के समान होते हैं जो व्यक्ति को लक्ष्य प्राप्त करने के लिये हमेशा प्रेरित करते रहते हैं। सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के उद्देश्य इसकी प्रक्रिया को देखते हुए अग्रलिखित हैं–

सेवार्थी की मनोवृत्तियों में परिवर्तन लाना– सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के द्वारा सेवार्थी की मनोवृत्तियों को परिवर्तित किया जाता है। यदि सेवार्थी किसी परिस्थिति के प्रतिकूल व्यवहार करता है तो उस परिस्थिति के सकारात्मक परिणाम को सेवार्थी के सामने प्रस्तुत किया जाता है तथा उस परिस्थिति के नकारात्मक परिणामों को सकारात्मक परिणामों में कैसे बदलें, इसके बारे में बताया जाता है। इस प्रकार नकारात्मक परिस्थिति के बारे में सकारात्मक विचार बनाकर सेवार्थी की मनोवृत्ति में परिवर्तन लाया जाता है।

सेवार्थी में समायोजन लाने की क्षमता का विकास करना– सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में सेवार्थी के जीवन से संबंधित असमायोजन से समायोजन कैसे प्राप्त किया जाए, के बारे में विस्तृत ज्ञान प्रदान किया जाता है। सेवार्थी की समायोजन क्षमता का विकास किया जाता है।

सेवार्थी में आत्मनिर्णयात्मक मनोवृत्ति का विकास करना– सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में सेवार्थी के अन्दर आत्मविश्वास को जगाया जाता है। सेवार्थी परिस्थितिवश जो आत्मविश्वास को खो चुका होता है, उसको वापस लाने का कार्य किया जाता है। सेवार्थी को अपने निर्णय लेने की मनोवृत्ति का विकास किया जाता है।

सेवार्थी को स्वयं सहायता करने के लिए प्रेरित करना– सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का उद्देश्य सेवार्थी को इस योग्य बनाना कि वह अपनी सहायता स्वयं कर सके। सेवार्थी को इस कार्य के लिये ऐसे अवसर उपलब्ध कराये जाते हैं जिससे उसके आत्मविश्वास में वृद्धि हो सके। सेवार्थी जब आत्मविश्वास से ओत–प्रोत होता है तो वह अपनी समस्या का समाधान स्वयं करने लगता है।

नेतृत्व की क्षमता एवं योग्यता का विकास करना– सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का उद्देश्य सेवार्थी के नेतृत्व क्षमता एवं योग्यता का विकास करना है। इसके अन्तर्गत सेवार्थी को नेतृत्व करने के अवसर उपलब्ध कराये जाते हैं जिसमें वह अपनी कार्यकुशलता का प्रयोग करते हुए नेतृत्व क्षमता को विकसित कर सके।

सेवार्थी का वैयक्तिक अध्ययन करना– सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का उद्देश्य सेवार्थी का वैयक्तिक अध्ययन करना है। यदि सेवार्थी का वैयक्तिक अध्ययन नहीं किया जायेगा तो समस्याओं के बारे में जानकारी नहीं प्राप्त हो पायेगी। अतः सेवार्थी का वैयक्तिक अध्ययन करना सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का उद्देश्य है।

सेवार्थी की समस्याओं का सामाजिक निदान करना तथा उपचार करना– सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का उद्देश्य सेवार्थी की समस्याओं के बारे में पता लगाना है। समस्याओं के कारणों का पता लगाना ही निदान कहलाता है। वास्तव में यदि समस्याओं का निराकरण निदान पर ही आधारित होता है। अतः सेवार्थी की समस्याओं का सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में पता लगाकर उसका उपचार किया जाता है।

विभिन्न समाज विज्ञानों का सहयोग लेते हुए सेवार्थी में चेतना का प्रसार करना–व्यक्ति का समायोजन उसकी चेतना की अवस्था पर आधारित होता है। जिस व्यक्ति में चेतनता का स्तर उच्चतर होगा वह व्यक्ति उतना ही समायोजित होगा। सेवार्थी की चेतना के स्तर को विकसित करने के लिए सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य विभिन्न समाज विज्ञानों जैसे, मनोविज्ञान आदि का प्रयोग करता है तथा सेवार्थी में चेतना का प्रसार करता है।

पर्यावरण में परिवर्तन लाने एवं सेवार्थी की सोच में परिवर्तन लाने का प्रयास करना– सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का उद्देश्य सेवार्थी की इस प्रकार सहायता करना है जिसके द्वारा वह स्वयं अपनी समस्याओं का निराकरण कर सके। व्यक्ति जिस समाज में रहता है वही समाज उसके कुसमायोजन का कारण बनता है। जब कभी ऐसी परिस्थिति होती है तब सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में सेवार्थी को सलाह दी जाती है कि वह कुछ दिनों के लिए अपने पर्यावरण में परिर्वन कर ले तथा दूसरे पर्यावरण में चला जाये जिससे वह उन सामाजिक समस्याओं से निजात पा लेता है। इस प्रक्रिया में सेवार्थी की सोच में भी परिवर्तन लाने का प्रयास किया जाता है।

सेवार्थी की मनोसामाजिक समस्याओं का अध्ययन करना तथा समाधान करना–कोई भी व्यक्ति समाज में जीवन–यापन करते समय समाज की विभिन्न रचनाओं एवं क्रिया–कलापों में भाग लेता है तथा समाज के द्वारा बनाये गये नियम कानूनों का अनुपालन करते हुए अपना जीवन व्यतीत करता है। जब कभी व्यक्ति इन आचार संहिताओं से हटकर कार्य करता है तब वह समस्याग्रस्त हो जाता है। इन्हीं समस्याओं में मनोसामाजिक समस्यायें भी अन्तर्निहित होती हैं। इन मनोसामाजिक समस्याओं को दूर करने के लिये सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का प्रयोग किया जाता है।

सामाजिक शक्तियां क्रियाशील होकर व्यक्ति में व्यवहार तथा दृष्टिकोण में अपेक्षित परिवर्तन लाकर उसे आत्मविकास का अवसर प्रदान करती हैं– सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में ऐसा प्रयास किया जाता है जिससे सामाजिक शक्तियां क्रियाशील हो सकें। चूंकि सामाजिक शक्तियां संगठनात्मक एवं मनोसामाजिक रूप से व्यक्ति को प्रभावित करती हैं। यदि इन्हीं शक्तियों का प्रयोग व्यक्ति के जीवन में समायोजन लाने हेतु किया जाय तो व्यक्ति का जीवन सरल व सुखी हो सकता है। यदि किसी व्यक्ति में इन शक्तियों के प्रति सकारात्मक विचार होते हैं तो वह व्यक्ति रचनात्मक कार्य में अपनी ऊर्जा का प्रयोग कर अपने अन्दर आत्मविकास कर सकता है तथा कुसमायोजन की स्थिति ही नहीं उत्पन्न होने देता है। इसके लिये आवश्यक है कि व्यक्ति के दृष्टिकोण में सकारात्मक परिवर्तन हों। यदि व्यक्ति सकारात्मक विचार रखता है तो उसका आत्मविश्वास नहीं टूटता है।

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य से संबंध रखने वाली अधिकांश समस्यायें अन्तर्वैयक्तिक होती हैं– सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में अक्सर देखा जाता है कि जो सेवार्थी अपनी समस्याओं को लेकर सामाजिक कार्यकर्ता के पास आता है, वे समस्यायें उससे जुड़ी हुई होती हैं। यही समस्यायें सामाजिक एवं मनोसामाजिक रूप में होती हैं। व्यक्ति की समस्यायें उसके पर्यावरण, परिवार एवं कार्यस्थल से जुड़ी होती हैं जो उसके जीवन में उथल–पुथल मचाये रहती हैं। व्यक्ति से संबंधित समस्याओं को अन्तर्वैयक्तिक समस्या कहा जाता है। अन्तर्वैयक्तिक समस्या का समाधान व्यक्ति को स्वयं खोजना पड़ता है, सामाजिक सेवा कार्यकर्ता केवल उन समस्याओं के कारणों का पता लगाता है तथा सेवार्थी को इन समस्याओं से निपटने के लिये सेवार्थी में अन्तर्दृष्टि का विकास करता है।

अपनी समस्याओं को हल करने के लिये सेवार्थी की भूमिका उत्तरदायित्वपूर्ण होती है– सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के द्वारा सेवार्थी को ऐसे अवसर प्रदान किये जाते हैं जिसके द्वारा सेवार्थी स्वयं अपनी समस्याओं का समाधान

टिप्पणी

करने के योग्य हो सके। वास्तव में सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में सेवार्थी की भूमिका उत्तरदायित्वपूर्ण होती है।

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की प्रक्रिया के दौरान कार्यकर्ता तथा सेवार्थी के बीच समस्याओं के समाधान एवं आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए चेतन तथा नियंत्रित संबंध होता है– सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में सेवार्थी एवं सामाजिक सेवा प्रदाता के मध्य चेतनात्मक संबंध होता है क्योंकि जब तक व्यक्ति चेतन अवस्था में नहीं रहेगा तब तक व्यक्ति समस्याओं को नहीं समझ पायेगा और जिसका परिणाम समस्या वैसी की वैसी ही बनी रहेगी

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के उद्देश्यों के बारे में **होलिस** ने कहा है, ''सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य मानव व्यक्तित्व, सामाजिक मूल्यों एवं उद्देश्यों के प्रति कुछ मौलिक मान्यताओं पर आधारित है। सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की मान्यता यह है कि सामाजिक संरचना का उद्देश्य व्यक्ति को इच्छित जीवन स्तर जीने के बनाना है। व्यक्ति राज्य के लिए नहीं बल्कि राज्य व्यक्ति के कल्याण के लिए विनिर्मित हुआ है।''

अतः उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का प्रमुख उद्देश्य व्यक्तियों के जीवन में उत्पन्न कुसमायोजन को विशिष्ट ज्ञान एवं प्रविधि के माध्यम से समायोजन की स्थिति प्रदान कर उनको जीवन जीने की कला को सुदृढ़ करना। अतएव हम कह सकते हैं कि सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का उद्देश्य एक ऐसे पर्यावरण का निर्माण करना है जिसमें व्यक्ति की असमायोजन की स्थिति को समायोजित किया जा सके तथा व्यक्ति अपना जीवन निर्बाध रूप से जी सके।

1.2.3 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के एक व्यावसायिक समाज कार्य की प्रविधि के रूप में क्षेत्र

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में व्यक्ति सेवार्थी की सहायता उन सभी स्थानों एवं दशाओं में करता है जहां पर व्यक्ति वैयक्तिक एवं अन्तर्वैयक्तिक समस्याओं से ग्रसित हो जाता है। अतः सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का प्रयोग हर एक क्षेत्र में किया जा सकता है जिसमें व्यक्तियों को समायोजन की समस्याओं का सामना करना पड़ रहा हो।

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के क्षेत्र अग्रलिखित हैं–

परिवार कल्याण–परिवार व्यक्ति के जीवन–यापन हेतु मूलभत इकाई है। सामाजिक परिवर्तन की इस धारा ने परिवार को भी अपनी चपेट में ले लिया है और इसके अनेक कार्य विभिन्न संस्थायें करने लगी हैं। अधिकांशतः परिवारों में पूर्व निर्धारित मूल्यों का वहन आज भी होता है लेकिन अब उनमें उतनी आस्था नहीं रह गयी है जिसके फलस्वरूप परिवार के सदस्यों के पारस्परिक सामंजस्य एवं कार्य पद्ध ति में बाधायें उत्पन्न हो जाती हैं। इस परिस्थिति में सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का प्रयोग परिवार के सदस्यों के मध्य समायोजन सम्बंधी समस्याओं के लिए किया जाता है। सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में सामाजिक कार्यकर्ता विभिन्न चिकित्सकीय प्रविधियों को अपनाकर सदस्यों की स्थिति एवं भूमिका को समझने एवं उसके अनुसार कार्य करने के लिए परिवार के सदस्यों को प्रेरित करता है। परिवार की समस्याओं

के समाधान के लिए समाज कार्य की अन्य प्रविधियों का भी प्रयोग बहुतायत होता है परन्तु सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य परिवार कल्याण के लिए सर्वथा उचित प्रविधि सिद्ध हुई है।

टिप्पणी

बाल अपराध–समाजशास्त्रियों ने अपने शोधों द्वारा सिद्ध किया है कि जन्म से कोई बालक या व्यक्ति अपराधी नहीं होता है। व्यक्ति के सामाजिक पर्यावरण के साथ सामंजस्य न होने के परिणामस्वरूप व्यक्ति के व्यवहारों में परिवर्तन आ जाता है और उसकी प्रवृत्ति अपराधी हो जाती है। अतः इस क्षेत्र में सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य प्रविधि का प्रयोग बाल अपराधियों के सुधार के लिए किया जाता है। बाल अपराधियों के साथ सामाजिक, वैयक्तिक, व्यावसायिक संबंध स्थापित करके सामाजिक कार्यकर्ता उसकी समस्या का वैज्ञानिक अध्ययन करता है और अपने अर्जित ज्ञान, निपुणता और अनुभव के आधार पर बाल अपराधियों के व्यवहारों में परिवर्तन लाने का प्रयास करता है।

बाल कल्याण–हमारे देश की जनसंख्या का अधिकांश भाग सोलह वर्ष से नीचे की आयु के बालकों का है। पारिवारिक क्रियाकलापों एवं आर्थिक दशाओं में परिवर्तन के परिणामस्वरूप बालकों में विकास की अनेक समस्यायें उत्पन्न हो जाती हैं। इन समस्याग्रस्त बालकों की समस्याओं के समाधान के लिए संस्थागत एवं असंस्थागत प्रकार की संस्थाएं कार्य कर रही हैं। उदाहरणार्थ–शिशु एवं बाल विद्यालय, अनाथ आश्रम, मातृ शिशु रक्षा केन्द्र, बाल पुस्तकालय, शिशु डे केयर केन्द्र, मूक बधिर विद्यालय, बाल विकलांग आश्रम, बाल चिकित्सालय, बाल परामर्श केन्द्र, बालअपराधी सुधारगृह तथा मानसिक मंदता से संबंधित विद्यालय। इन सभी विद्यालयों एवं केन्द्रों में बालकों और उनके पर्यावरण में समायोजन की आवश्यकता होती है। सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य द्वारा सामाजिक वैयक्तिक कार्यकर्ता इन समस्याओं का समाधान करने हेतु अपनी भूमिका का निर्वहन करता है।

युवा कल्याण–किसी भी देश की प्रगति उसके युवा वर्ग के हाथों में सुनिश्चित होती है। लेकिन वर्तमान समय की आपा–धापी भरे जीवन में युवकों के सामने रोजी–रोटी की चिंता उनके जीवन में अनेक समस्याओं को जन्म देती रही है। युवकों की अनेक समस्यायें ऐसी होती हैं जिनका समाधान परिवार में नहीं हो सकता है। अतः इन समस्याओं के निराकरण के लिए सरकार समय–समय पर कार्यक्रमों का निर्माण एवं उनका क्रियान्वयन करती रहती है जिससे युवकों का कल्याण किया जा सके। युवकों के कल्याण हेतु अनेक कार्यक्रमों का क्रियान्वयन सरकारी एवं गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा किया जाता है। इन संस्थाओं का प्रमुख उद्देश्य युवकों का कल्याण करना होता है। हमारे देश में युवक महिला ईसाई संघ, नवयुवक ईसाई सभा, भारत स्काउट एण्ड गाइड्स, भारत सेवक समाज, भारत युवक समाज, राष्ट्रीय सेवा योजना आदि ऐसी संस्थायें हैं जो युवा कल्याण हेतु समर्पित हैं। सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के अन्तर्गत सामाजिक वैयक्तिक कार्यकर्ता भी इन क्षेत्रों में अपनी सेवायें प्रदान करता है।

महिला कल्याण–हमारे देश की आधी आबादी महिलाओं की है। महिलाओं के कल्याण के लिए, स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद अनेक प्रयत्न किये गये। महिलाओं को विकास की मुख्यधारा में लाने के अनेक प्रयास तथा कार्यक्रमों का निर्माण एवं क्रियान्वयन किया गया। फिर भी महिलाओं की स्थिति में आशातीत सुधार नहीं हुआ।

महिलाओं हेतु विभिन्न कार्यक्रम जैसे, मातृत्व सेवायें, प्रसूति गृह गर्भिणी एवं प्रसूताओं या छोटे बच्चों वाली माताओं के लिए सलाह केन्द्र, परिवार कल्याण नियोजन आदि संस्थाओं द्वारा महिला कल्याण करने का प्रयत्न किया जाता है। महिला कल्याण में सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करता है। सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के द्वारा महिलाओं को परामर्श सेवा प्रदान की जाती है कि वे किस प्रकार से परिवार नियोजन को अपनाकर एक सुखी जीवन यापन कर सकती हैं।

श्रम कल्याण–वर्तमान समय यंत्रों का एवं औद्योगिक क्षेत्रों का है। किसी भी देश की उन्नति उसके द्वारा अपनाये गये वैज्ञानिक व तकनीकी यंत्रों के उचित प्रयोग पर निर्भर करती है। कल–कारखानों में जो श्रमिक कार्य करते हैं उनकी उचित देख–रेख भी आवश्यक होती है, क्योंकि श्रमिक यदि समस्या से ग्रसित हो जाएंगे तो वे पूर्ण रूप से अपना योगदान नहीं कर पाएंगे। इन्हीं समस्याओं के निराकरण के लिए सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य औद्योगिक संस्थानों में श्रमिकों के लिए कल्याण कार्यक्रमों के माध्यम से श्रमिकों की सहायता करता है जिसमें श्रमिकों को परामर्श एवं उनके परिवार को परामर्श प्रदान कर उनका कल्याण किया जाता है। इस प्रकार श्रम कल्याण के क्षेत्र में भी सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का प्रयोग औद्योगिक परामर्श के रूप में किया जाता है। श्रमिकों की अन्तरवैयक्तिक समस्याओं को सुलझाना उनकी उत्पादन शक्ति एवं उत्पादन क्षमता को बढ़ाने के लिये आवश्यक है।

मानसिक रोग चिकित्सा–मानसिक रोगियों की चिकित्सा में सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का प्रयोग किया जाता है। चिकित्सकीय समाज कार्य द्वारा मानसिक रोगियों की अधिक से अधिक चिकित्सकीय सुविधाओं को उपयोग करने में सहायता की जाती है। चिकित्सकीय अध्ययनों ने सिद्ध कर दिया है कि अनेक शारीरिक रोग मनोवैज्ञानिक एवं सांवेगिक असमायोजन के कारण उत्पन्न होते हैं। दूसरी तरफ शारीरिक रोग के फलस्वरूप भी अनेक समायोजन संबंधी समस्यायें उत्पन्न हो जाती हैं। सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के माध्यम से इन समस्याओं को हल करने का प्रयास किया जाता है। सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के द्वारा रोगी को वास्तविकता का ज्ञान कराया जाता है। औषधियों के साथ ही मानसिक रोगियों को सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के द्वारा मनोवैज्ञानिक परामर्श, संवेगात्मक आलंबन एवं अहम् संबंधी सहायता प्राप्त होती है जिसके द्वारा समस्या का समाधान सम्भव हो पाता है।

चिकित्सालयों में समाज कार्य–चिकित्सालयों में रोगियों की समायोजन संबंधी समस्याओं के समाधान में सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का प्रयोग किया जाता है। बहुधा देखा जाता है कि बहुत से शारीरिक रोग संवेगात्मक एवं मानसिक कारणों से उत्पन्न होते हैं। शारीरिक रोग के फलस्वरूप भी अनेक मानसिक एवं संवेगात्मक समस्यायें उत्पन्न हो जाती हैं। रोगियों को समायोजन बनाये रखने में कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है। जिसके कारण रोगियों को चिकित्सालय पद्धति में समायोजन और चिकित्सा के पश्चात् रोगियों के पुनर्वास की समस्या भी होती है। अतः इन समस्याओं के समाधान हेतु सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का प्रयोग किया जाता है।

अपनी प्रगति जांचिए

1. जब व्यक्ति सामाजिक अंतःक्रिया करता है तो उसके फलस्वरूप किन शक्तियों का प्रादुर्भाव होता है?
   (क) संगठनात्मक एवं विघटनात्मक (ख) आंतरिक एवं बाह्य
   (ग) शारीरिक एवं मानसिक (घ) वैयक्तिक एवं सामाजिक
2. सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का क्षेत्र कौन सा है?
   (क) परिवार कल्याण (ख) बाल अपराध
   (ग) श्रम कल्याण (घ) उपर्युक्त सभी

1.3 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के अंग

व्यक्ति अपनी मनोसामाजिक समस्याओं के समाधान के लिए सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की सहायता लेता है और वह अपनी समस्याओं को सुलझाने में समर्थ हो जाता है। चूंकि सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के द्वारा व्यक्ति के ऊपर पड़ने वाले पर्यावरण के दबाव को कम करके उसके व्यवहार एवं मनोवृत्ति में परिवर्तन लाने का प्रयास किया जाता है जो कि समस्या समाधान हेतु आवश्यक होता है। पर्लमैन ने सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के अंगों का वर्णन अपनी परिभाषा में किया है। अतः यहां पर पर्लमैन द्वारा दी गई परिभाषा का उल्लेख करना आवश्यक प्रतीत होता है।

पर्लमैन (1957) के अनुसार, ''सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य एक प्रक्रिया है जिसका उपयोग कुछ मानव कल्याण संस्थायें करती हैं ताकि व्यक्तियों की सहायता इस प्रकार की जाए कि वे सामाजिक कार्यात्मकता की समस्याओं का सामना उच्चतर विधि से कर सकें।''

इस परिभाषा में सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के चार प्रमुख अंग दिखाई देते हैं जो एक दूसरे से अन्तर्संबंधित हैं–

- सेवार्थी या व्यक्ति
- समस्या
- संस्था या स्थान
- प्रक्रिया

उपरोक्त चारों अंग एक दूसरे से अन्तर्संबंधित हैं। यहां आवश्यक है कि उपरोक्त चारों अंगों की विशेष व्याख्या प्रस्तुत की जाय जिससे सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के सभी अंगों को समझा जा सके। अतः उपरोक्त सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के चारों अंगों को निम्नलिखत रूप से व्याख्या प्रस्तुत की जा रही है–

1.3.1 सेवार्थी या व्यक्ति

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में व्यक्ति का प्रमुख स्थान है। इसमें व्यक्ति ही वह इकाई है जिसको मनोवैज्ञानिक सहायता प्रदान की जाती है। जब कभी व्यक्ति सांवेगिक या मनोवैज्ञानिक पहायता हेतु किसी संस्था में जाता है तो चाहे वह व्यक्ति

टिप्पणी

महिला, पुरूष या बालक हो उसे सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में 'सेवार्थी' के नाम से पुकारा जाता है। यहां पर व्यक्ति किसी भी रूप में अन्य व्यक्तियों के समान ही होता है। लेकिन उसे सेवार्थी के रूप में ही सहायता प्रदान की जाती है। सेवार्थी की भाषा एवं संस्कृति अन्य सेवार्थियों के समान ही होती है या कुछ भिन्न हो सकती है। ये भिन्नतायें उस समय दिखाई देती हैं जब सामाजिक सेवा कार्यकर्ता उसे एक व्यक्ति के रूप में देखने का प्रयास करता है। सेवार्थी का व्यक्तित्व भिन्न होता है, उसके सांवेगिक तथा मानसिक गुण भिन्न होते हैं। लेकिन हर परिस्थिति में सेवार्थी पूर्ण अन्तःक्रिया (विचारों का आदान–प्रदान) करता है। सेवार्थी की समस्या चाहे मनोवैज्ञानिक हो, सामाजिक हो या सांवेगिक हो वह प्रत्येक दशा में शारीरिक मनोवैज्ञानिक तथा सामाजिक विशेषताओं के साथ प्रतिक्रिया करता है। सेवार्थी की शारीरिक, भौतिक, सामाजिक, अनुभव प्रत्यक्षीकरण, आकांक्षायें, इच्छायें इत्यादि एक साथ मिलकर सेवार्थी के व्यक्तित्व को प्रभावित करती हैं। यही शारीरिक, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, विगत एवं वर्तमान तथा भविष्य का चक्र सेवार्थी के साथ प्रत्येक परिस्थिति में रहता है और इनके प्रभाव से सेवार्थी अलग नहीं हो सकता है।

वैयक्तिक सामाजिक कार्यकर्ता, सेवार्थी के संबंध में जो भी जानकारी चाहता है उन सभी का संबंध सेवार्थी की समस्या से अधिक होता है। वैयक्तिक सामाजिक कार्यकर्ता उन सभी तथ्यों की खोज करता है जिनसे सेवार्थी की समस्या समझने, उसके निदान करने तथा समाधान करने में सहायता मिलती है। सेवार्थी की समस्या ही निश्चित करती है कि वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ता को किस प्रकार के ज्ञान की आवश्यकता है तथा किस प्रकार की सहायता से सेवार्थी पुनः अनुकूलन प्राप्त कर सकेगा।

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में सेवार्थी का प्रथम उद्देश्य सेवार्थी की समस्याओं के कारणों का पता लगाकर उसका निदान प्रस्तुत करना होता है। सेवार्थी जब सामाजिक कार्यकर्ता के सम्पर्क करता है तो वह किसी भी समस्या से ग्रसित हो सकता है जिसके बारे में सामाजिक कार्यकर्ता को गहन ज्ञान के प्रयोग के आधार पर उसकी समस्याओं का समाधान करना होता है। यह कार्य सामाजिक कार्यकर्ता सेवार्थी के व्यवहारों के आधार पर करता है। सेवार्थी का व्यवहार उसकी समस्याओं के दर्पण होते हैं, क्योंकि कोई भी व्यक्ति व्यवहार के द्वारा ही सामाजिक एवं असामाजिक सिद्ध होता है। अतः सेवार्थी की समस्याओं को समझने के लिये सामाजिक कार्यकर्ता सर्वप्रथम व्यवहार का अध्ययन करता है। सेवार्थी जो व्यवहार कर रहा है उसके व्यवहार उसके हित करने में प्रभावकारी हैं या नहीं यह बात सेवार्थी की व्यक्तित्व संरचना की कार्यात्मकता पर निश्चित होता है। किसी भी व्यक्ति में प्रायः तीन शक्तियां पाई जाती हैं। प्रथम जीवन शक्ति होती है जिससे व्यक्ति या सेवार्थी शक्ति प्राप्त करता है तथा संतुष्टि की प्रयास करता है। दूसरी शक्ति अवरोध व्यवस्था है जो ऐच्छिक एवं स्वतः उत्पन्न हो जाती है। इसके द्वारा सेवार्थी या व्यक्ति की इच्दाओं पर नियंत्रण किया जाता है तथा सेवार्थी की इच्छायें एवं संतुष्टि के तरीकों में परिवर्तन किये जाते हैं। तीसरी शक्ति संगठित व नियंत्रण कार्य है जिसके द्वारा व्यक्ति के मन में हो रही उथल–पुथल को प्रभावित करते हैं। व्यक्ति की आवश्यकतायें तथा उसकी क्षमता में संतुलित समझौता होना आवश्यक है अन्यथा समस्या उत्पन्न हो जायेगी। अतः इन शक्तियों के द्वारा वैयक्तिक व सामाजिक संतुलन बनाये रखा जा सकता है।

टिप्पणी

इस प्रकार सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में व्यक्ति या सेवार्थी एक ऐसी धुरी है जिसके इर्द–गिर्द सभी कार्य प्रारम्भ एवं समाप्त होते हैं।

1.3.2 समस्या

संस्था में सेवार्थी द्वारा मानव समाज की कोई ऐसी समस्या नहीं है जो न लायी जाती हो। मानव समाज की समस्याओं का संवाहक सेवार्थी ही होता है। यह समस्या कोई भी हो सकती है, जैसे, सामाजिक, आर्थिक, मनोवैज्ञानिक एवं मनोसामाजिक इत्यादि। इन सभी समस्याओं को जानना व जानकर उनका समाधान करना अत्यंत ही कठिन कार्य है। इसी कारण इन समस्याओं के समाधान के लिए भिन्न–भिन्न प्रकार की संस्थायें खुल गयी हैं जो समस्याओं के प्रकारों के आधार पर सेवार्थी की सहायता करती हैं।

यहां पर समस्या के बारे में जानना आवश्यक है कि वास्तव में समस्या की अवधारणा क्या है? समस्या के बारे में पर्लमैन ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि, 'समस्या कुछ आवश्यकताओं, बाधाओं या नैराश्य के एकीकरण या समायोजन आदि के एक या संयुक्त होकर व्यक्ति की जीवन–स्थिति पर या समाधान करने के प्रयत्नों की उपयुक्तता पर धमकी देता है या आक्रमण कर चुका होता है, से उत्पन्न होती है।

समस्या को परिभाषित करते हुए जेम्स एण्ड अदर्स ने लिखा है कि, 'जब एक व्यक्ति उद्देश्य पर पूर्व सीखी आदतों, सम्प्रेरणाओं तथा नियमों से नहीं पहुंच पाता है, तब समस्या की स्थिति उत्पन्न होती है।'

डनकार ने समस्या के बारे में लिखा है कि, 'समस्या उस समय उत्पन्न होती है जब जीवित प्राणी एक उद्देश्य तो रखता है परन्तु इस उद्देश्य को कैसे प्राप्त किया जाय, नहीं जानता है।'

अतः उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर हम कह सकते हैं कि समस्या का स्वरूप कैसा भी हो, यह व्यक्ति के सामाजिक समायोजन को प्रभावित करती है। व्यक्ति की शारीरिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, मनोवैज्ञानिक समस्याओं के कारण व्यक्ति का सामाजिक संतुलन बिगड़ जाता है, जिसको समाप्त करने का प्रयास सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के द्वारा किया जाता है।

सेवार्थी की समस्याओं के कारण सेवार्थी को विभिन्न समस्याओं का सामना करना पड़ता है। वे समस्याएं अग्रलिखित हैं–

- सेवार्थी को अपनी वर्तमान स्थिति से असंतोष या अरूचि।
- सेवार्थी अपनी वर्तमान स्थिति में निश्चित उद्देश्य की पूर्ति के लिये परिर्वतन करता है।
- सेवार्थी अपने वर्तमान में जो इच्छा पूर्ण करना चाहता है उसके लिए यह आवश्यक है कि वह जिस क्रिया की आवश्यकता हो उसके प्रति सकारात्मक प्रयत्न करे।
- सेवार्थी की समस्या की प्रकृति एवं समस्या की जटिलता पर उद्देश्य की प्रकृति तथा जटिलता आधारित होती है।

उपरोक्त विवरण के आधार पर यह आवश्यक है कि समस्या की जटिलता को ध्यान में रखते हुए समस्या समाधान करने हेतु कुछ आवश्यक योग्यताएं होनी चाहिए जो अग्रांकित हैं–

- सेवार्थी की समस्या से संबंधित तथ्यों का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए।
- सेवार्थी की समस्या से संबंधित तथ्यों के सभी तत्वों के अन्तर्संबंधों का ज्ञान होना चाहिए।
- सेवार्थी की समस्या के तत्वों को व्यवस्थित करने की योग्यता तथा विकास की गति का ज्ञान होना चाहिए।
- सेवार्थी की समस्या की परिस्थितियों का उचित जानकारी होनी चाहिए।
- सेवार्थी की समस्या को हल करने हेतु पूर्व अनुभवों का सम्यक् उपयोग करना चाहिए।
- सेवार्थी की सम्प्रेरणाओं की जटिलता एवं प्रकारों के बारे में विस्तृत जानकारी होनी चाहिए।

अतः सेवार्थी की समस्या समाधान में सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य अपना पूर्ण योगदान प्रदान करता है।

1.3.3 संस्था या स्थान

सेवार्थी जिस स्थान पर अपनी समस्या के समाधान के लिए आता है उस स्थान को सामाजिक संस्था के नाम से जाना जाता है। हम जानते हैं कि सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य हर स्थान पर सम्पन्न नहीं किया जा सकता है। सेवार्थी की समस्याओं को हल करने के लिए एक विशिष्ट स्थान एवं सुविधाओं की आवश्यकता पड़ती है। संस्था या स्थान सेवार्थी के समस्या समाधान हेतु आवश्यक भौतिक एवं प्राविधिक उपकरण विशेषज्ञों की सेवाएं तथा मुद्रा या भौतिक वस्तुओं की व्यवस्था करता है।

वास्तव में देखा जाए तो संस्था ही वह कारक है जो सेवार्थी एवं कार्यकर्ता के मध्य संबंध स्थापित करने का माध्यम है। लेकिन यहां यह आवश्यक है कि संस्था के बारे में जानकारी प्राप्त कर ली जाय। संस्था क्या है? यह कैसे सेवार्थी की सहायता करती है? तथा यह कैसे संसाधनों एवं विशेषज्ञों को उपलब्ध कराती है? के बारे में जानकारी आवश्यक है। स्थान या संस्था से आशय एक ऐसी संस्था से है जिसके अन्तर्गत में सेवार्थी की सहायता की जाती है। ये संस्था या स्थान सरकारी या गैर–सरकारी हो सकते हैं। सेवार्थी को सामाजिक वैयक्तिक कार्य के द्वारा जो भी सहायता प्रदान की जाती है इन्हीं संस्थाओं या स्थानों द्वारा या संस्था या स्थान के बाहर सामाजिक कार्यकर्ता द्वारा सामाजिक सेवायें प्रदान की जाती हैं। सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में संस्था या स्थान एक ऐसी इकाई होती है जो सेवार्थियों की सहायता करने में अपनी भूमिका निभाती है। संस्था या स्थान वास्तव में एक सामाजिक सेवा विभाग है या एक प्रकार की मानव कल्याणकारी संस्था है। संस्था या स्थान एक विशेष प्रकार की सामाजिक संस्था है जिसका प्रमुख उद्देश्य सेवार्थी की सामाजिक समस्याओं का निराकरण ही नहीं करना है बल्कि सेवार्थी द्वारा अनुभव किये जा रहे कठिनाइयों को हल करना है जिससे सेवार्थी अपने जीवन को पुनर्गठित कर सकें। संस्था या स्थान का उद्देश्य सेवार्थी की सामाजिक असमायोजनात्मक अवस्था एवं मनोसामाजिक समस्याओं का निराकरण एवं समाधान करना है जिसके आधार पर सेवार्थी अपने व्यक्तिगत एवं पारिवारिक जीवन के मध्य सामंजस्य स्थापित कर सके।

टिप्पणी

संस्था या स्थान की स्थापना का प्रमुख उद्देश्य समस्याओं का समाधान करना होता है। संस्था के पास यदि कोई सेवार्थी आता है तो सर्वप्रथम विशिष्ट लक्ष्यों का निर्धारण कर लिया जाता है। तत्पश्चात् सेवार्थी की समस्या के उद्देश्य की पूर्ति के लिए संस्था के द्वारा कर्मचारियों की नियुक्ति करती है एवं प्रत्येक कर्मचारी के कर्तव्यों एवं अधिकारों का निर्धारण करती है। ये कर्मचारी संस्था में एक दूसरे से कार्यात्मक रूप से जुड़े होते हैं एवं एक दूसरे के कार्यों में सहायता प्रदान करते हैं। समुदाय एवं सेवार्थियों की समस्याओं के निराकरण के लिए संस्था नीति निर्धारण का कार्य भी करती है जिससे इनकी सहायता अधिक से अधिक की जा सके तथा इन नीतियों का भरपूर उपयोग किया जा सके। संस्था में जो कर्मचारी प्रस्थिति में ऊपर की श्रेणी में होते हैं वे नीति निर्धारण तथा कर्मचारियों के कार्यों के क्रियान्वयन के तरीकों को निर्धारित करते हैं। संस्था में जो कर्मचारी नीचे की श्रेणी में होते हैं वे नीतियों का क्रियान्वयन करते हैं।

संस्था या स्थान मूलरूप से समुदाय के आदर्श एवं मूल्यों का प्रतिनिधित्व करते हैं। हम जानते हैं कि समाज परिवर्तनशील है जिसके कारण सामाजिक परिस्थितियां परिवर्तित होती रहती हैं जिससे समाज में स्थापित आदर्शों एवं मूल्यों में भी परिवर्तन आता है। अतः इस परिवर्तन के आधार पर संस्थाएं भी अपनी नीतियों एवं कार्य के ढंगों में परिवर्तन कर लेती हैं। इन नीतियों एवं संस्था के संगठन का महत्व सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ता के लिए भी होता है। अतः संस्था में सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ता को उचित स्थान प्राप्त होगा तथा उसको महत्व दिया जायेगा तो सामाजिक वैयक्तिक कार्यकर्ता अपनी भूमिकाओं के निर्वहन में सफल सिद्ध होगा। इसके विपरीत यदि संस्था में सामाजिक वैयक्तिक कार्यकर्ता को उचित स्थान प्राप्त नहीं होगा एवं उसको महत्व नहीं दिया जायेगा तो वह अपने उत्तरदायित्व का निर्वहन नहीं कर पायेगा।

इस प्रकार उपरोक्त विवरण के आधार पर हम कह सकते हैं कि सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का प्रमुख उद्देश्य सेवार्थी की मनोसामाजिक समस्याओं को हल करना है। इस हेतु कार्यकर्ता का न केवल बाहरी रूप से बल्कि आंतरिक रूप से उसका व्यक्तित्व बन जाता है जिससे वह सेवार्थी की समस्याओं के निराकरण में सफल सिद्ध हो जाता है। सामाजिक वैयक्तिक कार्यकर्ता संस्था में कार्य करता है जहां सेवार्थी अपनी सामाजिक समस्याओं के निराकरण के लिए आता है लेकिन इसका आशय यह नहीं है कि कार्यकर्ता केवल संस्था का अंग होकर ही कार्य करता है। सामाजिक वैयक्तिक कार्यकर्ता संस्था के द्वारा उपलब्ध कराये गये साधनों एवं स्रोतों का उपयोग समस्या के निराकरण में करता है लेकिन अपनी उन प्रविधियों, निपुणताओं, कार्यप्रणालियों कार्यक्रमों को उपयोग करता है जिनको उसने अपने व्यवसाय से प्राप्त किया है।

1.3.4 प्रक्रिया

प्रक्रिया से आशय उन क्रियाओं से है जो अनवरत गतिमान रहती हैं एवं जिनसे हर एक व्यक्ति संबंधित एवं प्रभावित होता है। प्रक्रिया में घटित होने वाली घटनाओं का एक क्रम होता है और जिनके द्वारा निश्चित परिणाम स्पष्ट होते हैं। स्पष्टतः प्रक्रिया उन घटनाओं के क्रम को कहते हैं जिनके द्वारा एक विशेष परिणाम प्राप्त होता है। वे

आपस में एक दूसरे से संबंधित होती हैं। जिन क्रियाओं में कोई संबंध नहीं होता है उन्हें प्रक्रिया के अन्तर्गत शामिल नहीं करते हैं। वेबेस्टर्स शब्दकोश में प्रक्रिया के बारे में उल्लेख है कि, ''प्रक्रिया एक ऐसी घटना है जिसमें समय–समय पर निरन्तर परिवर्तन होता रहता है।'' इस प्रकार प्रक्रिया की अग्रलिखित विशेषतायें परिलक्षित होती हैं–

- प्रक्रिया में घटनायें एक दूसरे से संबंधित होती हैं।
- प्रक्रिया में घटनाओं की पुनरावृत्ति होती है।
- प्रक्रिया में घटनाओं में निरन्तरता पाई जाती है।
- प्रक्रिया में घटनाओं के परिणाम होते हैं।

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की प्रक्रिया समस्या निराकरण करने वाली प्रक्रिया है लेकिन सभी प्रकार की समस्याओं का हल इस प्रक्रिया में सम्भव नहीं है। मात्र आंतरिक व बाह्य समायोजनात्मक समस्यायें ही इसकी कार्य परिधि में आती हैं। अतः स्पष्ट है कि सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की प्रक्रिया द्वारा व्यक्ति की सहायता आंतरिक एवं बाह्य समायोजन में की जाती है जहां पर व्यक्ति किसी प्रकार की कठिनाई या असमायोजन प्रकट करता है। परिस्थिति से समायोजन का कार्य व्यक्ति के व्यवहार में जन्म से ही शुरू हो जाता है और जीवन के अंतिम क्षणों तक गतिमान रहता है।

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में व्यक्ति की समस्यायें दो प्रकार से संबंधित होती हैं। जो अग्रलिखित हैं–

- असंतोष की समस्या के स्थान पर संतोष प्राप्त करना।
- वर्तमान में प्राप्त संतोष की स्थिति से अधिक संतोष प्राप्त करना।

जब हम किसी व्यक्ति की स्थिति को मनोवैज्ञानिक रूप से स्वस्थ्य एवं समायोजनात्मक दृष्टि से सुव्यवस्थित पाते हैं तो हम कहते हैं कि वह व्यक्ति अपनी परिस्थितियों पर कुछ हद तक नियंत्रण प्राप्त कर चुका है। इसका आशय यह नहीं है कि उसकी सभी स्थितियों की पूर्ण संतुष्टि है तथा वह अपनी सभी परिस्थितियों पर पूर्ण नियंत्रण रखता है। वस्तुतः इसका आशय यह है कि उस व्यक्ति की समस्यायें उस व्यक्ति को परास्त नहीं कर पा रही हैं और व्यक्ति उनको नियंत्रित करने में सफल हो पा रहा है। वह अपनी समस्याओं को आसानी से सुलझाने के तरीकों के बारे में जानता है।

व्यक्ति के जीवन में समायोजन की प्रक्रिया हमेशा चलती रहती है। व्यक्ति के जीवन की इस प्रक्रिया में कुछ समस्यायें तो अपने आप समाप्त हो जाती हैं तथा परिस्थितियों में परिवर्तन हो जाता है जिसके कारण व्यक्ति में पुनः संतुलन संभव हो जाता है। लेकिन व्यक्ति के लिये यह भी आवश्यक है कि जब परिस्थितियों में परिवर्तन हो तो वह अपनी आंतरिक स्थितियों में भी परिवर्तन जरूर ले आये जिसके कारण वह अपनी समस्याओं या परिस्थितियों से समझौता करने में सफल हो सकता है। इसके विपरीत यदि व्यक्ति अपनी स्थितियों में परिवर्तन नहीं कर पाता है तो वह अपनी समस्याओं से समझौता करने में असफल हो जाता है या सामाजिक व अन्तर्वैयक्तिक दबाव को कम करने में असफल रहता है। इस परिस्थिति में वह संस्था में सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की सहायता प्राप्त करने हेतु आता है।

टिप्पणी

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की प्रक्रिया में व्यक्ति को न केवल मनोसामाजिक समस्याओं को समायोजन प्रदान किया जाता है बल्कि उस व्यक्ति की क्षमताओं को जरूरत के अनुसार अधिकतम विकास कर उसे इस योग्य बनाने का प्रयास किया जाता है जिससे कि वह आत्मनिर्भर होकर अधिकतम सुख एवं संतोष का जीवन–यापन कर सके। सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की प्रक्रिया में कार्यकर्ता को प्रमुखतः तीन कार्य करने होते हैं, जो निम्नांकित हैं–

- सेवार्थी की समस्या, व्यक्तित्व और उसके सामाजिक पर्यावरण से संबंधित तथ्यों का अध्ययन।
- सेवार्थी की समस्या का निदान।
- सेवार्थी की समस्या का वाह्य एवं आंतरिक सहयोग के द्वारा उपचार।

उपरोक्त तीनों कार्यों हेतु सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ता अपनी योग्यताओं का प्रयोग करते हुए सेवार्थी की समस्याओं को सुलझाने को प्रयास करता है। इसमें वह सेवार्थी की समस्या के बारे में अधिक से अधिक जानकारी इकट्ठा करता है जिससे समस्या को समझने में, निदान करने में तथा उपचार करने में सहायता मिल सके। इस कार्य के लिये सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ता साक्षात्कार का सहारा लेता है। सेवार्थी की समस्याओं के अध्ययन हेतु निरीक्षण, अन्वेषण, वैयक्तिक इतिहास अध्ययन आदि प्रणालियों का उपयोग करता है। सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ता का ध्यान समस्या के साथ–साथ सेवार्थी के व्यक्तित्व पर भी होता है जिससे कि सेवार्थी असुविधा का अनुभव न करे। कार्यकर्ता सेवार्थी को संस्था के उद्देश्यों एवं सुविधाओं से भी परिचित करवाता है और स्पष्ट करता है कि उसकी सहायता किस हद तक की जा सकेगी।

सेवार्थी की समस्या के अध्ययन के पश्चात् निदान किया जाता है। निदान में सेवार्थी को उसकी समस्या के कारणों के बारे में बताया जाता है तथा उसको यह भी बताया जाता है कि उसकी सहायता किस प्रकार की जायेगी। निदान के उपरांत सेवार्थी का उपचार किया जाता है। इस प्रक्रिया में उपचार के लक्ष्यों का निर्धारण सेवार्थी की समस्या की जटिलता, उसकी इच्छा, उसकी आशा, उसकी आंतरिक क्षमता तथा कार्य करने की शक्ति, बाह्य पर्यावरण में उपलब्ध साधन, संस्था की नीति तथा कार्यकर्ता के ज्ञान एवं कुशलता के आधार पर किया जाता है। इस प्रक्रिया में उपचार के निम्न साधनों का उपयोग सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ता करता है–1. परिस्थितियों में सुधार 2. आलम्बन 3. तादात्मीकरण 4. स्वीकृति 5. पुष्टीकरण 6. प्रोत्साहन 7. सामान्यीकरण 8. संक्षिप्तीकरण 9. व्याख्या 10. पुनर्विश्वासीकरण 11. निर्देशन 12. शिक्षण 13. स्पष्टीकरण इत्यादि।

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की प्रक्रिया के चरण–सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की प्रक्रिया में अग्रलिखित चरण होते हैं–

- सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की प्रक्रिया में सेवार्थी के अहम् को स्थायित्व, आवश्यक सहायता एवं आलंबन प्रदान किया जाता है।
- सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की प्रक्रिया में संबंध स्वयं प्रभावकारी कदम होता है।

- सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की प्रक्रिया में साधारण से साधारण संबंध सेवार्थी को सुरक्षा प्रदान करता है।
- सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की प्रक्रिया में संबंध के द्वारा सेवार्थी का तनाव कम होता है तथा समस्या स्पष्ट होने लगती है।
- सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की प्रक्रिया में सेवार्थी का विश्वास कार्यकर्ता के प्रति मजबूत हो जाता है तो उसके अहम् को अत्यधिक सहयोग एवं सम्बल प्राप्त होता है।
- सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की प्रक्रिया में सेवार्थी चेतन व अचेतन रूप से कार्यकर्ता की सलाह को मानने लगता है तथा अपनी समस्या का प्रत्यक्षीकरण भिन्न तरीके से करता है।
- सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की प्रक्रिया में सेवार्थी का अहम् उचित व्यवहार तथा तर्क करना सीख जाता है।

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य व्यक्ति की मनोसामाजिक समस्याओं का समाधान करने में संस्था के द्वारा सहायता प्रदान करता है। इसमें व्यक्ति, सेवार्थी के रूप में संस्था या स्थान में आता है, जिसको मनोसामाजिक समस्यायें होती हैं जिनका वह स्वयं समाधान नहीं कर सकता। सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ता निश्चित प्रक्रिया के द्वारा सेवार्थी की समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करता है।

1.3.5 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के अंगों के मध्य संबंध

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में अंगों के मध्य अंतर्संबंध पाया जाता है। सेवार्थी या व्यक्ति, समस्या, संस्था या स्थान तथा प्रक्रिया एक दूसरे से जुड़े हुए हैं। सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में जब कोई व्यक्ति अपनी समस्याओं से निजात नहीं पाता है तो वह असमायोजित हो जाता है। इस परिस्थिति में वह अपने आप को कुंठित व असामान्य पाता है। ऐसी स्थिति में वह स्वयं या परिवार के सदस्यों द्वारा सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की सहायता प्राप्त करने के लिए संस्था या स्थान पर जाता है या ले जाया जाता है। जब वह संस्था में भर्ती हो जाता है तो उसकी सहायता हेतु सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य अपनी प्रक्रियाओं की सहायता से उसकी समस्याओं के समाधान हेतु प्रयास करता है।

पर्लमैन ने सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के अंगों के बारे में जब बताया होगा तब उनका दृष्टिकोण व्यक्ति के व्यक्तित्व और उसकी समस्या के जन्म लेने की स्थिति पर केंद्रित न होकर उसके अन्य दोनों अंगों जैसे स्थान व प्रक्रिया के बारे में भी अवश्य रहा होगा। क्योंकि चारों अंगों का सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में महत्वपूर्ण स्थान है। वस्तुतः देखा जाय तो स्पष्ट रूप से व्यक्ति या सेवार्थी सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का प्रथम अंग है। जब भी हम समाज की संकल्पना करते हैं तो निश्चित ही व्यक्ति के व्यक्तित्व के बारे में भी सोचते हैं क्योंकि मानव के बिना मानव समाज की संकल्पना निरर्थक है। लेकिन यहां ध्यातव्य है कि व्यक्ति जब समाज में जीवन–यापन करता है तो वह अन्य लोगों की सहायता अपने हितों की संरक्षा के लिये करता है तथा दूसरों को सहायता उनके हितों के लिये करता है। जब कभी व्यक्ति का व्यक्तित्व उसके चारों तरफ फेले हुए पर्यावरण एवं सामाजिक परिवेश से

टिप्पणी

संतुलन स्थापित नहीं कर पाता है तब उसके सामने कुसमायोजन की समस्या उत्पन्न हो जाती है। यही असमायोजन सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में द्वितीय अंग के रूप में जाना जाता है जिसका वर्णन पहले ही किया जा चुका है। अब जब व्यक्ति अपने आप को समस्या से ग्रस्त पाता है और अपने आप को समाज के परिप्रेक्ष्य में असमायोजित पाता है अर्थात् अपने व्यवहार को समाज के अनुकूल नहीं पाता है तो वह व्यथित हो जाता है एवं अपने आपको बीमार समझने लगता है। यही स्थिति व्यक्ति को किसी विशेषज्ञ की खोज के लिये बाध्य करती है। इस परिस्थिति में व्यक्ति सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की सहायता प्राप्त करने हेतु किसी संस्था या स्थान में जाता है तथा अपनी समस्या के निराकरण हेतु प्रयास करता है। जब व्यक्ति समस्य के निराकरण हेतु किसी संस्था या स्थान का चुनाव करता है तो सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में यह तृतीय अंग कहलाता है। इसमें सेवार्थी अपने द्वारा या किसी अन्य द्वारा स्थान या संस्था में आता है। इसके बाद जब सेवार्थी संस्था में भर्ती हो जाता है तो उसकी समस्याओ के निराकरण के लिये सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य विभिन्न प्रक्रियाओं का प्रयोग करते हुए सेवार्थी की समस्याओं को हल करने का प्रयास करता है। सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में प्रक्रिया से आशय उस व्यवस्था से है जिसके द्वारा सेवार्थी की सहायता की जाती है। इस प्रक्रिया में सर्वप्रथम सामाजिक वैयक्तिक कार्यकर्ता सेवार्थी से मधुर संबंध स्थापित करता है उसके बाद सेवार्थी की पारिवारिक, व्यक्तिगत इतिहास की जानकारी करता है, उसकी समस्याओं को जानने का प्रयास करता है उसके बाद समस्याओं का निदान करने के पश्चात् उपयुक्त उपचार योजना बनाता है तथा मूल्यांकन करता है, यह सब एक प्रक्रिया के माध्यम से किया जाता है।

उपरोक्त विवरण के अनुसार स्पष्ट है कि सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के अंगों में अंतर्संबंध है तथा ये एक दूसरे से जुड़े हुए हैं। सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के अंग व्यक्ति से प्रारम्भ होकर प्रक्रिया पर समाप्त होते हैं।

अपनी प्रगति जांचिए

3. "सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य एक प्रक्रिया है जिसका उपयोग कुछ मानव कल्याण संस्थाएं करती हैं ताकि व्यक्तियों की सहायता इस प्रकार की जाए कि वे सामाजिक कार्यात्मकता की समस्याओं का सामना उच्चतर विधि से कर सकें।" सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की यह परिभाषा किसने दी है?

   (क) वाटसन (ख) पर्लमैन

   (ग) रिचमण्ड मैरी (घ) टैफ्ट

4. सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के प्रमुख अंग कितने प्रकार के होते हैं?

   (क) दो (ख) तीन

   (ग) चार (घ) पांच

1.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

1. (क)
2. (घ)

3. (ख)

4. (ग)

1.5 सारांश

टिप्पणी

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का प्रयोग व्यक्ति की समस्याओं के समाधान हेतु किया जाता है। व्यक्ति जब सामाजिक जीवन में रहते हुए अपने उत्तरदायित्वों का निर्वाह करता है तो वह कभी–कभी समस्याग्रस्त हो जाता है। इस समस्या से निजात पाने के लिए वह लोगों से अन्तःक्रिया करता है। अंतःक्रिया में वह अपने द्वारा अनुभव की गई समस्याओं को दूसरे व्यक्ति को बताता है तथा उससे समाधान प्राप्त करने का प्रयास करता है।

व्यक्ति जब जन्म लेता है तब वह असहाय एवं निर्बल प्राणी होता है। उसमें आशा व विश्वास का संचार वैयक्तिक सहायता द्वारा ही किया जा सकता है। व्यक्ति का जब तक सामान्य रूप से विकास नहीं हो सकता तब तक वह अपनी क्षमताओ एवं शक्तियों को रचनात्मक कार्यों में नहीं लगा सकता। अतः यदि व्यक्ति का विकास सामान्य रूप से हो तब वह अपनी शक्तियों एवं क्षमताओं का प्रयोग रचनात्मक कार्यों में कर सकता है और यह तभी सम्भव हो सकता है जब व्यक्ति को उसकी आवश्यकता के अनुरूप सहायता प्राप्त होती रहे, क्योंकि जीवन के प्रत्येक स्तरों पर उसे समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

व्यक्ति समाज में रहते हुए रचनात्मक कार्यों को करता है। इसी समाज से व्यक्ति को मनोसामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। व्यक्ति मनोसामाजिक रूप से मनोवैज्ञानिक प्राणी है। देखा जाय तो मानव के सामाजिक जीवन का इतिहास ही मानव का इतिहास है। लेकिन एक तरफ जहां पर व्यक्ति के सामाजिक जीवन ने व्यक्ति को अस्तित्व प्रदान कर सामाजिक गुणों को विकसित किया वहीं पर दूसरी तरफ व्यक्ति के जीवन में दरिद्रता, निर्धनता, बेरोजगारी, गरीबी, रोग तथा पारिवारिक एवं व्यक्तिगत दोनों ही प्रकार की समस्याओं को जन्म दिया। फलस्वरूप इन समस्याओं से निपटने के लिए समाज को अनेक सुरक्षात्मक कदम उठाने पड़े। अतः सुरक्षात्मक कदम के रूप में समाज कार्य भी एक प्रणाली के रूप में कार्य करता है जिसके द्वारा लोगों की सहायता तथा भावात्मक अनुकूलन संबंधी समस्याओं के समाधान में प्रयोग की जाती है। सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य भी समाज कार्य का एक व्यावसायिक रूप है जिसकी अवधारणा स्पष्ट करना आवश्यक एवं उचित प्रतीत होता है।

व्यक्ति अपनी मनोसामाजिक समस्याओं के समाधान के लिए सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की सहायता लेता है और वह अपनी समस्याओं को सुलझाने में समर्थ हो जाता है। चूंकि सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के द्वारा व्यक्ति के ऊपर पड़ने वाले पर्यावरण के दबाव को कम करके उसके व्यवहार एवं मनोवृत्ति में परिवर्तन लाने का प्रयास किया जाता है जो कि समस्या समाधान हेतु आवश्यक होता है।

वैयक्तिक सामाजिक कार्यकर्ता, सेवार्थी के संबंध में जो भी जानकारी चाहता है उन सभी का संबंध सेवार्थी की समस्या से अधिक होता है। वैयक्तिक सामाजिक कार्यकर्ता उन सभी तथ्यों की खोज करता है जिनसे सेवार्थी की समस्या समझने, उसके निदान करने तथा समाधान करने में सहायता मिलती है। सेवार्थी की समस्या ही

टिप्पणी

निश्चित करती है कि वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ता को किस प्रकार के ज्ञान की आवश्यकता है तथा किस प्रकार की सहायता से सेवार्थी पुनः अनुकूलन प्राप्त कर सकेगा।

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में अंगों के मध्य अंतर्संबंध पाया जाता है। सेवार्थी या व्यक्ति, समस्या, संस्था या स्थान तथा प्रक्रिया एक दूसरे से जुड़े हुए हैं। सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में जब कोई व्यक्ति अपनी समस्याओं से निजात नहीं पाता है तो वह असमायोजित हो जाता है। इस परिस्थिति में वह अपने आप को कुंठित व असामान्य पाता है। ऐसी स्थिति में वह स्वयं या परिवार के सदस्यों द्वारा सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की सहायता प्राप्त करने के लिए संस्था या स्थान पर जाता है या ले जाया जाता है। जब वह संस्था में भर्ती हो जाता है तो उसकी सहायता हेतु सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य अपनी प्रक्रियाओं की सहायता से उसकी समस्याओं के समाधान हेतु प्रयास करता है।

1.6 मुख्य शब्दावली

- **सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य** : यह एक समाज कार्य की व्यावसायिक प्रणाली है जो सेवार्थियों को आत्मनिर्भर बनाने में सहायता प्रदान करती है।
- **व्यक्ति** : व्यक्ति से आशय किसी भी सेवार्थी से है जो अपनी समस्याओं के निराकरण के लिये सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ता के पास आता है।
- **समस्या** : इसका तात्पर्य सामाजिक एवं मनोसामाजिक समस्याओं से है।
- **संस्था** : इसका तात्पर्य उस संस्था से है जो असमायोजित व्यक्तियों हेतु सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य उपलब्ध कराती है।
- **प्रक्रिया** : इसका आशय उस प्रक्रिया से है जिसमें सेवार्थी की सहायता अनवरत रूप में की जाती है जब तक की वह समायोजित न हो जाय।

1.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

लघु–उत्तरीय प्रश्न

1. सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की व्यावसायिक समाज कार्य की एक प्रविधि के रूप में आवश्यकताओं का वर्णन कीजिए।
2. सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की व्यावसायिक समाज कार्य की एक प्रविधि के रूप में अवधारणाओं के बारे में विवेचना कीजिए।
3. सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के व्यावसायिक समाज कार्य की एक प्रविधि के रूप में उद्देश्यों का वर्णन कीजिए।

दीर्घ–उत्तरीय प्रश्न

1. सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के व्यावसायिक समाज कार्य की एक प्रविधि के रूप में क्षेत्रों पर प्रकाश डालिये।
2. सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के अंगों की विस्तृत व्याख्या कीजिए।

3. सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की प्रक्रिया के चरणों के बारे में विस्तारपूर्वक लिखिये।
4. सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के अंगों के मध्य संबंध को विस्तारपूर्वक प्रतिपादित कीजिए।

1.8 सहायक पाठ्य सामग्री

- Richmond, Merry, "The Long View (Paper and addresses)', 1930, p. 374.
- Richmond, Merry, "What is Social Work', Russell Sage Foundation, New York, 1922, p. 98.
- Richmond, Merry, "Social Diagnosis', Russell Sage Foundation, New York, 1917.
- De Schwinitz, "Survey, Mid Monthly Volume, 65, Year, 1939, p 31.
- Perlman, "Social Case Work-A Problem Solving Process', the University of Chicago Press, 1957, p. 4 & 28.
- William, James and Others, "Psychology', Freeman and Co., Sen-fransisco, 1963. P. 371.
- Duncor, "On Problem Solving in Thinking and Reasoning, Penguin Books, p. 28.
- Mishra, P. D., "Samajik Vaiyaktik Seva Karya', Uttar Pradesh Hindi Sansthan, Lucknow, Second Edition, 1997. P. 50-73.

इकाई 2 समाज कार्य की प्राथमिक अवधारणायें और सामान्य सिद्धांत

टिप्पणी

संरचना

2.0 परिचय

2.1 उद्देश्य

2.2 समाज कार्य : सामाजिक स्थिति और भूमिका, अहम् और अनुकूलन

- 2.2.1 सामाजिक स्थिति का अर्थ
- 2.2.2 सामाजिक स्थिति की उत्पत्ति
- 2.2.3 सामाजिक स्थिति की अवधारणायें
- 2.2.4 सामाजिक भूमिका का अर्थ एवं परिभाषायें
- 2.2.5 सामाजिक भूमिका का वर्गीकरण
- 2.2.6 सामाजिक भूमिका की विशेषतायें
- 2.2.7 अहम् का अर्थ
- 2.2.8 अहम् की दृढ़ता
- 2.2.9 अहम् के कार्य
- 2.2.10 अनुकूलन का अर्थ
- 2.2.11 अनुकूलन के प्रकार
- 2.2.12 अनुकूलन की प्रक्रिया

2.3 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के अनुप्रयोग के रूप में समाज कार्य के सामान्य सिद्धांत

- 2.3.1 वैयक्तिकरण का सिद्धांत
- 2.3.2 भावनाओं के उद्देश्यपूर्ण प्रगटन का सिद्धांत
- 2.3.3 नियंत्रित संवेगात्मक संबंधों का सिद्धांत
- 2.3.4 स्वीकृति का सिद्धांत
- 2.3.5 अनिर्णायक मनोवृत्ति का सिद्धांत
- 2.3.6 आत्मनिश्चय का सिद्धांत
- 2.3.7 गोपनीयता का सिद्धांत

2.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

2.5 सारांश

2.6 मुख्य शब्दावली

2.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

2.8 सहायक पाठ्य सामग्री

2.0 परिचय

समाज में प्रत्येक व्यक्ति का एक निश्चित पद होता है। यह पद किसी व्यक्ति को अपने पूर्वजों से प्राप्त होता है तो किसी को अपने कठिन परिश्रम या योग्यता के बल पर प्राप्त होता है। जिस प्रकार हर एक मानव इस पृथ्वी पर अपने लिए कुछ स्थान बनाता है, वैसे ही व्यक्ति भी सामाजिक धरातल पर स्वाभाविक रूप से कुछ–न–कुछ जगह अपनाता है जिसे समाजशास्त्रीय भाषा में सामाजिक पद कहा जाता है। इसी सामाजिक पद में व्यक्ति की स्थिति एवं भूमिका भी आती है।

प्रस्तुत इकाई में समाज कार्य की प्राथमिक अवधारणाओं के बारे में जानकारी प्रदान की गई है जिसमें सामाजिक स्थिति, सामाजिक भूमिका, अहम् तथा अनुकूलन

टिप्पणी

के बारे में प्रकाश डाला गया है। इसके साथ ही सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के अनुप्रयोग हेतु समाज कार्य के सिद्धांतों की भी चर्चा प्रस्तुत की गई है जिसमें वैयक्तिकरण का सिद्धांत, भावनाओं के उद्देश्यपूर्ण प्रगटन का सिद्धांत, नियंत्रित सांवेगिक अन्तर्भावितता का सिद्धांत, स्वीकृति का सिद्धांत, अनिर्णायक मनोवृत्ति का सिद्धांत, आत्म निश्चय का सिद्धांत एवं गोपनीयता के सिद्धांत के बारे में विस्तृत वर्णन प्रस्तुत किया गया है।

2.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप–

- समाज कार्य की प्राथमिक अथवा मूल अवधारणाओं से अवगत हो पाएंगे;
- सामाजिक स्थिति के बारे में जानकारी प्राप्त कर पाएंगे;
- सामाजिक भूमिका के बारे में ज्ञान अर्जित कर पाएंगे;
- अहम् के बारे में जानकारी प्राप्त कर पाएंगे;
- अनुकूलन को समझ पाएंगे।

2.2 समाज कार्य : सामाजिक स्थिति और भूमिका, अहम् और अनुकूलन

यहां समाज कार्य में सामाजिक स्थिति और उसकी भूमिका, अहम तथा अनुकूलन के विषय में विस्तार से विवेचन किया गया है।

2.2.1 सामाजिक स्थिति का अर्थ

आधुनिक समाज में सामाजिक स्थिति एक प्राथमिक अवधारणा है। इसके अभाव में सामाजिक संरचना की संकल्पना नहीं की जा सकती है। इसके बारे में बीयरस्टेट लिखते हैं कि, ''समाज स्थितियों का एक जाल है।'' अतः इस दृष्टि से यह स्पष्ट होता है कि समाज व्यक्तियों का समूह नहीं बल्कि विभिन्न व्यक्तियों द्वारा जिन सामाजिक स्थितियों का निर्माण होता है उन्हीं का एक समग्र है। यहां यह भी भ्रांति नहीं पालना चाहिए कि समाज मात्र सामाजिक स्थिति का एक समग्र है। सामाजिक स्थिति एक ऐसा उपकरण है जिसे जाने बिना आधुनिक समाजशास्त्र को ठीक से नहीं समझा जा सकता है। सामाजिक स्थिति या हैसियत को कुछ विद्वानों ने 'रैंक आर्डर' कहा है। अतः जब हम स्तर की बात करते हैं तो उच्च या निम्न वर्ग का भाव प्रकट करते हैं। जिसके साथ प्रायः सम्मान या प्रतिष्ठा का भाव जुड़ा होता है। अन्य समाजशास्त्री सामाजिक स्थिति से पद या अवस्था का भाव व्यक्त करते हैं और उसके साथ कोई क्रम का भाव नहीं होता। इसमें हम वैवाहिक स्थिति, आयु स्थिति, यौन स्थिति, रिश्तेदारी स्थिति तथा सदस्यता स्थिति इत्यादि की बात करते हैं।

समाज में सामाजिक नियम ही व्यक्तियों की स्थितियों का निर्धारण करते हैं। अतः सामाजिक स्थिति सामाजिक नियमों से अलग नहीं है। व्यक्ति के सामाजिक आचरण, व्यक्ति के सामाजिक अधिकार, कर्तव्य या उत्तरदायित्वों का निर्धारण व्यक्ति की स्थिति से होता है। सामाजिक मानदंड व्यक्तियों की स्थिति से जुड़ा होता है

टिप्पणी

न कि व्यक्तियों से। व्यक्तियों के आचार–व्यवहार का संचालन सामाजिक मानदंडों के द्वारा व्यक्ति की स्थिति से परिलक्षित होता है। इस बात की पुष्टि बीयरस्टेट के अग्रलिखित अवलोकन से स्पष्ट होती है कि, ''मानदंड जो बहुत सारे अधिकारों, कर्तव्यों, विशेषाधिकारों, उत्तरदायित्वों, प्राधिकारों एवं परमाधिकारों को जो शामिल करता है, वह स्थितियों से जुड़ा होता है न कि व्यक्तियों से।''

इस प्रकार उपरोक्त विवरण के आलोक में यह ज्ञात होता है कि स्थिति मात्र किसी समाज या समूह में पद का नाम है। समाज या समूह में जितने लोग होते हैं उतने अधिक पद भी होते हैं। कभी–कभी तो एक व्यक्ति एक से अधिक पद धारण कर लेता है। समाज में व्यक्ति जितने अधिक समूहों के साथ अन्तःक्रिया करता है, उसकी उतनी ही अधिक सामाजिक स्थिति होती है और कभी–कभी एक ही समूह में एक व्यक्ति की एक से अधिक सामाजिक स्थिति होती है। सर्वथा विचारणीय एवं अवलोकनीय दृष्टान्तों में व्यक्ति जब अपने परिवार में पिता, पुत्र, भाई, पति एवं अभिभावक के रूप में होता है, वही व्यक्ति अपने परिवार के बाहर किसी समूह का सदस्य भी होता है या किसी अन्य समूह में प्रतिष्ठित अधिकारी भी होता है। अतः बीयरस्टेट के शब्दों में सामाजिक स्थिति का तात्पर्य है कि, ''स्थिति एक ऐसा पद है जो समूह–सम्बंध, समूह सदस्यता या समूह–व्यवस्था से प्राप्त होता है।''

इसी परिप्रेक्ष्य में सामाजिक स्थिति को परिभाषित करते हुए एन्थनी गिडेन्स ने लिखा है कि, ''स्थिति से आशय सामाजिक समूह के मध्य सामाजिक प्रतिष्ठा में ऐसे अलगावों से है जो दूसरे लोग उन पर आरोपित करते हैं।'' अतः गिडेन्स के अनुसार सामाजिक स्थिति इस बात पर निर्भर नहीं करती कि कोई व्यक्ति किस वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है, अर्थात् एक ही वर्ग में रहकर विभिन्न प्रकार के लोगों की सामाजिक स्थिति समान नहीं होती है। इसके साथ ही सामाजिक स्थिति प्रायः प्रतिष्ठा को ही प्रदर्शित नहीं करती है। यह किसी व्यक्ति के लिये सकारात्मक महत्व की होती है तो किसी के लिये नकारात्मक महत्व की। इस प्रकार इसको प्रतिष्ठा से जोड़कर नहीं देखा जाना चाहिए। किसी व्यक्ति को सामाजिक स्थिति से समाज में व्यक्तिगत हैसियत की स्थिति का पता चलता है। यह एक सापेक्षिक अवधारणा है जिसके आधार पर हम किसी व्यक्ति की स्थिति हम दूसरे व्यक्ति के संदर्भ में देखते हैं।

समाज कार्य में भी स्थिति का अवलोकन किया जाता है जिसमें व्यक्ति की समायोजनात्मक क्षमता के बारे में जानकारी प्राप्त की जाती है। वास्तव में देखा जाय तो सामाजिक प्रस्थिति व्यक्ति की प्रतिष्ठा को बढ़ाती है। जब कभी व्यक्ति अपनी सामाजिक स्थिति के अनुरूप सामाजिक मानदंडों का अनुपालन नहीं करता है तो वह समाज में अपने आपको असमायोजित महसूस करने लगता है। इसी असमायोजन की स्थिति के निराकरण के लिये व सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की सहायता लेता है।

समाजशास्त्र में सामाजिक स्थिति को प्रायः दो अर्थों में प्रयुक्त किया जाता है। प्रथम सामाजिक स्थिति से तात्पर्य समाज में एक ऐसे पद से लगाया जाता है जो प्रत्येक व्यक्ति को प्राप्त है। चाहे वह माता–पिता, भाई, बहन, शिक्षक, दोस्त तथा पत्नी के रूप में हो। ये सभी पद सामाजिक पद हैं और इन्हीं पदों के अनुरूप व्यक्ति से समाज व्यवहार की अपेक्षा करता है। सामाजिक स्थिति का दूसरा आशय प्रतिष्ठा या सम्मान से लगाया जाता है। प्रायः बहुत सारे समाजशास्त्री विद्वान सामाजिक स्थिति को प्रतिष्ठा के पर्यायवाची शब्द के रूप में प्रयोग करते हैं। समाजशास्त्र में सामाजिक

टिप्पणी

स्थिति का प्रयोग इन दोनों अर्थों में किया जाता है। कुछ मानवशास्त्री एवं समाजशास्त्री सामाजिक स्थिति को सामाजिक पद के रूप में प्रयोग करते हैं।

ब्रूम एवं सेल्सनिक के अनुसार, सामाजिक स्थिति शब्द का प्रयोग समाजशास्त्र में मुख्य रूप से दो अर्थों में होता है और वे दोनों अर्थ एक–दूसरे से जुड़े हुए हैं। प्रथम अर्थ में सामाजिक स्थिति का संबंध व्यक्ति के सामाजिक पद से है। इस अर्थ में सामाजिक स्थिति से उच्च और निम्न स्तर का भाव व्यक्त नहीं होता है। दूसरे अर्थ में सामाजिक स्थिति शब्द का प्रयोग सामाजिक श्रेणी के अर्थ में होता है और जब हम समस्त श्रेणीबद्ध व्यवस्था की बात करते हैं तो उसे ही स्थिति पद्धति कहा जाता है। वर्तमान समय में सामाजिक स्थिति शब्द का प्रयोग समान रूप से दोनों अर्थों में होता है।

2.2.2 सामाजिक स्थिति की उत्पत्ति

वास्तव में सामाजिक स्थिति की उत्पत्ति का प्रश्न बहुत ही रोचक है। जे.एच. फिचर इस प्रश्न का उत्तर देते हुए लिखते हैं कि, समाज में व्यक्तियों की स्थिति दो स्रोतों से निर्धारित होती है। प्रथम आरोपित एवं दूसरा अर्जित। इसी के आधार पर सामाजिक स्थिति को दो भागों में विभाजित किया जाता है–आरोपित स्थिति एवं अर्जित स्थिति। प्रत्येक समाज में व्यक्तियों के कुछ पद समाज के द्वारा निर्मित किये जाते हैं, तो कुछ व्यक्ति अपने व्यक्तिगत गुणों एवं योग्यताओं के आधार पर अर्जित करते हैं। जो सामाजिक स्थिति समाज द्वारा निर्मित है उसमें व्यक्ति की अपनी भूमिका कम होती है और समाज की भूमिका अधिक होती है। अतः हम कह सकते हैं कि समाज द्वारा निर्मित सामाजिक स्थिति अनैच्छिक होती है, परन्तु समाज द्वारा निर्मित सामाजिक स्थिति भी दो प्रकार की होती है। प्रथम वह जिस पर व्यक्ति का कोई नियंत्रण नहीं होता और दूसरा वह जिस पर व्यक्ति का थोड़ा नियंत्रण होता है। हमारे समाज में जाति व्यवस्था के अन्दर जो सामाजिक स्थिति किसी व्यक्ति को प्राप्त होती है उसमें व्यक्ति की अपनी कोई भूमिका नहीं होती है। हमारे समाज में व्यक्ति का वर्ग जन्म से ही निर्धारित हो जाता है। यदि व्यक्ति उच्च वर्ग में जन्म लेता है तो वह उच्च वर्ग का हो जाता है तथा जो निम्न वर्ग में जन्म लेता है वह निम्न वर्ग का हो जाता है। इस स्थिति को अनैच्छिक सामाजिक स्थिति कहा जाता है। दूसरी तरफ कुछ ऐसी भी समाज द्वारा निर्मित स्थितियां होती हैं जिन्हें हम परिवर्तित कर सकते हैं। उदाहरणार्थ अनुलोम एवं प्रतिलोम विवाह। इसमें व्यक्ति समाज में उच्च वर्ग में विवाह करके उच्च सामाजिक स्थिति को प्राप्त कर सकता है जबकि यदि कोई उच्च वर्ग का व्यक्ति निम्न वर्ग में विवाह कर लेता है तो उसकी सामाजिक स्थिति निम्न हो जायेगी।

किसी भी समाज में सामाजिक स्थितियां समान रूप समान महत्व की नहीं होती हैं। कोई सामाजिक स्थिति अधिक तो कोई कम महत्व की होती है। यह इस बात पर निर्भर करता है कि समाज किसी सामाजिक स्थिति को किस रूप में देखता है। इसके बारे में ई.टी. हीलर ने बताया है कि अमेरिकी समाज में व्यवसाय को मूल स्थिति माना जाता है। अतः उपरोक्त के आधार पर हम कह सकते हैं कि प्राचीन एवं मध्यकालीन भारत में जाति प्रथा एक मूल सामाजिक स्थिति थी। भिन्न–भिन्न समाजों में मूल स्थिति भिन्न–भिन्न होती है वैसे ही एक ही समाज में भिन्न समयों में मूल स्थिति मूल स्थिति अलग–अलग हुआ करती है, अर्थात् समय एवं परिस्थिति के अनुसार मूल स्थिति में परिवर्तन आता रहता है।

2.2.3 सामाजिक स्थिति की अवधारणायें

सामाजिक स्थिति की अवधारणायें विभिन्न समाजशास्त्रीय साहित्यों में भिन्न दी गई हैं। यहां पर कुछ अवधारणाओं का वर्णन किया जा रहा है जिससे सामाजिक स्थिति की अवधारणा स्पष्ट हो सकेगी–

औपचारिक एवं अनौपचारिक स्थिति–यह वह स्थिति होती है जो किसी व्यक्ति को किसी औपचारिक व्यवस्था के अन्दर मिलती है। उदाहरणार्थ, किसी संस्थान में कार्यरत सचिव, मंत्री, प्राचार्य, कार्यपालक अभियंता, आचार्य इत्यादि ऐसे अनेक पद वर्तमान समाज में हैं जिन पर विभिन्न लोग कार्य कर रहे हैं। इसके अन्तर्गत बहुत से ऐसे पद भी होते हैं जो पदानुक्रम के अनुसार छोटे होते हैं, परन्तु उस पद की कुछ अपनी विशेषतायें होती हैं जिसके कारण उस पद पर कार्य करने वाला व्यक्ति कुछ विशेष प्रतिष्ठा प्राप्त कर लेता है। उदाहरणार्थ, किसी राज्य मंत्री का वैयक्ति सहायक जो एक मध्यम श्रेणी का पद है परन्तु वैयक्तिक सहायक अपने विभाग के बड़े–बड़े अधिकारियों से भी अधिक अधिकार का प्रयोग करता है।

इसके विपरीत अनौपचारिक स्थिति भी होती है। जैसे, किसी व्यक्ति का संबंध उसके परिवार के विभिन्न सदस्यों के मध्य भिन्न–भिन्न हो सकता है। अतः इस प्रकार के पद जो समाज ने अपनी मान्यताओं, आदर्शों, प्रथाओं, मानदण्डों एवं नियम–कानूनों, को ध्यान में रखकर बनाये जाते हैं, वे सभी पद अनौपचारिक स्थिति कहलाते हैं। इसका दूसरा आशय ऐसी स्थिति से है जो व्यक्तियों को समाज से प्राप्त होता है। उदाहरणार्थ, हमारे समाज के ग्रामीण क्षेत्रों में साधु व फकीरों को जो पद प्राप्त होता है वही पद हमारे परिवार में माता–पिता को भी प्राप्त होता है।

प्रकार्यात्मक स्थिति–जैसा कि शब्द से ही स्पष्ट है कि कार्य के आधार पर व्यक्ति को पद की स्थिति प्राप्त होना। औपचारिक संगठनों के अन्दर कुछ ऐसे भी पद होते हैं जो अपने प्रकार्यों के लिए विशेष रूप से जाते हैं। सम्मान और अधिकार की श्रेणी में वह पद छोटा होता है, परन्तु प्रकार्य की दृष्टि से उसका महत्व समाज में बहुत अधिक होता है। उदाहरण के लिये पुलिस विभाग को ही देखें तो उसमें दरोगा का पद एक सामान्य पद है लेकिन समाज दरोगा के पद को बहुत सारे पदों की तुलना में ऊपर रखता है।

सोपानवत स्थिति–किसी भी पद की स्थिति को यदि श्रेणीवार सजाकर रखा जाये तो उसे ही हम सोपानवत सामाजिक स्थिति कहते हैं। इसमें व्यक्तियों को उनकी वरिष्ठता एवं श्रेष्ठता के आधार पर श्रेणीबद्ध किया जाता है। यह स्थिति हमारे आधुनिक समाज की औपचारिक व्यवस्था की प्रमुख विशेषता है।

2.2.4 सामाजिक भूमिका का अर्थ एवं परिभाषायें

सामाजिक परिस्थिति में व्यक्ति अपनी भूमिकाओं को निभाने में असमर्थ होता है तो व्यक्ति अपनी इस संक्रमण एवं तनाव की स्थिति से समायोजन प्राप्त करने के लिए सहायता प्राप्त करने की आशा से संस्था से जुड़ने का प्रयास करता है। इकाई के उपरोक्त वर्णन के आधार पर हम जानते हैं कि सामाजिक सांस्कृतिक व्यवस्था में व्यक्ति अपनी आयु, लिंग, जाति, प्रजाति एवं व्यक्तिगत योग्यता के आधार पर जिस स्थिति को व्यक्ति प्राप्त करता है, वह उस व्यक्ति की प्रस्थिति कहलाती है और स्थिति

टिप्पणी

के संदर्भ में सामाजिक परम्परा, प्रथा, नियम एवं कानून के अनुसार जो भूमिका उसे निभानी होती है वह उसका कार्य या उसकी भूमिका होती है। जैसे हम जिस परिवार में रहते हैं उस परिवार के अन्य व्यक्तियों के साथ अलग–अलग भूमिका का निर्वहन करते हैं। अतः स्पष्टतः कहा जा सकता है कि प्रत्येक स्थिति का एक क्रिया पक्ष होता है, इस क्रिया पक्ष को ही भूमिका कहते हैं। इसमें दो तत्व होते हैं–

- प्रत्याशाएं
- क्रियाएं

व्यक्ति से संबंधित प्रत्येक स्थिति से समाज कुछ न कुछ अपेक्षायें या आशायें रखता है और यह अपेक्षा करता है कि अमुक व्यक्ति उन आशाओं के अनुरूप क्रिया करेगा। यही क्रिया उस स्थिति विशेष की भूमिका होती हैं। अतः कहा जा सकता है कि सामाजिक भूमिका प्रत्याशाओं और क्रियाओं की एक अन्तःसंबंधित व्यवस्था है जो किसी सामाजिक संगठन का अंग होती है।

सामाजिक भूमिका की अवधारणा मानवशास्त्री रैल्फ लिंटन ने 1936 में प्रदान की। सामाजिक भूमिका शब्द का प्रयोग उन्होंने व्यक्तियों द्वारा किये गये कार्यों के लिये किया था। उनके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति का समाज में एक अपना अलग स्थान या पद होता है और उस पद अनुसार व्यक्ति कार्य करता है, उसे ही सामाजिक भूमिका या फर्ज के नाम से जाना जाता है। लिंटन ने सामाजिक भूमिका को स्थिति का एक गत्यात्मक पहलू बताया है। फर्ज एवं सामाजिक स्थिति या हैसियत एक ही सिक्के के दो पहलू की तरह हैं। दोनों एक दूसरे से इस तरह जुड़े हैं कि वे एक दूसरे से स्वतंत्र नहीं हो सकते हैं तथा दोनों एक दूसरे को समान रूप से प्रभावित करते रहते हैं।

सामाजिक भूमिका को परिभाषित करते हुए ब्रूम एवं सेल्सनिक ने बताया है कि, ''इसे व्यवहार के ऐसे प्रतिमान के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो विशिष्ट सामाजिक पद से जुड़ा होता है।'' इस प्रकार स्पष्टतः कहा जा सकता है कि सामाजिक भूमिका व्यक्तियों के व्यवहार की एक प्रणाली का नाम है। कोई भी व्यक्ति अपने पद के अनुसार जो व्यवहार करता है वही उसकी सामाजिक भूमिका कही जाती है। सामाजिक भूमिकाओं के दो रूप दिखाई देते हैं। प्रथम आदर्श सामाजिक भूमिका एवं दूसरी वास्तविक सामाजिक भूमिका। आदर्श सामाजिक भूमिका वह भूमिका है जो समाज द्वारा किसी व्यक्ति से अपेक्षित है, उदाहरण के लिये, किसी व्यक्ति से समाज यह अपेक्षा करता है कि लोग अपने माता–पिता के साथ अच्छा व्यवहार करें। ऐसे ही समाज में यह भी अपेक्षा की जाती है कि छात्र अपने शिक्षकों से अच्छा व्यवहार करें। दूसरी तरफ वास्तविक सामाजिक भूमिका वह भूमिका है जो किसी विशेष परिस्थिति के कारण व्यक्ति अपनी इच्छाओं के आधार पर व्यवहार करता है। इसका संबंध सामाजिक वातावरण एवं कर्ता के व्यक्तित्व से है। व्यक्ति का व्यक्तित्व जैसा होगा वैसा ही वह व्यवहार करेगा।

सामाजिक भूमिका शब्द संबन्धात्मक शब्द है, इसका अर्थ यह है कि जब कोई व्यक्ति किसी भी रूप में अपनी भूमिका का निर्वहन करता है तो वह दूसरे की भूमिका को ध्यान में रखकर ही ऐसा करता है। अर्थात् व्यक्ति का व्यवहार दूसरे व्यक्ति के व्यवहार पर निर्भर करता है। इसलिये सामाजिक भूमिका के साथ प्रायः भूमिका ग्रहण

टिप्पणी

की बात होती है। भूमिका ग्रहण के बिना सामाजिक अन्तःकरण की कल्पना करना बेमानी होता है। इस हेतु जी.एच. मीड ने कहा है कि भूमिका ग्रहण की प्रक्रिय से ही सामाजीकरण सम्भव हो पाता है।

सामाजिक भूमिका की परिभाषायें विभिन्न विद्वानों के द्वारा प्रदान की गई हैं। कुछ विद्वानों की परिभाषायें अग्रलिखित प्रदान की जा रही हैं–

आर. लिंटन के अनुसार, ''भूमिका शब्द का प्रयोग किसी स्थिति से संबंधित सांस्कृतिक प्रतिमान की समग्रता के लिए किया जाता है। इस प्रकार भूमिका के अन्तर्गत हम उन सभी मनोवृत्तियों, मूल्यों तथा व्यवहारों को सम्मिलित करते हैं जिन्हें कि समाज एक स्थिति विशेष पर आसीन प्रत्येक एवं सभी व्यक्तियों के लिए निर्धारित करता है।''

एस.एस. सार्जेण्ट के अनुसार, ''किसी व्यक्ति की भूमिका सामाजिक व्यवहार का वह प्रतिमान अथवा पुरूष है, जो कि उसे एक परिस्थिति विशेष में अपने समूह के सदस्यों की मांगों एवं प्रत्याशाओं के अनुरूप प्रतीत होता है।''

जे.एच. फिचर के अनुसार, ''जब बहुत से अन्तःसंबंधित व्यवहार प्रतिमान एक सामाजिक प्रकार्य के चारों ओर एकत्रित हो जाते हैं तो उसी सम्मिलन को हम सामाजिक भूमिका कहते हैं।''

2.2.5 सामाजिक भूमिका का वर्गीकरण

लिंटन के अनुसार सामाजिक भूमिका के दो प्रकार होते हैं। प्रथम आरोपित भूमिका एवं द्वितीय अर्जित भूमिका। आरोपित भूमिकायें वे भूमिकायें होती हैं जिनको कोई भी व्यक्ति समाज के सदस्य होने के नाते निर्वहन करता है। उदाहरण के लिये यदि हम अपने परिवार या अपने देश में रहते हैं तो हम अपने परिवार के सदस्यों एवं देश के लिये अपनी भूमिका का निर्वहन करते हैं। दूसरी तरफ अर्जित भूमिकायें वे भूमिकायें होती हैं जिनको हम अपनी योग्यता एवं परिश्रम के बल पर किसी स्थिति के चलते निभाते हैं। जैसे, डाक्टर, मंत्री, कार्यपालक, आचार्य एवं न्यायाधीश की भूमिका।

एस.एफ. नाडेल के अनुसार सामाजिक भूमिका के भी दो प्रकार हैं जिनमें प्रथम सम्बन्धात्मक भूमिका एवं दूसरी गैर–संबंधात्मक भूमिका है। संबंधात्मक भूमिका का संबंध पूरक भूमिका से होता है। उदाहरण के लिये पति की भूमिका तभी संभव है जब व्यक्ति का विवाह हुआ हो एवं उसकी पत्नी हो। इसी प्रकार शिक्षक की भूमिका भी उसके विद्यार्थियों से संबंधित है। अतः हम कह सकते हैं कि वे भूमिकायें जो एक दूसरे की भूमिका पर आधारित होती है, संबंधात्मक भूमिका कहलाती हैं। इसके विपरीत समाज में कुछ ऐसी भूमिकायें होती हैं जो एक दूसरे से जुड़ी हुई नहीं होती हैं। उदाहरण के लिये, एक साधु, फकीर, कवि, या विद्वान की भूमिका किसी अन्य भूमिका के संदर्भ में नहीं निभायी जाती है, ये स्वतंत्र भूमिकायें होती हैं, इन्हें ही हम गैर–संबंधात्मक भूमिका कहते हैं।

2.2.6 सामाजिक भूमिका की विशेषतायें

उपरोक्त विवरण के आधार पर सामाजिक भूमिका की अग्रलिखित विशेषतायें परिलक्षित होती हैं–

टिप्पणी

- सामाजिक भूमिका, सामाजिक स्थिति का क्रियात्मक पक्ष है। उदाहरण के लिए परिवार में पिता की भूमिका।
- सामाजिक भूमिका में व्यवहार अंतःसंबंधित होता है।
- सामाजिक भूमिका में व्यक्ति का व्यवहार सामाजिक प्रत्याशाओं के अनुरूप होता है।
- सामाजिक भूमिका के स्वरूप को सामाजिक मूल्य, आदर्श तथा उद्देश्य निर्धारित करते हैं।
- सामाजिक भूमिका सामाजिक मूल्यों, आदर्शों एवं अवसरों के परिवर्तन होने से परिवर्तित हो जाती हैं।
- सामाजिक भूमिका के विभिन्न क्षेत्र होते हैं और एक भूमिका एक निश्चित क्षेत्र में ही उपयुक्त होती है।
- सभी व्यक्ति सामाजिक प्रत्याशाओं के अनुरूप अपनी भूमिका नहीं निभा पाते हैं क्योंकि व्यक्ति की कार्यशक्ति एवं संप्रेरणा पर अनेक कारक प्रभाव डालते हैं।
- सामाजिक भूमिका स्थिति का निर्धारण करती है तथा स्थिति भूमिका का निर्धारण करती है।
- सामाजिक भूमिकायें यथार्थ से संबंधित होती हैं।
- सामाजिक भूमिकायें एक से अधिक हो सकती हैं।
- सामाजिक भूमिकायें कभी स्थिर नहीं होती हैं।
- सामाजिक भूमिका के आदर्शात्मक एवं व्यावहारिक दो पहलू होते हैं।
- सामाजिक भूमिका स्थिति की व्यावहारिक पहलू का नाम है।
- सामाजिक भूमिकाओं को उनकी महत्ता के अनुसार क्रमबद्ध किया जा सकता है।

2.2.7 अहम् का अर्थ

अहम् सुख तत्व के स्थान पर वास्तविकता से संचालित होता है। इसका प्रमुख कार्य व्यक्ति में उत्पन्न तनाव को उचित साधनों एवं विधियों के माध्यम से समायोजित करना होता है। जब हमें भूख लगती है तो यह तभी शान्त होती है जब हम भोजन की खोज करके भोजन कर लेते हैं। इस प्रकार वास्तविक भोजन एवं प्रतिबिम्बित भोजन में अन्तर करने का कार्य अहम् करता है। अहम् हमारे मस्तिष्क का वह भाग है जिसके द्वारा हम अपना मानसिक संतुलन बनाये रखते हैं। हमारे अन्दर कुछ मूल प्रवृत्तियां पाई जाती हैं जो हमेशा संतुष्ट होने के लिये चेतन मन में आने का प्रयास करती रहती हैं लेकिन उन प्रवृत्तियों की सामाजिक स्वीकृति न होने के कारण अहम् उनको रोकता है। यदि उन प्रवृत्तियों की सामाजिक स्वीकृति होती है तो ही अहम् उनको चेतन मन में आने देता है। व्यक्ति जो भी वास्तविक स्थिति से प्रत्यक्षीकरण करता है उसका उत्तरदायित्व पूर्ण रूप से अहम् पर आधारित होता है। अहम् परिस्थितियों से संबंधित ज्ञान प्रदान करता है एवं समस्या समाधान के उचित तरीकों की खोज करके उन्हें संतुष्ट करने का प्रयास करता है। अहम् का सम्पूर्ण कार्य तर्कों पर आधारित होता है। हम जानते

हैं कि प्रत्येक व्यक्ति पर प्रत्येक क्षण आंतरिक एवं वाह्य अभिप्रेरणाओं, आवश्यकताओं एवं परिस्थितियों का प्रभाव पड़ता रहता है। अतः व्यक्ति के ऊपर इस प्रकार के दबाव एवं तनाव की अनुभूति होती है जिसके फलस्वरूप वह एक विशेष प्रकार का व्यवहार करता है। यह भी विदित है कि हमारे अन्दर तीन प्रकार की शक्तियां अन्तर्निहित होती हैं जो, इदम्, अहम् तथा पराहम् हैं। व्यक्ति का सम्पूर्ण व्यवहार एवं प्रतिउत्तर इन्हीं शक्तियों द्वारा संचालित होता है। व्यक्ति की मूल प्रवृत्तियों का संबंध उसके इदम् से होता है और वह अपनी समस्या प्रतिपादित एवं अप्रतिपादित, नैतिक एवं अनैतिक, स्वीकृत तथा अस्वीकृत सभी इच्छाओं की पूर्ति करने का प्रत्यन्न करता है। परन्तु अहम् अमान्य इच्छाओं के व्यक्तीकरण पर लगाम लगाता है और वास्तविक कार्यों को पूरा करने की अनुमति प्रदान करता है। व्यक्ति का पराहम् व्यक्ति को समाज के आदर्शों व मूल्यों का बोध कराता है। व्यक्ति में अहम् वह शक्ति होती है जो व्यक्ति को वास्तविकता को देखने, उसके बारे में निर्णय लेने तथा कार्य करने के लिए प्रेरित करती है। अहम् के द्वारा उस योग्यता का विकास होता है जिसके द्वारा वह समस्या को गहराई से देख सकता है तथा समस्या निराकरण के साधनों की खोज कर पाता है। अहम् निर्णय शक्ति का विकास करता है जिससे इदम् द्वारा व्यक्त इच्छाओं पर उचित नियंत्रण रखते हुए आंतरिक एवं बाह्य पर्यावरण से अनुकूलन प्राप्त करता है।

2.2.8 अहम् की दृढ़ता

व्यक्ति व्यवहार प्रदर्शन द्वारा उन आवश्यकताओं की पूर्ति करता है जो सामाजिक रूप से स्वीकृत होते हैं। व्यक्ति के व्यवहार को न केवल वर्तमान परिस्थितियां नियंत्रित करती हैं बल्कि उसके पूर्व अनुभव भी व्यवहार को नियंत्रित करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करते हैं। लेकिन कभी तनाव एवं संघर्षपूर्ण स्थिति आ जाती है जहां पर उसका पूर्ण अनुभव तथा वर्तमान शक्ति कार्य करने में अपने आप को असमर्थ पाती हैं। वह इन परिस्थितियों के कारण उत्पन्न मानसिक तनाव का शमन नहीं कर पाता है। वह उन उपायों को इस स्थिति में असफल पाता है जिनका प्रयोग वह पूर्व जीवन में कर चुका होता है। ऐसी परिस्थिति में व्यक्ति को बाह्य सहायता की आवश्यकता होती है।

सामाजिक वैयक्तिक कार्यकर्ता का यह परम कर्तव्य है कि सेवार्थी की समस्या से संबंधित सभी कारणों एवं सेवार्थी द्वारा समस्या समाधान हेतु किये गये प्रयासों के बारे में जानकारी प्राप्त करें। वह देखे कि सेवार्थी पूर्व जीवन में विघटित प्रत्यक्षीकरण का अनुभव रखता है या नहीं, वह अपने ज्ञान का समुचित उपयोग करता है या नहीं तथा वह सामान्य समस्याओं के समाधान में सफलता या असफलता महसूस करता है या नहीं। यदि वह अपनी समस्याओं के समाधान में प्रत्यक्षीकरण नहीं कर पाता है एवं उनका निराकरण नहीं कर पाता है तो यह निश्चित मान लिया जाता है कि सेवार्थी में अहम् शक्ति का अभाव है। सामाजिक वैयक्तिक कार्यकर्ता सेवार्थी के अहम् को सुदृढ़ करने का प्रयास करता है जिससे वह अपनी समस्याओं को समझ सके तथा उनका समाधान कर सके।

सेवार्थी अहम् शक्ति की असफलता में कारण तनावपूर्ण स्थिति में होता है तो वह अपने अचेतन मन द्वारा सुरक्षात्मक उपायों का प्रयोग अपने अहम् शक्ति की सुरक्षा के लिए करता है। जैसे यदि कोई व्यक्ति या सेवार्थी अपनी क्रोध भावना पर नियंत्रण

टिप्पणी

नहीं कर पाता है तो वह दूसरे व्यक्तियों पर प्रक्षेपण करता है और वह यह समझता है कि अन्य लोग उससे नाराज हैं, अतः उसे वैसा ही व्यवहार करना चाहिए। इस प्रकार के सुरक्षात्मक उपायों द्वारा सेवार्थी अपने व्यवहार को तार्किक बनाता है और अमान्य उत्प्रेरकों को सही मानता है। अतः हम कह सकते हैं कि सेवार्थी अपने अहम् की सुरक्षा के लिए सुरक्षात्मक उपायों का सहारा लेता है।

2.2.9 अहम् के कार्य

सामाजिक वैयक्तिक कार्यकर्ता सेवार्थी द्वारा किये गये तार्किक अनुकूलन के तरीकों एवं अतार्किक या अचेतनावस्था में सुरक्षात्मक उपायों के प्रयोग के द्वारा अनुकूलन में अन्तर स्पष्ट करता है। वह सेवार्थी के द्वारा किये गये व्यवहार के आधार पर उसकी अहम् शक्ति का मूल्यांकन करता है। वह यह जानने का प्रयास करता है कि वर्तमान समस्या के प्रति सेवार्थी के क्या विचार हैं? तथा सेवार्थी अपने पूर्व अनुभवों को किस प्रकार प्रयोग में ला रहा है एवं वह किस प्रकार समस्या के निराकरण हेतु प्रयत्न कर रहा है। इस प्रकार सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में कार्यकर्ता सेवार्थी के अहम् कार्यात्मकता के अध्ययन तथा समस्याओं के कारणों का पता लगाने के द्वारा सेवार्थी की शक्ति, विचार पद्धति, प्रत्यक्षीकरण इत्यादि बातों की जानकारी प्राप्त करता है जिसके आधार पर सेवार्थी की चिकित्सा प्रक्रिया एवं प्रविधि निश्चित करने में आसानी हो सके।

सामाजिक वैयक्तिक कार्यकर्ता सेवार्थी के बारे में यह भी जानने का प्रयास करता है कि वर्तमान स्थिति को सेवार्थी किस प्रकार से परिवर्तित करना चाहता है तथा वह अपने समस्या के निराकरण के लिए कौन सी प्रविधि को उपयुक्त समझ रहा है। अभिप्रेरणा वह शक्ति है जो व्यक्ति को हमेशा उत्साहित एवं कार्यशील बनाने में मदद करती है। यह व्यक्ति के चेतन व अचेतन मन दोनों स्तरों पर कार्य करती है। अतः चेतन मन व अचेतन मन दोनों प्रकार की इच्छाओं में भी संघर्ष उत्पन्न हो सकता है। अभिप्रेरणा की स्थिति में दोनों ही स्थिति आ सकती है जब व्यक्ति निश्चित नहीं कर पाता है कि उसे सबसे पहले किस इच्छा की पूर्ति करे तथा किस इच्छा का दमन करे क्योंकि दोनों ही इच्छायें महत्वपूर्ण लगती हैं। यहां पर सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ता सेवार्थी की न केवल चेतन इच्छाओं को ज्ञात करता है बल्कि अचेतन इच्छाओं की शक्तियों का भी अनुमान लगाता है क्योंकि सेवार्थी तब तक वास्तविक रूप से चिकित्सा पद्धति में भाग नहीं लेगा जब तक उसकी चेतन व अचेतन इच्छायें समान नहीं होंगी।

2.2.10 अनुकूलन का अर्थ

सामाजिक भूमिका का कार्य उस प्रयास को सफल बनाना होता है जिसके द्वारा व्यक्ति सामाजिक परिस्थिति से समायोजन स्थापित करता है। लेकिन व्यक्ति अपनी आंतरिक एवं बाह्य उत्प्रेरकों एवं परिस्थितियों के प्रभाव के कारण कभी–कभी अपने भूमिका के सम्पादन में तनाव एवं दबाव का अनुभव करता है। इस तनाव का अनुभव व्यक्ति दो कारणों से करता है–

- व्यक्ति की स्थिति में परिवर्तन के अनुसार भूमिकाओं के अभ्यस्त तथा पूर्व तरीकों के द्वारा समस्या का निराकरण करने में अक्षमता।

टिप्पणी

- व्यक्तिगत अभिप्रेरणाओं एवं क्षमताओं के परिवर्तित होने की अवस्था में अपरिवर्तित भूमिकाओं को पूरा करने में व्यक्तिगत असन्तुलन।

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में सेवार्थी की अनुकूलन प्रविधियों की शक्तियों, क्षमताओं, प्रभावों आदि का महत्वपूर्ण स्थान होता है। सेवार्थी में अनुकूलन करने की शक्ति एवं क्षमता यह निश्चित करती है कि सेवार्थी अपने सामाजिक पर्यावरण से समायोजन करने में कहां तक सफल होगा। तनावपूर्ण स्थिति को वह कैसे सुलझाने का प्रयास करेगा तथा अपने प्रयत्नों को कैसे परिवर्तित करेगा। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि अनुकूलन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा कोई भी सेवार्थी अपनी समस्याओं के बारे में चिन्ता करते हुए उस समस्या से तादात्म स्थापित कर समस्या को सुलझाने का प्रयास करता है।

2.2.11 अनुकूलन के प्रकार

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ता सेवार्थी की समस्याओं को जान लेने के बाद सेवार्थी की समस्याओं के निराकरण हेतु दो प्रकार के प्रयास करता है। कार्यकर्ता सेवार्थी की आंतरिक शक्तियों को आलंबन एवं सम्बल प्रदान करके अनुकूलन को सम्भव बनाता है या फिर सामाजिक स्थिति में ही परिवर्तन करने का प्रयास करता है। सेवार्थी तनावपूर्ण स्थिति से अनुकूलन प्राप्त करने के लिए तीन प्रकार के प्रयास करता है–

- अनुकूलित, अभ्यस्त एवं पूर्व निश्चित समस्या समाधान के तरीकों के उपयोग द्वारा।
- सेवार्थी संघर्ष, समानता या कल्पना की उड़ान के द्वारा तनाव से अनुकूलन प्राप्त करता है।
- सेवार्थी अनुकूलन प्राप्त करने हेतु उदासीनता, मानसिक उन्मुखता, प्रत्याहार, अगतिमानता या अतिसक्रियता का सहारा लेता है।

सेवार्थी सबसे पहले तनावपूर्ण स्थिति एवं समस्या समाधान हेतु पूर्व में अपनाये गये तरीकों एवं अभ्यस्त प्रविधियों के द्वारा करने का प्रयास करता है। यदि फिर भी उसकी समस्या का समाधान नहीं होता है तो वह उस समस्या से प्रतिगमन करने का प्रयत्न करता है। इस परिस्थिति में वह या तो संघर्ष करता है या अपने आप को उस स्थिति के अनुकूल बनाने का प्रयत्न करता है या अपने आप को उस समस्या से दूर करने का प्रयास करता है। यदि इन सभी उपायों के द्वारा उसकी समस्या का समाधान नहीं होता है तो वह समस्या के प्रति उदासीन होकर मानसिक विकार के लक्षण उत्पन्न कर लेता है।

जब सेवार्थी को अपनी समस्या के समाधान के विषय में ज्ञात हो जाता है कि उसके द्वारा किये गये पूर्व तरीकों के द्वारा समस्या को किसी न किसी सीमा तक अवश्य निराकृत किया जा सकता है तो उसे तनावपूर्ण स्थिति का अधिक आभास नहीं होता है। वह अपने द्वारा अपनाये गये तरीकों के द्वारा तनावपूर्ण स्थिति को कष्टकर होने से बचाता है। सेवार्थी अपने पूर्व निश्चित अनुकूलन के तरीकों में परिवर्तन की मांग को अधिक प्रत्यारोधों के साथ नकार देता है। सेवार्थी की यह धारणा होती है कि वह अपने सन्तुलन के जिन तरीकों द्वारा प्राप्त करने में सफल हुआ है उनमें परिवर्तन लाने की किसी प्रकार की आवश्यकता नहीं हैं। अतः सेवार्थी अपने द्वारा अपनाये गये अभ्यस्त अनुकूलन के लिये तथा तनावपूर्ण स्थिति से निपटने के लिये सुरक्षात्मक प्रयास

टिप्पणी

करता है। सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ता यदि इनमें परिवर्तन करना चाहता है तो उसे बहुत ही अधिक सहयोगिक संबंध का विकास करना चाहिए। जब सेवार्थी के द्वारा अपनाये गये पूर्व तरीके समस्या के समाधान में प्रभावी सिद्ध नहीं होते हैं तो सेवार्थी संघर्ष, समस्या या उड़ान का सहारा लेता है। लेकिन ये उपरोक्त तरीके सेवार्थी को स्वतः बिना किसी प्रयास के प्राप्त नहीं होते हैं। इनका संबंध सेवार्थी के द्वारा किये गये पूर्व के प्रयासों से होता है। जिस प्रकार से सेवार्थी पूर्व घटनाओं का सामना करता है वही तरीके उसे अधिक रूचिकर एवं उपयुक्त जान पड़ते हैं। इस प्रकार सेवार्थी अपनी समस्या के साथ अनुकूलन हेतु पूर्व में किये गये प्रयासों का सहारा लेता है।

2.2.12 अनुकूलन की प्रक्रिया

अनुकूलन की प्रक्रिया जब व्यक्ति जन्म लेता है तभी से प्रारम्भ हो जाती है। जब व्यक्ति का जन्म होता है तब वह एक अबोध बालक होता है जो दो वर्ष की अवस्था में अपने माता–पिता को ही सर्वशक्तिमान समझता है। बालक जब अपने माता–पिता को सर्वशक्तिमान समझता है जिसके कारण वह अपने आप को अपने माता–पिता जैसा बनाने का प्रयास करता है। लेकिन बालक जब बड़ा होने लगता है तब उसके कार्यों के साथ पैतृक प्रत्याशायें संलग्न हो जाती हैं। उदाहरण के लिए, बिस्तर पर पेशाब न करना, वस्तुओं को ध्वंस न करना तथा आशा के अनुकूल व्यवहार करना इत्यादि। अतः बालक के माता–पिता द्वारा बालक को कहे गये निषेधात्मक या नकारात्मक वाक्य उसके लिये बाधक शक्ति का कार्य करते हैं। माता–पिता के इन निषेधात्मक या नकारात्मक शब्द का स्वरूप चाहे मौखिक हो, चाहे शारीरिक दण्ड के द्वारा हो या मौन रूप से चिन्ता के रूप में हो, इसके कारण बालक अपनी समाजीकरण की प्रक्रिया में बाह्य नियंत्रण एवं रुकावट का अनुभव करता है। जिसके कारण बालक में निराशा के लक्षण उत्पन्न होते हैं। बालक इस निराशा के प्रति क्रोध, आक्रामक प्रवृत्ति या विरोध द्वारा प्रत्युत्तर करता है। बालक संघर्ष प्रधान तत्व के रूप में अनुकूलन प्रक्रिया में कार्य करेगा या सामान्य व्यक्तिकरण के रूप में प्रकट होगा, यह इस बात पर निर्भर करता है कि बालक के परिवार की परिस्थिति किस प्रकार की है। कहने का तात्पर्य यह है कि बालक के परिवार की स्थिति जैसी होगी वह उसी के अनुरूप किसी समस्या से अनुकूलन कर पाते हैं या अनुकूलन नहीं कर पाते हैं। हमारे समाज में प्रायः विरोध या संघर्ष की प्रधान भूमिका को विद्यालय में जाने के पहले ही दमित कर दिया जाता है। परन्तु बालक अन्य पैतृक मूल्यों का विकास कर लेता है जिसके द्वारा विरोधात्मक प्रतिउत्तरों को नियंत्रित करने का प्रयत्न करता है। लेकिन जब बालक के साथ बाह्य तनाव या भय उत्पन्न होता है तो वह पुनः विरोध विकसित करता है और यदि बालक को सामान्य अनुभव प्राप्त नहीं होता है तो भविष्य में वह बाह्य नियंत्रण को विरोधी मान लेता है और सम्पूर्ण संबंधित सामाजिक पर्यावरण को घृणा की दृष्टि से देखता है। इस अवस्था में बालक के अन्दर विरोध की प्रवृत्ति एक स्वाभाविक लेकिन अनौचित तरीके का विकास अनुकूलन के लिए उत्पन्न हो जाता है। बालक में इस प्रकार की प्रवृत्ति का विकास केवल उन्हीं परिवारों में होता है जिन परिवारों में पहले से व्याधिकीय प्रवृत्ति उपस्थित रहती है। सामान्य परिवारों के माता–पिता बालक में विरोध की प्रवृत्ति का दमन सांस्कृतिक मूल्यों के आधार पर करते हैं। इसमें बालक के अन्दर सांस्कृतिक मूल्यों का विकास किया जाता है जिससे बालक विरोध की प्रवृत्ति से अनुकूलन करना सीख जाता है।

समस्या से दूर भागने की प्रवृत्ति के कारणों का पता पूर्व अनुभवों के बारे में जानकारी करके लगाया जा सकता है। इस तरह के तरीकों का प्रयोग उस समय किया जाता है जब व्यक्तित्व की अन्तर्निहित शक्तियों में सघर्ष होता है। एक तरफ अचेतन पूर्ण शक्ति के साथ चेतन में आने का प्रयत्न करता है तो दूसरी तरफ चेतन इस विचार को प्रकट होने से रोकता है। जब बालक क्रोध, उग्र मूल प्रवृत्तियों को व्यक्त करने में अपने को अयोग्य पाता है तब वह इन प्रवृत्तियों से उत्पन्न होने वाले कष्ट से दूर भागने की कोशिश करता है।

इस प्रकार की मनोवृत्ति का जन्म उस अवस्था में भी हो जाता है जब बालक को समरूप संबंधों में असफलता प्राप्त हो जाती है। बालक की प्रारम्भिक आवश्यकतायें जब माता–पिता द्वारा उचित प्रकार से पूर्ण नहीं की जाती हैं या आवश्यकता से अधिक बालक की देख–रेख की जाती है तो वह परिस्थिति का सामना करने के बजाय परिस्थिति से भागने लगता है।

अतः हम कह सकते हैं कि अनुकूलन में बालक अपनी असफलताओं के साथ तादात्म स्थापित करने का प्रयास करता है और जब उनसे तादात्म स्थापित नहीं कर पाता है तो उसमें मानसिक रोग के लक्षण उत्पन्न होने लगते हैं।

अपनी प्रगति जांचिए

1. लिंटन ने सामाजिक भूमिका के कौन–से दो भेद स्वीकार किए हैं?
   (क) आरोपित और अर्जित (ख) संबंधात्मक और गैर–संबंधात्मक
   (ग) मूल्य और व्यवहार (घ) संवहन और निर्वहन
2. सामाजिक भूमिका की कौन–सी विशेषताएं होती हैं?
   (क) सामाजिक भूमिकाएं यथार्थ से संबंधित होती हैं।
   (ख) सामाजिक भूमिकाएं एक से अधिक हो सकती हैं।
   (ग) (क) और (ख) दोनों
   (घ) उपर्युक्त दोनों में से कोई नहीं

2.3 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के अनुप्रयोग के रूप में समाज कार्य के सामान्य सिद्धांत

समाज कार्य एक व्यावसायिक सेवा है, जिसमें समाज कार्य विषय में शिक्षित व प्रशिक्षित व्यक्ति के द्वारा समस्या से ग्रसित व्यक्ति की सहायता के लिये कार्य किया जाता है। वह व्यक्ति जो समाज कार्य विषय में प्रशिक्षित होता है उसे सामाजिक कार्यकर्ता कहा जाता है। इसी सामाजिक कार्यकर्ता के द्वारा अभ्यास के दौरान बेहतर सेवा प्रदान करने का प्रयास किया जाता है तथा यह भी ध्यान रखा जाता है कि सेवा प्रदान करने की विधियों में एकरूपता बनी रहे। इसके लिये जरूरी है कि वैज्ञानिक ज्ञान पर आधारित सार्वभौमिक सिद्धांतों का पालन किया जाय। समाज कार्य व्यवसाय के कुछ आधारभूत सिद्धांत हैं जिनका पालन कार्यकर्ताओं के द्वारा किया जाता है। समाज कार्य की प्रणालियों में सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य प्राथमिक प्रणाली के रूप

टिप्पणी

में कार्य करती है। इस प्रणाली के भी कुछ सिद्धांत हैं जिनका अनुपालन सामाजिक वैयक्तिक कार्यकर्ता अपने अभ्यास के दौरान करता है। सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के सिद्धांतों की व्याख्या करने से पहले सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की कुछ परिभाषाओं का अवलोकन करना आवश्यक प्रतीत होता है जिससे इसके सिद्धांतों को समझने में आसानी होगी।

स्थिवन वीवर्स ने सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य को परिभाषित करते हुए कहा है कि, ''सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य एक कला है जिसमें मानव संबंधों के ज्ञान तथा संबंधों की निपुणता का व्यक्ति की क्षमताओं तथा समुदाय के साधनों को क्रियाशील बनाने के लिए उपयोग किया जाता है जिससे अन्य लोगों अथवा पर्यावरण के साथ व्यवस्था करने में समर्थ हो सके।'' इस परिभाषा में वैयक्तिक कार्य का उद्देश्य सहायता करना है जिससे व्यक्ति समस्याओं से समायोजन कर सके। सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य व्यक्तियों को सहायता प्रदान करता है तथा समस्या का समाधान करते हुए आवश्यकताओं की पूर्ति भी करता है। कार्यकर्ता को मानव संबंधों का ज्ञान होना आवश्यक होता है जिसके लिये वह सर्वप्रथम सेवार्थी से संबंध स्थापित करता है। अतः संबंध ही वह माध्यम होता है जिसके आधार पर व्यक्ति की समस्याओं की खोज की जा सकती है। इसी संबंध को स्थापित करने के लिए सिद्धांतों का सहारा लिया जाता है। इस प्रकार सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में संबंध स्थापित करने के लिये जिन सिद्धांतों का सहारा लिया जाता है वे सिद्धांत अग्रलिखित हैं–

1. वैयक्तिकरण का सिद्धांत।
2. भावनाओं के उद्देश्यपूर्ण प्रगटन का सिद्धांत।
3. नियंत्रित सांवेगिक अन्तर्भावितता का सिद्धांत
4. स्वीकृति का सिद्धांत
5. अनिर्णायक मनोवृत्ति का सिद्धांत
6. आत्मनिश्चय का सिद्धांत
7. गोपनीयता का सिद्धांत

इन सिद्धांतों की व्याख्या हम निम्नलिखित रूप में करेंगे–

2.3.1 वैयक्तिकरण का सिद्धांत

यह सिद्धांत प्रत्येक व्यक्ति के अन्तर्गत निहित विशेषताओं को समझने पर विशेष बल देता है। वैयक्तिकरण के सिद्धांत के बारे में ने बर्जिनिया राबिन्सन ने कहा है कि यह सिद्धांत वैयक्तिक सामाजिक सेवा कार्य का महत्वपूर्ण सिद्धांत है। समाज में रहने वाले मानव दिखने में लगभग एक दूसरे के समान होते हैं लेकिन शारीरिक, मानसिक, सांवेगिक इत्यादि क्षमताओं में भिन्न होते हैं। जब तक सामाजिक वैयक्तिक कार्यकर्ता इन विशेषताओं को अलग–अलग रूप से नहीं समझेगा तब तक वह सेवार्थी की समस्या का समाधान नहीं कर पायेगा और न ही वह उचित समायोजन स्थापित कर पायेगा। समाज में रहने वाले प्रत्येक व्यक्ति का यह अधिकार है कि उसको एक व्यक्ति के रूप में मान्यता दी जाये न कि मानव प्राणी के रूप में। व्यक्ति में अन्तर्निहित भिन्नता को भी महत्व प्रदान किया जाना चाहिए। वैयक्तिकरण का सिद्धांत भी इसी मूल पर

टिप्पणी

आधारित है कि प्रत्येक व्यक्ति की अपनी विशेषतायें होती हैं जिसे प्रत्येक व्यक्ति उसकी गरिमा को जैसा है वैसा ही देखे व उसको उसी रूप में अपनाये।

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य सेवार्थी को केन्द्र में रखकर कार्य करता है। यह व्यक्ति विशेष की समस्या पर आधारित होता है। हम जानते हैं कि निदान व उपचार का कार्य अलग–अलग किया जाता है। जब तक समस्या के कारणों का पता न चल जाये तब तक हम उसका उपचार नहीं कर सकते हैं। इसलिये निदान एवं उपचार के लिये अलग–अलग सेवार्थियों के लिये अलग–अलग योजनायें बनायी जाती हैं। प्रत्येक सेवार्थी से अलग–अलग संबंध स्थापित किये जाते हैं। सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में प्रत्येक सेवार्थी एक व्यक्ति है तथा प्रत्येक सेवार्थी की समस्या एक विशिष्ट समस्या है। इसलिये सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य प्रत्येक सेवार्थी की परिस्थितियों के अनुरूप होनी चाहिए। हम जानते हैं कि समाज कार्य में सामान्य मानव प्रकृति की विशेषताओं का ज्ञान प्रदान किया जाता है एवं साथ ही साथ सामान्य मानव व्यवहारों के तरीकों को भी बताया जाता है। लेकिन समाज कार्य वैयक्तिकता पर विशेष जोर देता है। अतः सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ता को समाज कार्य द्वारा दिये गये ज्ञान से सेवार्थी के विषयगत तथा वस्तुगत विचारों, भावनाओं, समस्याओं तथा कठिनाइयों को समझने में सहायता प्राप्त होती है

वैयक्तिकरण ही व्यक्ति के वास्तविक अर्थ का संवाहक है। इसी के द्वारा व्यक्ति का वास्तविक अर्थ दृष्टिगोचर होता है। व्यक्तियों में प्रकृति उनके व्यक्तित्व पर निर्भर करती है। प्रत्येक व्यक्ति अपने वंशानुक्रम, पर्यावरण, अन्तर्निहित ज्ञानात्मक क्षमताओं, योग्यताओं इत्यादि में अलग–अलग होता है। प्रत्येक व्यक्तियों में उनके अलग–अलग अनुभव एवं बाह्य तथा आंतरिक उत्तेजक होते हैं जो उनके संवेग एवं स्मृतियों, विचारों, भावनाओं तथा व्यवहार को प्रभावित करते हैं। प्रत्येक व्यक्तियों में अन्तर्निहित शक्तियां संगठित होकर उन्हें कार्य करने के लिये निर्देशित करती हैं जिसके कारण व्यक्ति एक दूसरे से भिन्न दिखाई देते हैं।

अतः उपरोक्त विवरण के आधार पर हम कह सकते हैं कि व्यक्ति–व्यक्ति में भिन्नता होती है। इसी के आधार पर प्रत्येक सेवार्थी की अपनी अलग–अलग विशेषतायें होती हैं। अतः सेवार्थी की आवश्यकतायें भी दूसरे सेवार्थियों से भिन्न होती हैं। इस प्रकार सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में भिन्नता का होना आवश्यक है जिससे व्यक्ति विशेष की सहायता सम्भव हो सके और सेवार्थी अपनी योग्यताओं और स्रोतों को समस्या के निराकरण के लिए उपयोग में ला सके।

व्यक्ति की समस्यायें उसके जीवन को असमायोजित कर देती हैं जिसकी वजह से व्यक्ति बहुत चिन्ताग्रस्त हो जाता है। वह अपनी समस्याओं के लिए एक बेहतर सलाह दाता की खोज करता है। इसके लिए सेवार्थी संस्था में जाता है। संस्था में सेवार्थी सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ता का पूर्ण ध्यान, सहायता एवं एकान्तता चाहता है। सेवार्थी चाहता है कि सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ता उसकी भावनाओं का सम्मान करे, उसकी भावनाओं को समझे एवं वर्तमान में समस्याओं के संदर्भ में सहायता प्रदान करे। यहीं पर सेवार्थी के साथ वैयक्तिकरण के सिद्धांत का अभ्यास करते हुए सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ता द्वारा सेवार्थी को वैयक्तिकरण का आभास कराया जाता है जिसके आधार पर सेवार्थी के व्यवहार में सकारात्मक परिवर्तन देखने

टिप्पणी

को मिलता है। ऐसा इसलिये किया जाता है कि सेवार्थी को विश्वास हो जाये कि उसकी बातें कर्ता द्वारा मनोयोग से सुनी जा रही हैं तथा उसका सम्मान किया जा रहा है। इसके विपरीत सेवार्थी यदि यह अनुभव करता है कि कार्यकर्ता उसकी समस्या पर पूर्ण ध्यान नहीं दे रहा है तो वह अपने तथ्यों को छिपाने लगता है एवं विषयागत बातों को स्पष्ट नहीं बताता है और महत्वपूर्ण बातों पर एक तरह से पर्दा डाल देता है। केवल सेवार्थी पर पूर्ण ध्यान एवं सहयोग द्वारा ही उसे उद्देश्यीय संबंध में भाग लेने हेतु उत्साहित किया जा सकता है क्योंकि सेवार्थी को लगने लगता है कि उसकी बातों की कद्र हो रही है तथा उसके सम्मान को कोई नुकसान नहीं हो रहा है।

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में वैयक्तिकरण के सिद्धांत का उपयोग मनोवृत्ति, ज्ञान एवं योग्यता पर आधारित होता है। यदि सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य कर्ता में झुकाव एवं पूर्वाग्रह से स्वतंत्र हो, मानव व्यवहार का ज्ञान हो, सुनने एवं अवलोकन करने की क्षमता हो, सेवार्थी के प्रगति के साथ–साथ कार्य करने की योग्यता हो, सेवार्थी की भावनाओं को समझने की योग्यता हो, परिस्थिति के परिप्रेक्ष्य को बनाये रखने की योग्यता हो तो ही वह वैयक्तिकरण के सिद्धांत का उपयोग सफलतापूर्वक कर सकता है।

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में वैयक्तिकरण के सिद्धांत के साधनों में विस्तार से विचार–विमर्श, साक्षात्कार की गोपनीयता, साक्षात्कार के समय की पाबंदी, साक्षात्कार की तैयारी, सेवार्थी को प्रक्रिया में सम्मिलित करना, नमनीयता इत्यादि महत्वपूर्ण हैं। यदि इनका अनुपालन सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ता करता है तो निश्चित ही वह एक सफल कार्यकर्ता के रूप में कार्य कर सकेगा।

2.3.2 भावनाओं के उद्देश्यपूर्ण प्रगटन का सिद्धांत

जैसा कि इस सिद्धांत के नाम से ही स्पष्ट है कि सेवार्थी की भावनाओं को प्रकट कराना जो कि उद्देश्य की पूर्ति के लिए हो। जब सेवार्थी अपनी समस्याओं को लेकर संस्था में आता है तो वह चाहता है कि उसकी समस्या के बारे में कार्यकर्ता गहन अध्ययन कर कारणों का पता लगाये जिससे समस्या का निदान हो सके और वह पुनः समायोजित जीवन यापन कर सके। यहां पर यह आवश्यक है कि सेवार्थी की भावनायें निर्बाध रूप से प्रकट हों। क्योंकि यदि सेवार्थी अपनी समस्याओं के बारे में अन्तर्निहित भावनाओं का प्रगटन नहीं करेगा तो समस्या के बारे में जानकारी बहुत कठिन हो जायेगी। यहां यह देख लेना आवश्यक है कि भावनाओं का प्रगटन उद्देश्यपूर्ण होना चाहिए।

हम जानते हैं कि मानव एक विचारवान प्राणी है जो बहुत ही ज्ञानवान एवं कार्य करने की इच्छा एवं अनिच्छा दोनों ही अपने मन में रखता है। व्यक्ति में कुछ ऐसी विशेषतायें होती हैं जो पशुवत होती हैं, जो समय के अनुसार प्रकट होती हैं। यदि व्यक्ति इन पर नियंत्रण प्राप्त कर लेता है तो वह एक सामान्य जीवन–यापन कर सकता है। इसके विपरीत यदि वह इन पर नियंत्रण नहीं कर पाता है तो उसमें कुसमायोजन की समस्या उत्पन्न हो जाती है। इन्हीं कुसमायोजन की समस्या के निदान के लिये सेवार्थी संस्था का सहारा लेता है।

टिप्पणी

सेवार्थी की मनोवैज्ञानिक आवश्यकतायें भी होती हैं। इनमें प्रेम, सुरक्षा, प्रस्थिति, भावनाओं को स्पष्टीकरण, उपलब्धि, आत्म–निर्भरता, आवश्यकतायें अन्तर्निहित हैं। मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं में अनुभवों में भाग लेना, समूह की स्वीकृति प्राप्त करना, समूह के तरीकों को व्यवहार का अंग बनाना इत्यादि आती हैं। यदि इन भावनाओं का उचित प्रगटन नहीं होता है तो सेवार्थी के मन में निराशा उत्पन्न होती है। चूंकि सभी निराशा की परिस्थितियां हानिकारक नहीं होती हैं क्योकि परिपक्वता के लिये निराशा का उत्पन्न होना आवश्यक होता है। जिसके आधार पर सेवार्थी समस्याओं से लड़ना सीखता है। परन्तु निराशा से हानिकारक मनोसुरक्षात्मक प्रतिक्रियायें होने लगती हैं जिसके फलस्वरूप असामान्य व्यवहार उत्पन्न होने लगते हैं।

भावनाओं के उद्देश्यपूर्ण प्रगटन का आशय सेवार्थी को अपनी भावनाओं के स्पष्टीकरण में पूरी आजादी प्रदान करना है। देखा जाता है कि नकारात्मक भावनाओं का प्रगटन व स्पष्टीकरण नहीं हो पाता है जिसके फलस्वरूप समस्या को समझना दुष्कर हो जाता है। अतः इस हेतु सामाजिक वैयक्तिक कार्यकर्ता सेवार्थी की बातों को पूरे ध्यान से सुनता है और वह सेवार्थी को उत्साहित नहीं करता है और न ही हतोत्साहित करता है। वह जहां आवश्यक होता है वहां बातचीत का स्वरूप परिवर्तित करने में सहायता करता है जिससे कि उपचारात्मक प्रक्रिया लाभप्रद सिद्ध हो सके। भावनाओं का प्रगटन न केवल स्वीकृति के लिये आवश्यक है बल्कि चिकित्सा, संबंध, सहयोग, संस्था के स्रोतों के लिये भी आवश्यक होता है।

सेवार्थी की भावनाओं का स्पष्ट होना आवश्यक है जिसके आधार पर सेवार्थी की सहायता की जा सके। भावनाओं के प्रगटन के लिये सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ता साक्षात्कार प्रविधि का उपयोग करता है। इस प्रक्रिया के अग्रलिखित उद्देश्य होते हैं–

- सेवार्थी के तनाव एवं दबाव को कम करना।
- सेवार्थी को समस्या समझने में उसकी सहायता करना।
- सेवार्थी को सकारात्मक एवं नकारात्मक कार्यों के लिए चिन्ता मुक्त करना।
- सेवार्थी को समस्या एवं उससे संबंधित सभी प्रकार के अध्ययन तथा निदान एवं उपचार के बारे में समझाना।
- समस्या के प्रति सेवार्थी के दृष्टिकोण के बारे में जानकारी करना।
- सेवार्थी के मनोवैज्ञानिक आलम्बन हेतु उसके अहम् के बारे में जानकारी करना।
- सेवार्थी की शक्तियों एवं कमियों के बारे में ज्ञान प्राप्त करना।
- सेवार्थी से मनोवैज्ञानिक संबंध स्थापित करना।
- सेवार्थी की नकारात्मक भावनाओं की जानकारी करना तथा सेवार्थी को इसके बारे में बताना जिससे उसके ज्ञान में वृद्धि की जा सके।

सेवार्थी के बारे में सूक्ष्म से सूक्ष्म जानकारी प्राप्त करना तथा उसके अन्तःकरण में प्रवेश कर उससे घनिष्ट संबंध स्थापित करना, कार्यकर्ता का प्रमुख उद्देश्य होता है। चूंकि संबंध स्थापित करना बहुत ही कठिन कार्य है लेकिन फिर भी ऐसी परिस्थिति का निर्माण एवं विश्वास कार्यकर्ता द्वारा उत्पन्न किया जाता है जिससे सेवार्थी कार्यकर्ता से घनिष्ट संबंध स्थापित हो जाता है।

टिप्पणी

उपरोक्त विवरण के आधार पर कहा जा सकता है कि भावनाओं के प्रकट होने पर ही समस्या के बारे में जानकारी एकत्र की जा सकती है तथा समस्या समाधान के लिए उपाय निश्चित किये जा सकते हैं। यदि सेवार्थी को किसी भी स्तर पर भावनाओं को स्पष्ट करने के अवसर प्राप्त नहीं होगें तो वह किसी भी स्तर पर समस्या समाधान में भाग नहीं लेगा एवं समस्या को नहीं समझ पायेगा। भावनाओं का स्पष्ट ज्ञान समस्या के निदान में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। सेवार्थी के व्यक्तित्व की विशेषता के आधार पर वैयक्तिक कार्यकर्ता उसकी समस्या की प्रकृति को निश्चित करता है। इन प्रक्रियाओं में सेवार्थी की उसके अपने जीवन के प्रति प्रतिक्रियायें, परिवर्तन की इच्छा, समाधान करने की लालसा तथा समस्या समाधान करने की क्षमता इत्यादि प्रमुख हैं। भावनाओं का प्रगटन स्वयं में चिकित्सात्मक प्रक्रिया है क्योंकि जब सेवार्थी अपनी समस्या के प्रति अपनी भावनाओं को स्पष्ट करता है तो उसे कुछ समय के लिए आराम मिलता है। इसलिये भावनाओं के प्रगटन को चिकित्सा का एक माध्यम माना गया है। इसमें लेकिन, किन्तु एवं परन्तु का स्थान नहीं रहता है। सेवार्थी स्वयं समस्या को स्पष्ट रूप से देखने लगता है तथा समस्या समाधान हेतु स्वयं प्रयास करने लगता है।

2.3.3 नियंत्रित संवेगात्मक संबंधों का सिद्धांत

विचारों का आदान–प्रदान द्विमुखी प्रक्रिया है। विचारों के आदान–प्रदान में जब एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से कुछ कहता है तो उसके बदले में वह दूसरे व्यक्ति से प्रत्युत्तर की आशा करता है। यदि दूसरा व्यक्ति कोई प्रतिउत्तर प्रकट नहीं करता है तो संचार में नीरसता उत्पन्न हो जाती है। परिणामस्वरूप संचार प्रक्रिया कार्य नहीं करती है। संचार प्रक्रिया की विषयवस्तु को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है–केवल विचार, केवल भावनाएं तथा विचार एवं भावनायें दोनों। जब कोई व्यक्ति किसी व्यक्ति से किसी स्थान का पता पूछता है तो वह व्यक्ति केवल संचार संप्रेषित कर रहा होता है। वह व्यक्ति केवल पता के बारे में जानकारी प्राप्त करना चाहता है तथा वास्तविक जानकारी की आशा करता है। वहीं यदि कोई व्यक्ति निकट संबंधी की मृत्यु पर किसी संबंधी से दुःख दर्द के बारे में बात करता है तो इसका आशय वह व्यक्ति अपनी भावनाओं को संप्रेषित कर रहा होता है।

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में संचार की विषयवस्तु में विचार एवं भावनाओं का सम्मिश्रण होता है। इस विषयवस्तु की प्रकृति अनेक कारकों पर आधारित होती है, उदाहरणार्थ–सेवार्थी की समस्या, संस्था के कार्य, सेवार्थी की भावनायें एवं आवश्यकतायें, साक्षात्कार से सेवार्थी के परिवर्तित होने वाले विचार एवं अवधारणायें तथा सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ता के उद्देश्य इत्यादि। समस्या का अध्ययन, निदान एवं उपचार का स्वरूप भी विषयवस्तु की प्रकृति को निर्धारित करता है।

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ता को अपने विचार एवं भावना के संचार के लिये निपुणता की आवश्यकता होती है। जब विषयवस्तु तथ्यों पर आधारित होती है तो उस समय सेवार्थी की सहायता को प्रभावपूर्ण बनाने के लिये सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ता को संस्था के तरीकों, नीतियों तथा समुदाय में उपलब्ध अन्य स्रोतों का ज्ञान होना आवश्यक है। जब समस्या भावना प्रधान होती है और सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ता सेवार्थी को सहायता प्रदान करना चाहता है तो ऐसी स्थिति में उसे

सेवार्थी की भावनाओं के प्रत्युत्तर में निपुण होना चाहिए। सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में सांवेगिक भावनाओं की निपुणता सबसे महत्वपूर्ण निपुणता है।

मानव के व्यवहार को समझना बहुत ही दुरूहपूर्ण कार्य है। मानव व्यवहार को समझने के लिये विभिन्न विज्ञानों की सहायता से किया जाता है जिनमें मनोविज्ञान, मनोविज्ञान विकार विज्ञान एवं अन्य सामाजिक विज्ञान प्रमुख हैं। आत्म ज्ञान एवं व्यावसायिक अनुभव मानव व्यवहार को समझने में सहायक होते हैं। सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ता को सेवार्थी की आवश्यकताओं का ज्ञान, प्रतिक्रियाओं के तरीके, विपत्ति के समय मनोरचनाओं के उपयोग के तरीकों के बारे में जानकारी होना आवश्यक है। वह इनके आधार पर सेवार्थी की विशेषताओं को परखता है एवं उनको समझने का प्रयास करता है। एक अनुभव एक सेवार्थी के लिये दूसरा आशय प्रकट कर सकता है जबकि दूसरा सेवार्थी अन्य प्रकार से अनुभव कर सकता है। सेवार्थी की भावनाएं तथा उन भावनाओं के प्रति सेवार्थी के दृष्टिकोण सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ता के लिये जानना आवश्यक होता है। वैयक्तिकरण से भी सेवार्थी की समस्या तथा उसके सांवेगिक और पर्यावरणीय कारकों में संबंध का ज्ञान होता है। सामाजिक वैयक्तिक कार्यकर्ता की भावनाओं के अर्थ को जानने के लिये निपुणता विकसित करनी चाहिए। भावनाओं के स्पष्टीकरण का तरीका बहुत हद तक समस्या के अर्थ को प्रकट करता है।

अतः हम कह सकते हैं कि सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ता को चाहिए की वह सेवार्थी की भावनाओं को बहुत बारीकी से समझे और उन भावनाओं के प्रति सेवार्थी का जो प्रतिउत्तर हो उसका आधार ज्ञान और व्यावसायिक उद्देश्य पर हो। सेवार्थी के प्रति सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ता को जो सहानुभूति हो वह एक व्यावसायिक और वास्तविक सहानुभूति हो और कार्यकर्ता की मनोवृत्तियां और प्रत्युत्तर उद्देश्यपूर्ण रूप से निर्मित हों।

2.3.4 स्वीकृति का सिद्धांत

स्वीकृति का तात्पर्य सेवार्थी से उसकी वर्तमान स्थिति के अनुसार व्यवहार किया जाये तथा उसकी परिस्थिति के अनुसार ही उसके विषय में कोई मत स्थापित किया जाये। स्वीकृति एक ऐसा शब्द है जिसका प्रयोग समाज कार्य में बहुतायत से किया जाता है। प्रत्येक समाज कार्यकर्ता इस शब्द के महत्व से अवगत होता है तथा सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में जहां पर कार्यकर्ता की सफलता संबंधों की प्रकृति पर आधारित होती है वहीं पर स्वीकृति के सिद्धांत का भी विशेष महत्व है। वास्तविकता तो यह है कि स्वीकृति शब्द की उचित परिभाषा अभी तक नहीं हो पायी है। इस शब्द के कई आशय हैं। जब किसी वस्तु के सन्दर्भ में स्वीकृति शब्द का उपयोग किया जाता है तो इसका अर्थ 'प्राप्त' करने से होता है। जब हम इसका प्रयोग बौद्धिक आशय के रूप में करते हैं तो इसका तात्पर्य वास्तविकता को जानने से होता है। जब इसका प्रयोग व्यक्ति के संदर्भ में किया जाता है तो इसका आशय व्यक्ति का सम्मान करते हुए उससे संबंध स्थापित करना होता है।

समाज कार्य में स्वीकृति शब्द की परिभाषा कहीं पर भी स्पष्ट रूप से नहीं प्रदान की गई है। कुछ सामाजिक विद्वानों के द्वारा इसका अर्थ स्पष्ट किया गया है जो अग्रलिखित वर्णित किया जा रहा है–

टिप्पणी

रेनोल्ड, वेरथा सी के अनुसार, 'जब हम सेवार्थी को जैसा है वैसा समझ लेते हैं तथा मानव साथी के रूप में उसका आदर करते हैं तो हम सेवार्थी को स्वीकृति प्रदान करते हैं।'

कुथ, हेरथा के अनुसार, 'सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य व्यक्ति को जैसा है वैसा स्वीकार करता है, वह बिना पूर्वाग्रह के स्वीकृति देता है। यह मित्रतावश नहीं बल्कि व्यावसायिक उद्देश्य के कारण ऐसा करता है। वह सहानुभूति, स्वीकृति, प्रेम इत्यादि प्रदर्शित करता है।'

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ता सेवार्थी को जैसा है वैसा ही जानने का प्रयास करता है, वही रूप देखना चाहता है तथा उन्हीं गुणों को समझना चाहता है। इसी संदर्भ में कार्यकर्ता सेवार्थी से संबंध स्थापित करता है। इसका आशय यह है कि सेवार्थी में वास्तविकता का चाहें जितना विघटन हो, चाहें जितना प्रत्यक्षीकरण से उसका प्रत्यक्षीकरण अलग हो, उसके मूल्यों में कितना भी भिन्नता क्यों न हो, हम उसे वैसा ही स्वीकार करते हैं जैसा वह अपने आप को प्रदर्शित करता है। इसका आशय यह नहीं है कि सेवार्थी में परिवर्तन की आशा नहीं रखते हैं बल्कि इसका आशय यह है कि सहायता की कला स्वीकृति के तत्व पर आधारित है और वहीं से शुरू की जाय तो विशेष लाभकारी सिद्ध होगी। समाज कार्य का पूर्ण विश्वास है कि सेवार्थी के स्तर से ही कार्य शुरू होना चाहिए जिससे सफलता प्रत्येक स्तर पर मिलती रहे। इस आशय में स्वीकृति व्यावसायिक मनोवृत्ति या जीवन का एक गुण या एक सिद्धांत है।

स्वीकृति के अंगों में आदर करना, प्रेम करना चिकित्सात्मक समझ, प्रत्यक्षीकरण, सहायता तथा प्राप्त करना इत्यादि आते हैं। स्वीकृति क्रिया के तीन प्रकार हैं जिनमें प्रत्यक्षीकरण, उपचारात्मक समझ तथा अभि–स्वीकृति है। इसके उद्देश्यों में मानव व्यवहार के रूप में मूलभूत क्षमताओं में विश्वास करना तथा उनका आदर करना, कठिनाई के समय सहायता करना, दूसरे व्यक्ति के सुख में वृद्धि करना, रोगमुक्त होने में सहायता करना तथा जीवन दशाओं में पुनः नियंत्रण प्राप्त करने में व्यक्ति की सहायता करना इत्यादि प्रमुख हैं।

इस प्रकार स्पष्टतः कहा जा सकता है कि सेवार्थी की शक्तियों और दुर्बलताओं, उसके अनुरूप एवं प्रतिकूल गुणों, उसकी सकारात्मक एवं नकारात्मक भावनाओं और उसकी रचनात्मक एवं विनाशकारी मनोवृत्तियों और व्यवहार के अनुसार ही उससे व्यवहार करना चाहिए। लेकिन सेवार्थी से व्यवहार करते समय उसके आंतरिक महत्व एवं वैयक्तिक मूल्य का ध्यान रखा जाता है।

2.3.5 अनिर्णायक मनोवृत्ति का सिद्धांत

अनिर्णायक मनोवृत्ति सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का एक विशेष गुण है। सामाजिक वैयक्तिक कार्यकर्ता अपनी प्रक्रिया में अनिर्णायक मनोवृत्ति को अपनाता है। इस मनोवृत्ति का आधार सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का दर्शन है जो यह मानता है कि व्यक्ति की अपनी समस्या उत्पन्न करने में उसका कोई दोष नहीं है बल्कि वे परिस्थितियां उत्तरदायी हैं जिनसे वह समायोजन स्थापित नहीं कर पाया। यह व्यक्ति की मनोवृत्ति, स्तर तथा क्रिया–प्रतिक्रिया के कार्यों को महत्व प्रदान करता है।

हम जानते हैं कि 'निर्णय' का आशय व्यक्ति को किसी कार्य के लिये उत्तरदायी या उसकी अज्ञानता को निश्चित करने से होता है। यह एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा

निश्चित किया जाता है कि प्रत्येक व्यक्ति उक्त कार्य के लिये स्वयं दोषी है अथवा उसने यह अपनाधपूर्ण कार्य नहीं किया है। उसी आधार पर उसे दोषी ठहराया जाता है। सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में निर्णय का यही उपरोक्त आशय लगाया जाता है। समस्या के कारक कोई भी हों, सेवार्थी की सहायता करने में यद्यपि उसकी असफलताओं तथा कमियों को जानना आवश्यक होता है। लेकिन इसमें सामाजिक वैयक्तिक कार्यकर्ता को निर्णय करने का कोई अधिकार नहीं होता है। निर्णय करने का अधिकार दूसरे अधिकारियों को होता है। समाज कार्य दर्शन, विश्वास, प्रेम, सहानुभूति तथा सहयोग पर आधारित है। इसका विश्वास है कि व्यक्ति के बारे में कोई निर्णय लेना अतार्किक एवं अव्यावहारिक है। अपराधी का अपमान करना या बहिष्कृत करना कोई बुद्धिमानी का कार्य नहीं है। वे भावनायें सहायक प्रक्रिया में बाधा पहुंचाती हैं तथा सेवार्थी आत्मग्लानि अनुभव करता है। समाज कार्य दण्ड के स्थान पर सहायता करने में विश्वास करता है।

सेवार्थी की सहायता करने, समुदाय के स्रोतों का उपयोग करने, आंतरिक क्षमताओं में समस्या निराकरण के लिये वृद्धि करने, उचित समायोजन प्राप्त करने, व्यक्तित्व का विकास एवं वृद्धि करने के लिये सामाजिक वैयक्तिक कार्य कर्ता को सेवार्थी तथा उसकी समस्या दोनों को समझना होता है। सेवार्थी की सहायता के लिये सामाजिक वैयक्तिक कार्यकर्ता सेवार्थी की समस्याओं के कारणों के बारे में जानना आवश्यक होता है। इस प्रक्रिया में सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ता सेवार्थी पर न तो दोषारोपण करता है और न ही उसे अपराधी बताता है तथा न ही उसे समस्या उत्पन्न करने का कारक निश्चित करता है।

अतः सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य कर्ता के लिये आवश्यक है कि उसकी मनोवृत्तियां सेवार्थी के प्रति अनिर्णायक हों। कहने का तात्पर्य है कि वह सेवार्थी के गुण–दोष निर्धारित करने और उसके व्यवहार की नैतिक रूप से आलोचना करने का प्रयास कभी नहीं करता है। कार्यकर्ता सेवार्थी की मनोवृत्तियों, आदर्शों या क्रियाओं का वास्तविक रूप से मूल्यांकन करता है। इस मूल्यांकन का आधार उसका ज्ञान और अनुभव है, नैतिक मानदण्ड नहीं। इस मूल्यांकन में समाज के वर्तमान एवं प्रचलित मूल्यों को भी सामने रखा जाता है लेकिन उसका उद्देश्य सेवार्थी को नैतिक रूप से दोषी ठहराकर उसकी निन्दा करना नहीं है।

2.3.6 आत्मनिश्चय का सिद्धांत

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का मौलिक सिद्धांत यह है कि सेवार्थी को अपनी समस्या को समझने, उसके निदान में शामिल होने और उसको अपनी रूचि के अनुरूप सुलझाने का पूरा अधिकार होना चाहिए। समाज कार्य विषय में यह धारणा है कि सेवार्थी में आत्म निश्चय करने की क्षमता अन्तर्निहित होती है। इसी अवधारणा के आधार पर सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ता सेवार्थी को अपना मार्ग निश्चित करने हेतु हमेशा प्रोत्साहित करता रहता है। सेवार्थी अपनी पूरी स्वतंत्रता के साथ सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में भाग लेता है तथा वह भाग लेने के लिये पूर्णतया स्वतंत्र होता है। सेवार्थी के अधिकारों एवं आवश्यकताओं को सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में महत्व प्रदान किया जाता है। कार्यकर्ता में सेवार्थी की आत्म निर्देशन क्षमता को उत्प्रेरित करता है तथा संस्था में उपलब्ध साधनों का ज्ञान कराता है। सेवार्थी की

टिप्पणी

सकारात्मक एवं रचनात्मक निर्णय शक्ति उसकी आत्म निश्चय की प्रक्रिया में सहायक होती है। संस्था के कार्य भी इस अधिकार को प्रभावित करते हैं।

सेवार्थी को इस बात का पूरा अधिकार होता है कि वह सहायता ले या न ले और अपनी इच्छा के विपरीत सहायता लेना या अपनी समस्या का समाधान अपनी रूचि के विपरीत करना स्वीकार न करे। आवश्यक है कि समस्या का जो भी समाधान किया जाए और सेवार्थी के विषय में जो भी निर्णय लिया जाये वह सेवार्थी का अपना निर्णय हो। समस्या के वास्तविक एवं स्थाई समाधान के लिए आवश्यक है कि सेवार्थी को इस बात का अवसर प्रदान किया जाये कि वह अपने अहम् का विकास कर सके और अपने जीवन की महत्वपूर्ण बातों के विषय में स्वयं स्वतंत्र होकर निर्णय कर सके। सेवार्थी की अहम् शक्ति का विकास और उसके आत्मनिश्चय में परस्पर संबंध होता है।

अतः उपरोक्त विवरण के आधार पर कहा जा सकता है कि यह सिद्धांत सेवार्थी को आत्म निर्णय लेने के लिये सहायता करता है तथा वह सहायता लेने के लिये स्वयं निश्चित करता है।

2.3.7 गोपनीयता का सिद्धांत

किसी भी व्यक्ति को अपनी गोपनीयता रखना उसका अपना अधिकार है। यह तथ्य प्रजातांत्रिक मूल्यों पर आधारित है। समाज कार्य भी प्रजातांत्रिक मूल्यों में विश्वास रखता है। इसमें व्यक्ति के द्वारा कही गई बातों की गोपनीयता को बनाये रखा जाता है। समाज कार्य मानव जीवन के विभिन्न पहलुओं में विभिन्न तरीकों द्वारा उपयोग में लाया जाता है। जीवन के बहुत से पहलू ऐसे होते हैं जिनके बारे में व्यक्ति बहुत ही गोपनीयता रखता है और जिससे बहुत घनिष्ठ संबंध होते हैं उसी को उन पहलुओं के बारे में बताता है। इस प्रकार गोपनीयता के सिद्धांत को व्यावसायिक आचार संहिता के रूप में तथा सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के संबंध के तत्व के रूप में देखा जा सकता है।

गोपनीयता का आशय सेवार्थी की उन गोपनीय सूचनाओं को जिनको वह सामाजिक कार्यकर्ता से बताता या कहता है, को गोपनीय रखने से है। यह सेवार्थी के मूल अधिकार से संबंधित है। यह सामाजिक वैयक्तिक कार्यकर्ता का उत्तरदायित्व है तथा सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का मूल आधार है। सेवार्थी जब किसी संस्था में आता है तो वह यह समझकर आता है कि उसे सामाजिक वैयक्तिक कार्यकर्ता से अनेक गोपनीय बातें बतानी होंगी लेकिन वह यह भी चाहता है कि दूसरे लोग उन बातों को न जान पायें क्योंकि ऐसा होने से उसकी बुराई होगी तथा वैयक्तिक भावनाओं को धक्का लगेगा। इसलिये सेवार्थी कार्यकर्ता को पहले कोई गोपनीय बातें नहीं बताता है लेकिन जब उसे कार्यकर्ता पर विश्वास हो जाता है कि यह व्यक्ति उसके द्वारा बताई गई गोपनीय बातों को अन्य व्यक्तियों से नहीं बतायेगा तब ही वह अपनी गोपनीय बातों के बारे में कार्यकर्ता को बताता है। वह यह निश्चित कर लेता है कि संस्था की सहायता प्राप्त करने के लिये इन गोपनीय सूचनाओं को बताना आवश्यक है तभी वह गोपनीय सूचनाओं को प्रकट करता है तथा आशा और विश्वास करता है कि उसके द्वारा बताई गई बातों को सहायक प्रक्रिया में संलग्न व्यक्तियों से अलग लोगों को ज्ञात नहीं होगी। वह किसी भी प्रकार से अपने सम्मान को ठेस नहीं लगने देना चाहता है।

गोपनीयता के अधिकार के अंतर्गत व्यक्ति को दो प्रकार के प्राकृतिक अधिकार प्राप्त हैं, प्रथम जीवन का अधिकार एवं द्वितीय वृद्धि व विकास करने का अधिकार। वृद्धि व विकास के अन्तर्गत–शरीर को स्वस्थ रखने का अधिकार, आवश्यक आवश्यकताओं जैसे भोजन, कपड़े, मकान बनाने का अधिकार, भविष्य सुखमय बनाने का अधिकार, सांवेगिक, सामाजिक व बौद्धिक विकास करने का अधिकार सम्मिलित हैं। ये अधिकार गोपनीयता के मूल तत्व हैं और जिनको सामाजिक वैयक्तिक कार्य कर्ता आवश्यक मानता है।

सामाजिक वैयक्तिक कार्यकर्ता के नैतिक उत्तरदायित्वों में तीन वर्ग होते हैं–

- नैसर्गिक गोपनीयता।
- प्रतिज्ञात्मक गोपनीयता।
- समझौतात्मक गोपनीयता।

नैसर्गिक गोपनीय तथ्यों को यदि बता दिया जाता है तो व्यक्ति निन्दा का पात्र बनता है तथा आत्मिक सम्मान को ठेस लगती है। इन तथ्यों के बारे में जानकारी संस्था के कर्मचारी के रूप में सामाजिक वैयक्तिक कार्यकर्ता को नहीं होती है बल्कि जब संबंध घनिष्ठ हो जाते हैं तभी सेवार्थी इनके बारे में कार्यकर्ता को बताता है और उसे अपना हितैषी समझने लगता है। इसलिये कार्य कर्ता इन बातों को गोपनीय रखता है।

प्रतिज्ञात्मक गोपनीयता में कार्यकर्ता गोपनीय बातों के बारे में जान लेने के पश्चात् सेवार्थी से इस बात का वादा करता है कि इन गोपनीय बातों को वह किसी के सामने नहीं बतायेगा।

समझौता गोपनीय तथ्य तभी स्पष्ट होते हैं जब सेवार्थी तथा कार्यकर्ता में गोपनीय तथ्यों के बारे में गोपनीय रखने का समझौता हो जाता है।

अतः उपरोक्त तथ्यों के आलोक में यह कहा जा सकता है कि गोपनीयता का सिद्धांत सेवार्थी एवं कार्यकर्ता को तथ्यों के बारे में गोपनीय रखने का उत्तरदायित्व प्रदान करते हैं जिससे उनके बीच विश्वास की परम्परा को बनाये रखने में सहायता मिलती है।

अपनी प्रगति जांचिए

3. सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में संबंध स्थापित करने के लिए कितने प्रकार के सिद्धांतों का सहारा लिया जाता है?

   (क) सात (ख) आठ

   (ग) नौ (घ) दस

4. वह कौन–सा सिद्धांत है जो प्रत्येक व्यक्ति के अंतर्गत निहित विशेषताओं को समझने पर विशेष बल देता है?

   (क) स्वीकृति का सिद्धांत (ख) वैयक्तिकरण का सिद्धांत

   (ग) आत्मनिश्चय का सिद्धांत (घ) गोपनीयता का सिद्धांत

टिप्पणी

2.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

1. (क)
2. (ग)
3. (क)
4. (ख)

2.5 सारांश

आधुनिक समाज में सामाजिक स्थिति एक प्राथमिक अवधारणा है। इसके अभाव में सामाजिक संरचना की संकल्पना नहीं की जा सकती है। इसके बारे में बीयरस्टेट लिखते हैं कि, ''समाज स्थितियों का एक जाल है।'' अतः इस दृष्टि से यह स्पष्ट होता है कि समाज व्यक्तियों का समूह नहीं बल्कि विभिन्न व्यक्तियों द्वारा जिन सामाजिक स्थितियों का निर्माण होता है उन्हीं का एक समग्र है। यहां यह भी भ्रांति नहीं पालना चाहिए कि समाज मात्र सामाजिक स्थिति का एक समग्र है। सामाजिक स्थिति एक ऐसा उपकरण है जिसे जाने बिना आधुनिक समाजशास्त्र को ठीक से नहीं समझा जा सकता है। सामाजिक स्थिति या हैसियत को कुछ विद्वानों नें 'रैंक आर्डर' कहा है। अतः जब हम स्तर की बात करते हैं तो उच्च या निम्न वर्ग का भाव प्रकट करते हैं। जिसके साथ प्रायः सम्मान या प्रतिष्ठा का भाव जुड़ा होता है। अन्य समाजशास्त्री सामाजिक स्थिति से पद या अवस्था का भाव व्यक्त करते हैं और उसके साथ कोई क्रम का भाव नहीं होता। इसमें हम वैवाहिक स्थिति, आयु स्थिति, यौन स्थिति, रिश्तेदारी स्थिति तथा सदस्यता स्थिति इत्यादि की बात करते हैं।

समाज कार्य में भी स्थिति का अवलोकन किया जाता है जिसमें व्यक्ति की समायोजनात्मक क्षमता के बारे में जानकारी प्राप्त की जाती है। वास्तव में देखा जाय तो सामाजिक प्रस्थिति व्यक्ति की प्रतिष्ठा को बढ़ाती है। जब कभी व्यक्ति अपनी सामाजिक स्थिति के अनुरूप सामाजिक मानदंडों का अनुपालन नहीं करता है तो वह समाज में अपने आपको असमायोजित महसूस करने लगता है। इसी असमायोजन की स्थिति के निराकरण के लिये व सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की सहायता लेता है।

वास्तव में सामाजिक स्थिति की उत्पत्ति का प्रश्न बहुत ही रोचक है। जे.एच. फिचर इस प्रश्न का उत्तर देते हुए लिखते हैं कि, समाज में व्यक्तियों की स्थिति दो स्रोतों से निर्धारित होती है। प्रथम आरोपित एवं दूसरा अर्जित। इसी के आधार पर सामाजिक स्थिति को दो भागों में विभाजित किया जाता है–आरोपित स्थिति एवं अर्जित स्थिति। प्रत्येक समाज में व्यक्तियों के कुछ पद समाज के द्वारा निर्मित किये जाते हैं, तो कुछ व्यक्ति अपने व्यक्तिगत गुणों एवं योग्यताओं के आधार पर अर्जित करते हैं। जो सामाजिक स्थिति समाज द्वारा निर्मित है उसमें व्यक्ति की अपनी भूमिका कम होती है और समाज की भूमिका अधिक होती है।

सामाजिक परिस्थिति में व्यक्ति अपनी भूमिकाओं को निभाने में असमर्थ होता है तो व्यक्ति अपनी इस संक्रमण एवं तनाव की स्थिति से समायोजन प्राप्त करने के लिए सहायता प्राप्त करने की आशा से संस्था से जुड़ने का प्रयास करता है। इकाई

के उपरोक्त वर्णन के आधार पर हम जानते हैं कि सामाजिक सांस्कृतिक व्यवस्था में व्यक्ति अपनी आयु, लिंग, जाति, प्रजाति एवं व्यक्तिगत योग्यता के आधार पर जिस स्थिति को व्यक्ति प्राप्त करता है, वह उस व्यक्ति की प्रस्थिति कहलाती है और स्थिति के संदर्भ में सामाजिक परम्परा, प्रथा, नियम एवं कानून के अनुसार जो भूमिका उसे निभानी होती है वह उसका कार्य या उसकी भूमिका होती है। जैसे हम जिस परिवार में रहते हैं उस परिवार के अन्य व्यक्तियों के साथ अलग–अलग भूमिका का निर्वहन करते हैं। अतः स्पष्टतः कहा जा सकता है कि प्रत्येक स्थिति का एक क्रिया पक्ष होता है, इस क्रिया पक्ष को ही भूमिका कहते हैं।

समाज कार्य एक व्यावसायिक सेवा है, जिसमें समाज कार्य विषय में शिक्षित व प्रशिक्षित व्यक्ति के द्वारा समस्या से ग्रसित व्यक्ति की सहायता के लिये कार्य किया जाता है। वह व्यक्ति जो समाज कार्य विषय में प्रशिक्षित होता है उसे सामाजिक कार्यकर्ता कहा जाता है। इसी सामाजिक कार्यकर्ता के द्वारा अभ्यास के दौरान बेहतर सेवा प्रदान करने का प्रयास किया जाता है तथा यह भी ध्यान रखा जाता है कि सेवा प्रदान करने की विधियों में एकरूपता बनी रहे। इसके लिये जरूरी है कि वैज्ञानिक ज्ञान पर आधारित सार्वभौमिक सिद्धांतों का पालन किया जाय। समाज कार्य व्यवसाय के कुछ आधारभूत सिद्धांत हैं जिनका पालन कार्यकर्ताओं के द्वारा किया जाता है। समाज कार्य की प्रणालियों में सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य प्राथमिक प्रणाली के रूप में कार्य करती है।

2.6 मुख्य शब्दावली

- **सामाजिक स्थिति** : स्थिति से आशय सामाजिक समूह के मध्य सामाजिक प्रतिष्ठा में ऐसे अलगावों से है जो दूसरे लोग उन पर आरोपित करते हैं।
- **सामाजिक भूमिका** : किसी व्यक्ति की भूमिका सामाजिक व्यवहार का वह प्रतिमान अथवा पुरुष है, जो कि उसे एक परिस्थिति विशेष में अपने समूह के सदस्यों की मांगों एवं प्रत्याशाओं के अनुरूप प्रतीत होता है।
- **अहम्** : अहम् सुख तत्व के स्थान पर वास्तविकता से संचालित होता है। इसका प्रमुख कार्य व्यक्ति में उत्पन्न तनाव को उचित साधनों एवं विधियों के माध्यम से समायोजित करना होता है।
- **अनुकूलन** : अनुकूलन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा कोई भी सेवार्थी अपनी समस्याओं के बारे में चिन्ता करते हुए उस समस्या से तादात्मय स्थापित कर समस्या को सुलझाने का प्रयास करता है।

2.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

लघु–उत्तरीय प्रश्न

1. सामाजिक स्थिति का अर्थ लिखिये।
2. सामाजिक स्थिति की उत्पत्ति के बारे में चर्चा कीजिए।
3. सामाजिक स्थिति की अवधारणा पर प्रकाश डालिये।

टिप्पणी

4. सामाजिक भूमिका का अर्थ एवं परिभाषाओं को लिखिये।
5. सामाजिक भूमिका का वर्गीकरण कीजिए।
6. सामाजिक भूमिका की विशेषताओं के बारे में बताइये।
7. अहम् का अर्थ स्पष्ट कीजिए।

दीर्घ–उत्तरीय प्रश्न

1. अहम् की दृढ़ता तथा अहम् के कार्यों का विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिए।
2. अनुकूलन का अर्थ स्पष्ट कीजिए।
3. अनुकूलन के प्रकार एवं प्रक्रिया पर विस्तार से प्रकाश डालिये।
4. सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के अनुप्रयोग के रूप में समाज कार्य के सामान्य सिद्धांतों पर प्रकाश डालिये।
5. वैयक्तिकरण के सिद्धांत एवं भावनाओं के उद्देश्यपूर्ण प्रगटन के सिद्धांतों पर टिप्पणी लिखिए।
6. आत्मनिश्चय का सिद्धांत और गोपनीयता के सिद्धांत की व्याख्या कीजिए।

2.8 सहायक पाठ्य सामग्री

- Robert, Bierstedt, "The Social Order", New Delhi, Tata McGraw-Hill Publishing Co. Ltd., 1970, p. 242, 245 & 247.
- Giddens, Anthony, "Sociology", Polity Press, Cambridge, 1993, p. 219.
- Linton, R., "The Study of Man", New York, D. Appleton Century Co., 1936.
- Linton, R., "The Cultural Background of Personality", Appleton Century Cafs, Ink, New York, 1945, p. 264.
- Singh, J. P., "Samajshastra: Avdharnayen Evam Sidhant", Prentice Hall of India Pvt. Ltd., New Delhi, 2007, p. 111-120.
- Sargent, S. S., "Conception of Role and Ego in Contemporary Psychology", J. H. Rohrer and M. Sherif, Social Psychology at the Cross Roads, 1951, p. 360.
- Fitcher, J. H., "Sociology", the University of Chicago Press, Chicago, 1957, p. 120.
- Mishra, P. D., "Samajik Vaiyaktik Seva Karya", Uttar Pradesh Hindi Sansthan, Lucknow, Second Edition, 1997. p. 124-139.
- Reynolds, Bertha C., "A Changing Psychology in Social Case Work, After one Year", The Family, 13:107, June, 1932.
- Krus, Hertha, "The Role of Social Case Work in American Social Work, Social Case Work", 31 January, 1950.
- Singh, A. N. and Singh, A. P., "Samaj Karya", Rapid Book Service, Lucknow, 2007.

इकाई 3 समूह तथा समाज कार्य की प्रविधि के रूप में सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य

संरचना

3.0 परिचय
3.1 उद्देश्य
3.2 समूह : परिभाषा, प्रकार, विशेषताएं, गतिकी या गतिशीलता और महत्व
- 3.2.1 समूह की परिभाषा
- 3.2.2 समूह के प्रकार
- 3.2.3 समूह की विशेषतायें
- 3.2.4 समूह गतिकी या गतिशीलता
- 3.2.5 समूह का महत्व

3.3 समाज कार्य की प्रविधि के रूप में सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य की अवधारणा
- 3.3.1 समाज कार्य की प्रविधि के रूप में सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य के उद्देश्य
- 3.3.2 समाज कार्य की प्रविधि के रूप में सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य की विशेषतायें

3.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
3.5 सारांश
3.6 मुख्य शब्दावली
3.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
3.8 सहायक पाठ्य सामग्री

3.0 परिचय

जब मानव समाज में रहता है तो उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति समाज से ही होती है। व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए समूह का सहारा लेता है क्योंकि व्यक्ति की सभी आवश्यकतायें वह स्वयं पूरी नहीं कर सकता है। वास्तव में जब समूह का निर्माण हो जाता है तो उसकी क्रियाविधि के बारे में जानकारी आवश्यक हो जाती है। यदि समूह अपने उद्देश्य के अनुरूप कार्य नहीं कर रहा है तो समूह का उद्देश्य भी प्राप्त नहीं हो सकेगा। इसलिये समूह गतिकी का सहारा लिया जाता है। समूह गतिकी में समूह की गति के बारे में जानकारी इकठ्ठा की जाती है कि समूह किस दिशा में तथा किस हद तक अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने हेतु अग्रसर है। समूह के महत्व के बारे में भी प्रकाश डालते हुए यह बताया गया है कि समूह का महत्व व्यक्ति के लिये क्यों है? वास्तव में व्यक्ति की आवश्यकताओं की पूर्ति में समूह ही सहायक सिद्ध होता है, चाहे वह प्राथमिक समूह हो या द्वितीयक समूह हो।

सामूहिक सेवा कार्य वह प्रविधि है जिसमें व्यक्तियों की सहायता समूह के माध्यम से की जाती है तथा लोगों को इस योग्य बनाने का प्रयास किया जाता है कि वे स्वयं अपनी समस्याओं का समाधान कर सकें।

प्रस्तुत इकाई में समूह तथा समाज कार्य की प्रविधि के रूप में सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य के बारे में विस्तार से बताया गया है। इसमें समूह की परिभाषा, समूह के प्रकारों, विशेषताओं, समूह गतिकी और समूह के महत्व तथा समाज कार्य की प्रविधि के रूप में सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य की अवधारणाओं, समाज कार्य

की प्रविधि के रूप में सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य के उद्देश्यों तथा समाज कार्य की प्रविधि के रूप में सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य की विशेषताओं पर वृहद् प्रकाश डाला गया है।

टिप्पणी

3.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप–

- समूह की परिभाषा, प्रकार, विशेषताओं, समूह गतिकी और समूह के महत्व के बारे में जान पाएंगे;
- समाज कार्य की प्रविधि के रूप में सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य की अवधारणाओं को समझ पाएंगे;
- समाज कार्य की प्रविधि के रूप में सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य के उद्देश्यों के विषय में जान पाएंगे;
- समाज कार्य की प्रविधि के रूप में सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य की विशेषताओं को समझ पाएंगे।

3.2 समूह : परिभाषा, प्रकार, विशेषताएं, गतिकी या गतिशीलता और महत्व

यहां पर समूह की परिभाषा देते हुए उसके प्रकार, विशेषताओं, गतिकी या गतिशीलता और समूह के महत्व का विवेचन किया गया है।

3.2.1 समूह की परिभाषा

समूह का स्थान मानव समाज में महत्वपूर्ण है। जब से सभ्यता की शुरुआत हुई है तब से मानव किसी–न–किसी प्रकार से समूह में निवास करता आया है। कुछ प्रमुख विद्वानों का कहना है कि मानव ने अपनी सुरक्षा के लिये समूहों का निर्माण किया तो कुछ का मत है कि मनुष्यों ने समूहों का निर्माण अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये किया, कुछ ने तो यहां तक कहा कि मनुष्य अपनी समूहशीलता की प्रकृति के कारण ही समूह में रहता आया है। वास्तव में समाज का निर्माण मानवों की परस्पर अन्तःक्रिया द्वारा सामाजिक संबंधों के परिणामस्वरूप होता है। इन संबंधों का निर्माण व्यक्ति समूह के माध्यम से करता है। वह समूह में रहकर ही जीवन–यापन करता है। समूह के बिना मानव जीवन की संकल्पना नहीं की जा सकती है। मानव अपनी जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये अकेला सक्षम नहीं है। इसलिये मानव अपनी जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये समूह में रहने के लिये बाध्य होता है। इस परिप्रेक्ष्य में अरस्तू ने समूह के महत्व को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। अर्थात् समूह में रहने की प्रवृत्ति व्यक्ति के मूल में है और समूहों में ही व्यक्ति की सम्पूर्ण आवश्यकतायें पूर्ण होती हैं। व्यक्ति के जन्म से लेकर मृत्यु तक मनुष्य समूह की गतिविधियों पर निर्भर रहता है और सामाजिक समूह का निर्माण व्यक्तियों के संग्रह मात्र से नहीं होता है बल्कि यह एक ऐसा समूह होता है जिसमें व्यक्ति संगठित होकर परस्पर एक–दूसरे से सामाजिक संबंध स्थापित कर

सामाजिक क्रिया एवं प्रतिक्रिया, जागरूकता के साथ–साथ कतिपय सामान्य स्वार्थ, हित, उत्तेजनायें एवं सामान्य प्रेरक, चालक तथा संवेगों से प्रेरित होकर एक–दूसरे के व्यवहारों को प्रभावित करते हैं, जो समूह के निर्माण में सहायक होते हैं। अतः मानव अपने हितों, उद्देश्यों तथा रूचियों में समानता के कारण सामूहिक रूप से जीवन–यापन के लिए समूह का निर्माण करता है। इसी कारण से सामाजिक जीवन में समूह से ज्यादा शायद ही कोई अधिक महत्वपूर्ण व्यवस्था है। यही कारण है कि समाजशास्त्र के अंतर्गत समूह एक महत्पूर्ण अवधारणा है। इसकी महत्ता इतनी अधिक है कि बोगार्डस, जानसन आदि समाजशास्त्रियों ने समाजशास्त्र को सामाजिक समूहों के अध्ययन का विषय कहा है। यह स्वाभाविक भी है, क्योंकि परिवार एक बुनियादी सामाजिक समूह है, जहां प्रजनन के द्वारा समाज का स्वतः विकास होता रहता है। मानव सबसे पहले जन्म लेते ही परिवार जैसे समूह का सदस्य बनता है। यही वह व्यवस्था है जहां पर बच्चों का लालन–पालन एवं समाजीकरण होता है। परिवार के अन्य सदस्य उसकी बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं और बड़े होकर वे विभिन्न प्रकार के सामाजिक समूहों के सदस्य बनते हैं।

समूह समाज की इकाई है तथा समाज समूहों का संग्रह है जिसमें व्यक्ति अनेक सामाजिक समूहों का सदस्य होता है। परिवार, क्रीड़ा–समूह, पड़ोस, मित्र–मण्डली और राज्य आदि ऐसे ही सामाजिक समूह हैं। समूह रूपी भूमि में अंकुरित होकर मानव समूह में रहकर ही पुष्पित एवं पल्लवित होता है। समूह व्यक्ति का समाजीकरण कर उसके व्यक्तित्व को विकसित कर व्यक्ति के अंदर समाज के आदर्शों, मूल्यों, व्यवहारों की समझ पैदा कर उसे व्यवहार–कुशल तथा निपुण बनाते हैं।

समूह की अवधारणा विविध रूपों में समस्त प्राणियों में प्रागैतिहासिक काल से ही विद्यमान है। यह एक विश्वव्यापी अवधारणा है। सम्पूर्ण विश्व में कोई ऐसा स्थान नहीं है जहां समूह नहीं पाये जाते हैं। समी छोटे एवं बड़े आकार के प्राणियों में समूह का अस्तित्व पाया जाता है। समूह समाज की मूलभूत अवधारणा है। मानव व्यवहार के परिप्रेक्ष्य में समूह की अत्यधिक महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इसे विभिन्न समाजशास्त्रियों ने भिन्न–भिन्न विचाारों के आधार पर स्पष्ट किया है, जो अग्रलिखित हैं–

आगबर्न तथा निमकॉफ के अनुसार, ''जब कभी दो या दो से अधिक व्यक्ति एकत्रित होते हैं एवं एक दूसरे पर प्रभाव डालते हैं तो वे एक सामाजिक समूह का निर्माण करते हैं।''

गिडेन्स, एन्थोनी के अनुसार, ''एक सामाजिक समूह केवल व्यक्तियों का योग है जो नियमित रूप से एक दूसरे के साथ अन्तःक्रिया करते हैं।''

मैकाइवर एवं पेज के अनुसार, ''समूह से हमारा तात्पर्य व्यक्तियों के ऐसे संग्रह से है जो सामाजिक सम्बंधों के कारण एक–दूसरे से सम्बद्ध हों।''

बोगार्डस के अनुसार, ''जब कभी दो या दो से अधिक व्यक्ति एकत्रित होकर एक–दूसरे को प्रभावित करते हैं तो वे एक सामाजिक समूह का निर्माण करते हैं।''

गिलिन एवं गिलिन के अनुसार, '' सामाजिक समूह के विकास हेतु एक ऐसी अनिवार्य स्थिति होती है, जिसमें सम्बन्धित व्यक्तियों के अर्थपूर्ण अन्तःउत्तेजना और अर्थपूर्ण प्रत्युत्तर सम्भव हो सके एवं जिसमें उन सबका सामान्य उत्तेजकों अथवा हितों पर ध्यान केन्द्रित रहे और सामान्य चालकों, प्रेरकों एवं संवेगों का विकास हो सके।''

टिप्पणी

विलियम्स के अनुसार, ''सामाजिक समूह लोगों के उस निश्चित संकलन को कहते हैं जो परस्पर सम्बन्धित कार्य करते हैं और अपने द्वारा परस्पर अन्तक्रिया करने वाली इकाई के रूप में पहचाने जाते हैं।''

लैण्डिस के अनुसार, ''जब दो या अधिक व्यक्ति सामाजिक सम्बंध स्थापित करते हैं, वहां समूह बन जाता है।''

इलियट और मैरिल के अनुसार, ''सामाजिक समूह दो या दो से अधिक व्यक्तियों का ऐसा समूह है जिसका एक लम्बी अवधि में संचार होता रहता है तथा जो एक सामान्य कार्य या प्रयोजन के अनुसार कार्य करते हैं।''

हार्टन एवं हंट के अनुसार, ''सामाजिक समूह का सार भौतिक समीपता नहीं, बल्कि संयुक्त अन्तःक्रिया की जागरूकता है।''

इस प्रकार उपरोक्त परिभाषाओं के आलोक में यह कहा जा सकता है कि सामाजिक समूह व्यक्तियों का ऐसा संग्रह है जिसमें दो से लेकर अनेक व्यक्ति अन्तर्निहित होते हैं। व्यक्तियों की इस समग्र इकाई का कोई सर्वमान्य हित, उद्देश्य तथा स्वार्थ होता है जिसकी पूर्ति के लिये वे संगठित होकर जागरूक अवस्था में सामाजिक सम्बन्धों की स्थापना करते हैं, जिसे सामाजिक समूह कहते हैं।

3.2.2 समूह के प्रकार

समूह के प्रकारों के बारे में व्याख्या करना आसान नहीं है। भिन्न–भिन्न विद्वानों ने समूह के प्रकारों की भिन्न–भिन्न प्रकार से व्याख्या प्रदान की है। इन विद्वानों में से चार्ल्स कूले द्वारा प्रदान किए गए समूह के प्रकार मुख्य हैं। कूले ने समूह के प्रकारों में पारस्परिक सम्बंधों की घनिष्ठता को सर्वोपरि स्थान प्रदान किया है तथा इसी आधार पर समूह को दो भागों में बांटा है, जो निम्नलिखित हैं–

1. प्राथमिक समूह।
2. द्वितीयक समूह।

इन प्रकारों का वर्णन अग्रलिखित रूप में प्रस्तुत है–

1. प्राथमिक समूह की अवधारणा–चार्ल्स कूले एक अमेरिकन समाजशास्त्री थे जिन्होंने सर्वप्रथम प्राथमिक समूह शब्द का प्रयोग अपनी पुस्तक 'सोशल आर्गेनाइजेशन' में किया। इस शब्द को प्रचलित करने का उद्देश्य उन समूहों का ज्ञान कराना था जिनमें आमने–सामने के प्रत्यक्ष संबंध पाये जाते हैं। जो शिशुओं के पालन–पोषण तथा व्यक्तित्व के निर्माण में सहायक होते हैं। प्राथमिक समूह की अवधारणा के बारे में बताते हुए कूले साहब लिखते हैं कि, ''प्राथमिक समूहों से हमारा तात्पर्य उन समूहों से है, जिनमें सदस्यों के बीच आमने–सामने के घनिष्ठ संबंध एवं पारस्परिक सहयोग की विशेषता होती है। ऐसे समूह अनेक अर्थों में प्राथमिक होते हैं, लेकिन विशेष रूप से इस अर्थ में कि ये व्यक्ति के सामाजिक स्वभाव और विचार के निर्माण में बुनियादी योगदान देते हैं।''

इस अवधारणा को प्रस्तुत करने के पीछे कूले का मुख्य उद्देश्य यह दिखाना था कि मानव व्यक्तित्व के विकास में कुछ ऐसे समूह होते हैं जिनकी महत्वपूर्ण या प्राथमिक भूमिका होती है। इसलिए इन्हें प्राथमिक समूह कहा जा सकता है। कूले की

परिभाषा से यह स्पष्ट होता है कि प्राथमिक समूह में शारीरिक समीपता, घनिष्ठ संबंध एवं पारस्परिक संबंध का होना आवश्यक है। इसके उदाहरणों में परिवार, पड़ोस एवं क्रीड़ा समूह इत्यादि प्रमुख हैं। इन समूहों में 'हम की भावना' पायी जाती है। प्राथमिक समूह अपने–आप में बहुत ही मजबूती से बंधा हुआ समूह है जिसमें आमने–सामने के संबंधों के अलावा एकता की भावना प्रबल रूप में पायी जाती है। समूह के सदस्यों में एक सामान्य सामाजिक मूल्यों के प्रति कटिबद्धता पायी जाती है। प्राथमिक समूहों में प्रत्येक सदस्य का एक निश्चित दृष्टिकोण होता है। प्रत्येक सदस्य अपने समान मूल्यों, आदर्शों, प्रथाओं तथा परम्पराओं का पालन करते हैं। विभिन्न समाजशास्त्रियों ने इन प्राथमिक समूहों को अपने मतों के अनुसार निम्नलिखित रूपों में व्यक्त किया है–

किंग्सले डेविस के अनुसार, ''प्राथमिक समूह मूर्त समूह हैं, जैसे–परिवार, क्रीड़ा समूह, पड़ोसी समूह आदि तथा इन समूहों में आमने–सामने का संबंध होता है।''

मैकाइवर एवं पेज के अनुसार, ''प्राथमिक समूह वे हैं जिनमें आमने–सामने के संबंध होते हैं। वह प्रत्येक समाज का केन्द्र बिन्दु होता है जिसे हम प्रत्येक जटिल सामाजिक संरचना में देख सकते हैं।''

लुण्डबर्ग के अनुसार, ''प्राथमिक समूह से तात्पर्य दो या दो से अधिक ऐसे व्यक्तियों से है जो घनिष्ठ, सहभागी और वैयक्तिक ढंग से एक–दूसरे से व्यवहार करते हैं।''

उपरोक्त परिभाषाओं के आलोक में हम कह सकते हैं कि वास्तव में प्राथमिक समूह उन समूहों को कहा जाता है जिनके सदस्यों में आमने–सामने के घनिष्ठ संबंध होते हैं, उनमें परस्पर एकता, सहानुभूति, सहयोग तथा सद्भाव की भावना निहित होती है। प्राथमिक समूह व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक तथा सामाजिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

प्राथमिक समूह की विशेषतायें–

प्राथमिक समूह की निम्नलिखित विशेषतायें होती हैं–

1. **आकार में छोटा होना**–यह समूह आकार में छोटा होता है। यह कहना कठिन है कि समूह में अधिक–से–अधिक कितने सदस्य पाये जाते हैं, लेकिन यह निश्चित है कि ऐसे समूह में अधिक सदस्य नहीं हो सकते हैं। आकार में छोटे होने के कारण ही सदस्यों में परस्पर अन्तःक्रिया संभव हो पाती है, जिसके कारण एक प्रकार के भाई–चारे एवं आदान–प्रदान वाली भावना का जन्म होता है।
2. **आमने–सामने का संबंध**–इस समूह के सदस्यों में भौतिक या मानसिक समीपता पाई जाती है। इसका तात्पर्य यह है कि सभी सदस्य अपने बीच अनुभवों या विचारों का सहजता से आदान–प्रदान करते हैं। आमने–सामने का तात्पर्य प्रतिदिन एक–दूसरे से मिलते रहने का नहीं है, जैसा कि कई लोगों ने लिखा है। ऐसे समूहों में रहकर सदस्य सामाजिक जीवन की बुनियादी बातों को जानते हैं। कभी–कभी आमने–सामने की स्थिति के बावजूद लोग प्राथमिक समूह का निर्माण नहीं कर पाते हैं।
3. **तुलनात्मक स्थिरता**–स्थिरता के अभाव में घनिष्ठता की संकल्पना करना बेमानी होगा। अतः जहां पर स्थिरता अधिक होगी वहां पर सदस्यों के मध्य

टिप्पणी

घनिष्ठ संबंध अधिक स्थिर होगा। वस्तुतः कहा जा सकता है कि प्राथमिक समूहों का निर्माण जानबूझकर या योजनाबद्ध तरीके से न होने के कारण ये अधिक स्थायी होते हैं और लोगों को इसकी सदस्यता से अलग होना कठिन होता है।

4. **लक्ष्यों की समानता**–प्राथमिक समूह के सदस्यों के लक्ष्यों में समानता पाई जाती है। इसके सदस्य एक दूसरे के कल्याण के लिए हमेशा अग्रसर रहते हैं।

5. **स्वतःविकसित समूह**–प्राथमिक समूह स्वतः विकसित होते हैं। ये समूह जान–बूझकर नहीं बनाये जाते हैं। ये अपने आप निर्मित हो जाते हैं। जब दो चार व्यक्तियों में काफी घनिष्ठता बढ़ जाती है तो प्राथमिक समूह का निर्माण स्वतः तैयार हो जाता है।

6. **घनिष्ठ संबंधों की प्रधानता**–प्राथमिक समूहों में संबंधों में घनिष्ठता पाई जाती हैं। चूंकि प्राथमिक समूहों के सदस्य एक ही परिवार या ऐसे घनिष्ठ मित्र होते हैं जिनमें परस्पर समीपता अधिक होती है तो उनमें घनिष्ठ संबंध अपने आप निर्मित हो जाता है।

7. **समाजीकरण की संस्था के रूप में**–प्राथमिक समूह किसी व्यक्ति के जीवन में वैसा समूह है जहां उसका बचपन व्यतीत होता है। बचपन का समय व्यक्ति के जीवन का एक ऐसा समय होता है जिसमें उसे कुछ भी सिखलाया जाता है तो वह उसके व्यक्तित्व का अभिन्न अंग बन जाता है। अतः प्राथमिक समूह समाजीकरण की संस्था के रूप में कार्य करते हैं।

8. **अनौपचारिक संबंध**–प्राथमिक समूह अनौपचारिक होता है जिसमें व्यक्तियों के मध्य अनौपचारिक संबंध घनिष्ठता के कारण उत्पन्न हो जाते हैं।

9. **सर्वव्यापकता**–प्राथमिक समूह एक विश्वव्यापी सामाजिक समूह है। दुनिया के किसी भाग में ऐसा कोई भी समाज नहीं है जहां प्राथमिक समूह नहीं पाया जाता है।

2. द्वितीयक समूह–द्वितीयक समूह वे समूह होते हैं जो प्राथमिक समूह की परिधि से बाहर होते हैं। अर्थात् वे समूह जो प्राथमिक नहीं होते हैं वे द्वितीयक समूह कहलाते हैं। समाज की जटिलता और अन्तःसंबंधों की व्यापकता के परिणामस्वरूप द्वितीयक समूहों का प्रादुर्भाव होता है। इनमें सदस्यों के बीच संबंध अप्रत्यक्ष होते हैं तथा उनमें जटिलता, समीपता एवं अपनेपन का पूर्ण अभाव होता है। इनमें संबंध साधारणतया परस्पर सहायक होने की अपेक्षा प्रतियोगी व प्रतिस्पर्द्धात्मक अधिक होते हैं। मैकाइवर एवं पेज के कथन के अनुसार, समाज का आकार बड़ा हो जाने पर संबंधों की प्रत्यक्षता में वृद्धि होती चली गई, जिसके फलस्वरूप द्वितीयक समूहों का शुभारम्भ हो गया। इनका आकार बड़ा होता है तथा सदस्य संख्या बड़ी होने के कारण संबंध अपत्यक्ष होते हैं। इनमें घनिष्ठता का अभाव पाया जाता है। द्वितीयक समूहों के उदाहरण के अन्तर्गत समुदाय, राज्य, राजनैतिक दल, भीड़, वर्ग, श्रमिक संघ आदि आते हैं।

द्वितीयक समूह की कुछ परिभाषायें जो विभिन्न विद्वानों द्वारा प्रदान की गई हैं, को अग्रलिखित प्रस्तुत किया जा रहा है–

राबर्ट बीरस्टीड के अनुसार, ''वे सभी समूह द्वितीयक हैं जो प्राथमिक नहीं हैं।''

किंग्सले डेविस के अनुसार, ''द्वितीयक समूहों को स्थूल रूप से सभी प्राथमिक समूहों के विपरीत कहकर परिभाषित किया जा सकता है।''

चार्ल्स कूले के अनुसार, ''द्वितीयक समूह ऐसे समूह हैं जिनमें घरिष्ठता का पूर्णतया अभाव होता है और सामान्यतः उन विशेषताओं का भी अभाव होता है जो कि अधिकांशतया प्राथमिक और अर्द्ध–प्राथमिक समूहों में पाई जाती है।''

आगबर्न और निमकॉफ के अनुसार, ''जो समूह घनिष्ठता के अभाव वाले अनुभवों को प्रदान करते हैं, उन्हें द्वितीयक समूह कहा जाता है।''

लुण्डबर्ग के अनुसार, ''द्वितीयक समूह वह हैं जिनमें सदस्यों के संबंध अवैयक्तिक, हित–प्रधान तथा व्यक्तिगत योग्यता पर आधारित होते हैं।''

फेयरचाइल्ड के अनुसार, ''समूह का वह रूप जो अपने सामाजिक सम्पर्क और औपचारिक संगठन की मात्रा में प्राथमिक समूहों की तरह घनिष्ठता से भिन्न हो, द्वितीयक कहलाता है।''

इस प्रकार उपरोक्त परिभाषाओं के आलोक में कहा जा सकता है कि द्वितीयक समूह वे समूह होते हैं जिनमें हम की भावना का नितान्त अभाव होता है। ये समूह व्यक्तिगत हितों को पूरा करने के लिए संगठित होते हैं, इनके संबंध आकस्मिक तथा औपचारिक होते हैं। द्वितीयक समूहों का सदस्य व्यक्ति अपने स्वार्थ पूर्ति के लिये बनाता है।

द्वितीयक समूह की विशेषतायें–

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर द्वितीयक समूह की कुछ विशेषतायें अग्रलिखित हैं–

1. **बड़ा आकार**–द्वितीयक समूहों में सदस्यों की संख्या बड़ी होती है। चूंकि इसका निर्माण पूर्वनियोजित योजना के आधार पर होता है इसलिये इसकी संख्या बड़ी होती है। इसके उदाहरणों में भीड़, राज्य, शिक्षण संस्थायें तथा राष्ट्र इत्यादि आते हैं।
2. **अप्रत्यक्ष एवं अवैयक्तिक संबंध**–द्वितीयक समूहों के संबंधों में घनिष्ठता कम पाई जाती है जिसके कारण व्यक्तियों में संबंध प्रत्यक्ष न होकर अप्रत्यक्ष हो जाते हैं। इसमें व्यक्तियों के मध्य संबंध विभिन्न साधनों यथा–टेलीफोन, पत्र, पत्र–पत्रिकाओं के माध्यम से होते हैं। अतः संबंध अप्रत्यक्ष हो जाते हैं जिसके कारण अवैयक्तिक संबंध स्थापित हो जाते हैं। इन समूहों में वैयक्तिक घनिष्ठता बहुत कम पाई जाती है। ये केवल औपचारिकता तक ही सीमित रहती है।
3. **प्रतिस्पर्धा की भावना**–ऐसे समूहों में प्रतिस्पर्धा की भावना पाई जाती है। द्वितीयक समूहों में व्यक्ति अपनी कार्यकुशलता एवं कार्यक्षमता को बढ़ाकर अन्य लोगों से आगे निकलना चाहता है। कुछ समूह अपने सदस्यों के बीच प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा देते हैं।
4. **ऐच्छिक सदस्यता**–द्वितीयक समूहों की सदस्यता ऐच्छिक होती है। व्यक्ति ऐसे समूहों की सदस्या को अपनी इच्छा के अनुसार ग्रहण करते हैं तथा जब चाहते हैं इसकी सदस्यता त्याग देते हैं।
5. **स्थायित्व में कमी**–इसमें स्थायित्व की कमी होती है। इसका प्रमुख कारण इसकी सदस्यता का ऐच्छिक होना है। इसमें व्यक्ति जब चाहे अपनी सदस्यता छोड़ सकता है।

टिप्पणी

6. **एक योजनाबद्ध व्यवस्था**–द्वितीयक समूह का निर्माण किसी न किसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु होता है जिसके लिये एक योजना के अन्तर्गत समूह का निर्माण किया जाता है और जब उद्देश्य की पूर्ति हो जाती है तो समूह अपने आप समाप्त हो जाता है।

7. **सीमित स्वार्थों की पूर्ति**–द्वितीयक समूहों में व्यक्ति के जुड़ने का उद्देश्य सीमित होता है। जब व्यक्ति की आवश्यकतायें पूरी हो जाती हैं तो वह समूह की सदस्यता को त्याग देता है।

8. **अल्पकालिक सदस्यता**–द्वितीयक समूहों में व्यक्ति ऐच्छिक रूप से जुड़ता है जिसमें वह अपना वही समय बिताता है जब तक कि उसके सीमित उद्देश्य पूरे न हो जाये। जब उसके उद्देश्य पूरे हो जाते हैं तो वह समूह को छोड़ देता है जिसके कारण समूह की सदस्यता अल्पकालिक हो जाती है।

9. **औपचारिक संगठन**–द्वितीयक समूहों में औपचारिक संबंध पाया जाता है। इसमें लोग संबंध हेतु विभिन्न साधनों का उपयोग करते हैं। औपचारिक संगठन में हम की भावना का लोप होता है।

उपरोक्त प्राथमिक समूह एवं द्वितीयक समूह के अलावा भी एक समूह का प्रकार और भी है जिसको संदर्भ समूह के नाम से जाता है जिसकी अवधारणा हर्बर्ट हाइमन ने प्रदान की है जिसके बारे में जानना आवश्यक है। अतः हम संदर्भ समूह के बारे में अग्रलिखित वर्णन प्रस्तुत कर रहे हैं–

संदर्भ समूह–इसका प्रयोग सर्वप्रथम हर्बर्ट हाइमन ने सन् 1942 में किया था। इसका उपयोग हाइमन ने स्कूल के बच्चों के एक अध्ययन के संदर्भ में किया था। इस अध्ययन में उन्होंने पाया कि स्कूल में आनेवाले निम्नवर्ग के बच्चों का व्यवहार उच्चवर्ग से आने वाले बच्चों से मिलता–जुलता था। निम्नवर्ग के बच्चे अपने समूह के अनुसार व्यवहार न करके एक ऐसे समूह के अनुसार व्यवहार कर रहे थे जिसके वे स्वयं सदस्य नहीं थे। हाइमन के अनुसार उच्चवर्ग वाले बच्चों का समूह निम्नवर्ग के बच्चों के लिए संदर्भ समूह का कार्य कर रहा था। हाइमन के अनुसार निम्नवर्ग के बच्चों के लिए उच्चवर्ग के बच्चों का समूह संदर्भ समूह हुआ।

संदर्भ समूह की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए श्री एवं श्रीमती शेरिफ ने कहा है कि, ''संदर्भ समूह वे समूह हैं जिनसे व्यक्ति अपने आपको उनके एक अंग के रूप में जोड़ लेता है अथवा मनोवैज्ञानिक रूप से वह उनसे जुड़ने की इच्छा रखता है।'' शेरिफ के अनुसार संदर्भ समूह एक मानसिक स्थिति है, जिसमें किसी भी समूह के सदस्य किसी दूसरे से, जिसे वे श्रेष्ठ समझते हैं, अपना मानसिक संबंध जोड़ते हैं एवं स्वयं का उस अन्य समूह के परिप्रेक्ष्य में मूल्यांकन करते हैं। शेरिफ ने यह कहा भी है कि ऐसी स्थिति अर्थात् संदर्भ समूह स्थिति अधिकतर औद्योगिक समाजों में उत्पन्न होती है।

जानसन के अनुसार, ''कोई भी समूह एक व्यक्ति के लिए संदर्भ समूह हो सकता है–वह समूह जिसका वह सदस्य है या जिसका वह सदस्य नहीं हैं; एक अन्तःक्रिया समूह, स्थिति समूह या एक समूह जिसके सदस्य दूसरों पर अपने प्रभावों के बारे में जानते हैं या वैसे समूह भी जिसके सदस्यों को इस बात की जानकारी नहीं है; या एक सांख्यिकी समूह; एक वास्तविक समूह या यहां तक कि एक काल्पनिक समूह भी।''

अतः उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर हम कह सकते हैं कि संदर्भ समूह वह समूह है जिसका व्यक्ति सदस्य न होते हुए उसके जैसा बनने की आशा करता है।

3.2.3 समूह की विशेषतायें

टिप्पणी

समूह की अपनी कुछ मौलिक विशिष्टता होती है जिनके कारण उनकी पहचान होती है। इनकी विशिष्टता अग्रलिखित विशेषताओं को प्रकट करती है–

1. **व्यक्तियों का संकलन**–समूह में व्यक्तियों का संकलन होता है। व्यक्ति की आवश्यकतायें उसको प्रतिबद्ध करती हैं कि वह समूह से जुड़े नहीं तो उसकी बहुत सी आवश्यकताओं की पूर्ति सम्भव नहीं है। व्यक्ति जब प्राथमिक समूह में होता है तो उसकी बुनियादी आवश्यकतायें तो पूरी हो जाती हैं लेकिन उसकी भविष्य में आने वाली आवश्यकताओं की पूर्ति द्वितीयक समूह द्वारा ही सम्भव हो पाती हैं। इसलिये व्यक्ति समान आवश्यकताओं वाले समूह से जुड़ता है जहां पर उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। अतः समूह में व्यक्तियों का संकलन होता है।
2. **मूर्तता**–समूह मूर्त होता है क्योंकि समूह का निर्माण व्यक्तियों के द्वारा ही होता है। व्यक्तियों का समूह मूर्त होता है। उसकी अपनी एक पहचान व नाम होता है। अतः मूर्तता समूह की विशेषता है।
3. **निश्चित संरचना**–समूह का एक निश्चित ढांचा होता है जिसके अन्तर्गत समूह का प्रत्येक सदस्य पद, कार्य, अधिकार तथा भूमिका आदि का निर्वहन करता है। समूह में आयु, जाति–धर्म, लिंग और प्रजाति के अनुरूप सामाजिक संस्तरण पाया जाता है।
4. **समान हित**–समूह में सभी सदस्यों का समान हित अन्तर्निहित होता है। समान हित या स्वार्थ की भावना के कारण ही समूह का निर्माण होता है। समान हितों से जुड़े होने के कारण व्यक्तियों के बीच संबंध सुदृढ़ होते हैं। समान स्वार्थपूर्ति का लक्ष्य लेकर ही व्यक्ति समूह का सदस्य बन पाता है। अलग–अलग हितों की इच्छा होने से समूह बिखर जाता है। अतः समान हित समूह की विशेषता है।
5. **श्रम विभाजन**–समूह का निर्माण किसी न किसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए किया जाता है। इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए समूह के प्रत्येक सदस्यों में अलग–अलग कार्यों का विभाजन होता है जो समूह को संगठन के सूत्र में बांधने का कार्य करता है। अतः समूह में श्रम विभाजन होता है जो इसकी एक विशेषता है।
6. **पारस्परिक जागरूकता**–पारस्परिक जागरूकता समूह का एक विशिष्ट अंग है। मैकाइवर एवं पेज ने भी पारस्परिक जागरूकता को समूह का आवश्यक तत्व माना है। यह भावना सभी व्यक्तियों में समान रूप से नहीं पाई जाती है। अतः विभिन्न रूचियों तथा मनोवृत्तियों वाले लोगों से बनने वाले विभिन्न समूहों की प्रकृति भी एक–दूसरे भिन्न होती है।
7. **ऐच्छिक सदस्यता**–हम जानते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी समूह का सदस्य अवश्य होता है। लेकिन फिर भी व्यक्ति की एक समूह विशेष की सदस्यता उसकी इच्छा पर निर्भर करती है। व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं तथा

रूचि के अनुसार किसी नये समूह की सदस्यता को ग्रहण कर सकता है या पुराने समूह की सदस्यता छोड़ सकता है। अतः ऐच्छिक सदस्यता भी समूह की विशेषता है।

टिप्पणी

8. **आदर्शों का महत्व**–आदर्शों को महत्व देना समूह की प्रमुख विशेषता है। समूह सदस्यों के व्यवहारों पर नियंत्रण रखने के लिए आदर्श प्रतिमान निर्धारित किये जाते हैं। प्रत्येक समूह के अपने निश्चित आदर्श प्रतिमान होते हैं जो व्यक्ति के व्यवहारों को नियंत्रित कर उन्हें एक निश्चित स्वरूप प्रदान करते हैं। अतः आदर्शों का महत्व भी समूह की एक विशेषता है।
9. **एकता और सहयोग की भावना**–किसी भी समूह के उद्देश्य की प्राप्ति तभी सम्भव हो सकती है जब उसके सभी सदस्यों में एकता और सहयोग की भावना उनमें निहित हो। अतः समूह के सदस्यों में आपस में एकता और सहयोग की भावना होनी आवश्यक है। उनमें 'हम की भावना' की अनुभूति होनी चाहिए, जिससे वे एक साथ मिलकर परस्पर सहयोग द्वारा स्वार्थहीन होकर सम्पूर्ण समूह के विकास हेतु कार्य करें।
10. **निश्चित उद्देश्य**–समूह का निर्माण निश्चित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए किया जाता है। अतः प्रत्येक समूह के निर्माण के समय उसका एक निश्चित मान्यता प्राप्त सामाजिक उद्देश्य होना चाहिए जो समूह के सदस्यों को प्रोत्साहित कर उन्हें एकजुट होकर कार्य करने के लिए प्रेरित करता रहे। अतः निश्चित उद्देश्य समूह की एक विशेषता है।
11. **सत्ता**–सत्ता समूह की प्रमुख विशेषता है। यही वह विशेषता है जो समूह के सदस्यों को समूह द्वारा निर्धारित आदर्शों के अनुसार व्यवहार करने के लिये बाध्य करती है। सत्ता से प्रेरित होकर सदस्य समूह के नियमों का उल्लघंन करने से बचता है तथा समूह की सत्ता के सामने सदस्य अपने को कनिष्ठ या निम्न समझता है। सत्ता समूह को संगठित रखने का सूत्र है।

3.2.4 समूह गतिकी या गतिशीलता

समूह गतिकी या गतिशीलता भौतिक शास्त्र से लिया गया शब्द है जिसमें गतिशीलता शब्द ग्रीक भाषा से लिया गया है जिसका अर्थ शक्ति होता है। अर्थात् समूह गतिशीलता का आशय समूह में छिपी हुई शक्ति का अध्ययन करना होता है। समूह गति विज्ञान उन विषयों का ज्ञान प्रदान करता है जो एक समूह में सक्रिया होती हैं। सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य में समूह गति विज्ञान का अन्वेषण का विषय सेवार्थी होता है। समूह गतिशीलता के अध्ययन में इसे समूह गत्यात्मकता, समूह मनोविज्ञान के नाम से भी जाना जाता है।

समाज में समय–समय पर परिवर्तन होते रहते हैं। इन परिवर्तनों को समझने के लिए भी समूह गतिशीलता को समझना आवश्यक है। सामाजिक परिवर्तनों से समूह गतिशीलता का पता लगाया जा सकता है। समूह गतिशीलता में परिवर्तन होने के कारणों के साथ ही साथ सामाजिक परिवर्तनों के स्वरूप का भी अध्ययन किया जाता है। जो समूह स्थायी होते हैं उनमें परिवर्तन देखने को कम मिलते हैं तथा परिवर्तन होते भी हैं तो बहुत आसानी से नहीं होते हैं जबकि अस्थायी समूहों में सामाजिक परिवर्तन बहुत आसानी से हो जाते हैं, चाहें उनके चारों तरफ सामाजिक पर्यावरण में

कोई परिवर्तन हो या न हो। सभी समूहों में ये परिवर्तन समान नहीं होते हैं। जो समूह ज्यादा सक्रिय एवं संघर्षशील होते हैं उनमें जल्दी परिवर्तन हो जाते हैं। ये परिवर्तन समूह में आने वाले संघर्ष या तनाव को कम करते हैं। इस स्थिति में समूह की संरचना एक अस्थायी रूप की अलग संरचना धारण कर लेती है। समूह में कई ऐसे उप–समूह बन जाते हैं जो परस्पर अपनी स्थिति को बनाये रखने का प्रयास करते रहते हैं। जो उप–समूह के सदस्य होते हैं वे सर्वमान्य नियमों के विपरीत आचरण करते हैं, उन्हें सदस्यता से अलग करने पर इन उप–समूहों के पारस्परिक संबंध घनिष्ठ और अच्छे हो जाते हैं। तब समूह को थोड़ा स्वामित्व प्राप्त होता है। इन घनिष्ट संबंधों का उत्तरदायित्व कुशल नेता पर होता है। जब समूह में आंतरिक तनाव बढ़ जाता है तब समूह की व्यवस्था भंग हो जाती है। जैसे, पति–पत्नी का वैवाहिक संबंध का टूटना, संयुक्त परिवारों में विघटन होना, सहकारी संगठनों का टूटना इत्यादि घटनायें इसी आंतरिक तनाव के कारण होती हैं। इन समूह विघटन का कारण स्पष्ट है कि जब संगठनकर्ता की शक्तियां कम होती हैं तो विघटनकारी शक्तियां प्रबल हो जाती हैं और विघटन हो जाता है। सामूहिक संबंध तभी दृढ़ हो सकते हैं जब सामूहिक आदर्श, विश्वास और उद्देश्यों में पुनः आस्था उत्पन्न हो और व्यक्ति–व्यक्ति समूह के साथ तादात्म्य स्थापित कर लें।

कुछ ऐसी असामयिक लेकिन शक्तिशाली परिस्थितियां भी होती हैं जिनके कारण समूह परिवर्तन और गतिशीलता होती है। जैसे, हमारे देश पर जब पाकिस्तान एवं चीन ने आक्रमण किया था तो हमारे देश में सभी नागरिक समूह एक होकर राष्ट्र की एकता को प्रदर्शित किये जो हमारी अनेकता में एकता का परिचायक भी था। अतः ये असामयिक परिस्थितियां भी समूहों में समूह गतिशीलता की स्थिति उत्पन्न करती हैं।

समूह की संरचना में तब भी परिवर्तन आ जाता है जब समूह से प्रभावशाली व्यक्ति कहीं चले जाते हैं। जैसे किसी विश्वविद्यालय के कुलपति का कार्यकाल पूरा हो जाने पर वे अपने पूर्व स्थान पर चले जाते हैं लेकिन जब वे विश्वविद्यालय छोड़ते हैं और जब तक कोई नया कुलपति नहीं आ जाता तब तक विश्वविद्यालय की स्थिति बिगड़ी हुई रहती है। लेकिन कुछ समूहों में ऐसी परिस्थिति का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। ऐसा तब होता है जब समूह छोड़ने वाले व्यक्तियों में कोई व्यक्तिगत संबंध नहीं होता। जैसे, विद्यार्थी प्रायः अध्ययन पूर्ण होने के बाद कालेज छोड़ते हैं लेकिन कालेज के स्वरूप में कोई परिवर्तन नहीं आता है।

सामाजिक एवं आर्थिक कारण भी समूह परिवर्तन हेतु उत्तरदायी होते हैं। जब भी किसी देश में साम्यवाद की स्थापना हुई तो उस देश का स्वरूप ही बदल गया। ऐसा कई देशों में देखा जा चुका है। समूह गतिशीलता का अध्ययन करके हम सामाजिक परिवर्तन के स्वरूप को हम अच्छी तरह से समझ सकते हैं। समूह गतिशीलता उन शक्तियों की जानकारी प्रदान करता है जो एक समूह में सक्रिय होती हैं। समूह गतिकी अध्ययन का एक ऐसा क्षेत्र है जो उन दबावों पर प्रकाश डालता है जिनसे छोटे समूह में सेवार्थियों का व्यवहार प्रभावित होता है।

समूह गतिशीलता व निर्देशन एक अलग सेवा के रूप में अपना अस्तित्व नहीं रखता है परन्तु यह निर्देशन कार्यक्रम के आधारभूत तत्व को मितव्ययीता, कुशलता एवं प्रभावशाली ढंग से पूर्ण करने का एक साधन है। यह निर्देशन की एक पद्धति है जिसके द्वारा सेवार्थियों को उनके विकास में सहायता प्रदान करती है। सामूहिक

टिप्पणी

गतिशीलता क्रियाओं की शक्ति बढ़ाने में अपना योगदान प्रदान करती है। यह अन्य क्रियाओं की मात्र सहयोगी है। यह किसी क्रिया का स्थान नहीं लेती है।

समूह गतिकी या गतिशीलता को समझने के लिए इसको तीन भागों में बांट सकते हैं–

1. **समूह का निर्माण**–समूह निर्माण में प्रायः यह देखा जाता है कि सेवार्थी कौन हैं? तथा उनकी समस्या क्या है? सामाजिक सामूहिक कार्यकर्ता संस्था के माध्यम से समूह का निर्माण करता है। समूह के निर्माण में वह देखता है कि समूह के समदस्यों की समस्यायें सजातीय हों जिससे उनकी समस्याओं का एक ही साथ निराकरण करने का प्रयास किया जा सके। वास्तव में समूह के निर्माण के बाद समूह के विकास के लिए विभिन्न प्रकार के कार्यक्रम बनाये जाते हैं जिनकी गति के बारे में जानना आवश्यक होता है। समूह के विकास की स्थिति जानने के लिए हम समूह गतिकी का सहारा लेते हैं। समूह गतिकी निम्न बिन्दुओं के माध्यम से समूह की क्रियाविधि के बारे में जानकारी प्राप्त करती है–

   (अ) सहभागिता–सामाजिक सामूहिक कार्य में सहभागिता एक ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा यह पता लगाया जा सकता है कि व्यक्ति समूह में सक्रिय भूमिका निभा रहा है या नहीं। सहभागिता के द्वारा समूह गतिकी समूह के सदस्यों के बारे में जानकारी प्राप्त करती है। समूह गतिकी समूह के सदस्यों की सहभागिता संबंधी स्थितियों का अवलोकन करती है जिससे पता चलता है कि समूह के कार्यक्रमों में अमुक व्यक्ति ने सहभाग किया है या नहीं। अगर किया है तो उसकी क्रियात्मक प्रक्रियायें कितनी प्रभावी रहीं तथा सहभागिता से सदस्य को क्या लाभ हुआ। इस प्रकार समूह गतिकी सहभागिता के द्वारा समूह के सदस्यों की प्रगति के बारे में जानकारी प्राप्त करती है।

   (ब) संप्रेषण या संचार–व्यक्ति जब समूह से जुड़ता है तो वह समूह के सदस्यों से आचार व्यवहार करने का प्रयास करता है। यदि समूह उसकी समस्याओं के अनुरूप होता है तो वह अपने आप को समूह के अनुसार ढ़ालने का प्रयास करता है। समूह के सदस्यों के मध्य संचार भी समूह गतिकी के बारे में जानकारी प्रदान करते हैं। जब व्यक्ति अपनी समस्याओं को एक दूसरे के साथ संव्यवहार करता है तो समूह की गति एवं विकास के बारे में जानकारी प्राप्त होती है। अतः संचार माध्यम से समूह की गतिशीलता का पता लगाया जा सकता है।

   (स) समस्या समाधान–समस्या समाधान समूह के सदस्यों के लिए सबसे महत्वपूर्ण कार्य है। समस्या समाधान की परिणति से समूह की गतिशीलता का पता चलता है। यदि समूह के सदस्यों की समस्याओं का निदान समयानुकूल हो रहा है तो समूह अच्छा कार्य कर रहा है तथा उसका विकास हो रहा है। कार्यकर्ता समूह के सदस्यों की समस्याओं के समाधान के लिए हमेशा प्रयासरत रहता है।

   (द) नेतृत्व–समूह में नेतृत्व के माध्यम से समूह गतिशीलता का पता चलता है। इसमें यदि समूह के सदस्यों में नेतृत्व की क्षमता का विकास हो रहा

है तो समूह के उद्देश्यों की प्राप्ति हो रही है तथा समूह गतिशील है। अतः समूह का नेतृत्व समूह गतिशीलता को इंगित करता है।

2. **समूह का विकास**–समूह का विकास भी गतिशीलता का सूचक होता है। चूंकि समूह की स्थिति में होने वाले परिवर्तनों के माध्यम से समूह की वृद्धि का पता चलता है। अतः समूह के विकास को जानने के लिये हम इसे पांच स्तरों में बांट सकते हैं। ये पांच स्तर अग्रलिखित हैं–

   (अ) प्रथम स्तर (गठन)–समूह के निर्माण का प्रथम स्तर गठन होता है। सामाजिक सामूहिक कार्यकर्ता सर्वप्रथम समूह का गठन करता है जिसमें समूह के सदस्यों की सजातीय समस्याओं को ध्यान में रखते हुए समूह का निर्माण किया जाता है। इसमें उनको प्राथमिक स्तर का परामर्श प्रदान किया जाता है।

   (ब) द्वितीय स्तर (मनन)–समूह निर्माण के बाद समूह का दूसरा स्तर समस्याओं के बारे में मनन करना होता है। इसमें समस्याओं की प्रकृति तथा उनकी स्थिति के बारे में मनन किया जाता है। समस्याओं को किस प्रकार के कार्यक्रमों के द्वारा हल किया जा सकता है के बारे में मनन किया जाता है।

   (स) तृतीय स्तर (मानदंड)–मनन के बाद समूह की सफलता हेतु मानदंडों का निर्माण किया जाता है जिससे समूह में अनुशासन बना रहे। इस प्रक्रिया में देखा जाता है कि प्रजातांत्रिक मूल्यों का क्षय न होने पाये। अर्थात् समूह के सभी सदस्यों की भावनाओं का सम्मान किया जाता है।

   (द) चतुर्थ स्तर (संपादन)–इस स्तर में समस्याओं का समाधान (संपादन) प्रस्तुत किया जाता है। ऐसे कार्यक्रमों का निर्माण किया जाता है जिससे समूह के सदस्यों की समस्याओं का निराकरण किया जा सके। जब समूह के सदस्यों का निराकरण हो जाता है तो हम समूह के पांचवें स्तर को ध्यान में रखते हैं।

   (य) पंचम स्तर (स्थगित)–इस स्तर में यह देखा जाता है कि समूह का निर्माण जिस उद्देश्य के लिए किया गया था उसका कार्य पूरा हो गया तो समूह को स्थगित या समापन कर दिया जाता है।

   अतः उपरोक्त स्तरों द्वारा भी समूह गतिशीलता यह देखने का प्रयास करती है कि समूह के सभी स्तर सही से कार्य कर रहे हैं तो समूह का विकास हो रहा है। यदि किसी स्तर पर कोई परेशानी आती है तो उसको दूर कर पुनः नये तरीके से समूह का विकास करने का प्रयास किया जाता है।

3. **समूह को सुगम बनाना**–समूह के विकास हेतु समूह को सुगम बनाया जाता है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति की भावनाओं का सम्मान किया जाता है। इसमें व्यक्तियों को अपने विचारों रखने का अवसर प्रदान किया जाता है जिससे उनकी समस्याओं का समाधान किया जा सके। यदि समूह सुगम होगा तो कार्यक्रम की सफलता का स्तर भी ऊंचा होगा। समूह को सुगम बनाने के लिए समूह निदान की प्रक्रिया को अपनाया जाता है। जिसमें समूह की समस्याओं के कारणों का पता लगाया जाता है।

टिप्पणी

समूह गतिकी की विशेषतायें–

सेवार्थियों के लिए समूह गतिकी या गतिशीलता अग्रलिखित रूपों में सहयोग प्रदान करती है जो समूह गतिकी की विशेषता है।

1. **आत्मविश्वास का विकास**–समूह गतिकी समूह के सदस्यों एवं सामाजिक सामूहिक कार्यकर्ता के आत्मविश्वास का विकास करती है। जब समूह के सदस्य तथा कार्यकर्ता समूह की स्थितियों में सकारात्मक परिर्वतन देखते हैं तो उनका आत्म विश्वास बढ़ता है।
2. **अतिरिक्त सहायता की आवश्यकता वाले सेवार्थियों के बारे में ज्ञान**–समूह गतिकी समूह के सदस्यों के बारे में अध्ययन करती है जिसमें पता चल जाता है कि कौन सा सदस्य समूह की क्रियाओं के अनुरूप कार्य नहीं कर पा रहा है। जब किसी सदस्य की स्थिति इस प्रकार की होती है तो कार्यकर्ता ऐसे सेवार्थियों को उपचारात्मक सहायता प्रदान करता है जिससे वह सेवार्थी भी समूह की परिस्थिति से कदम मिलाकर कार्य करे।
3. **सामाजिक कुशलता का विकास**–समूह गतिकी समूह के सदस्यों में सामाजिक कार्यकुशलता का विकास करती है। जब समूह के सदस्य देखते हैं कि समूह के कार्यक्रम उनकी समस्याओं के निराकरण हेतु बनाये जा रहे हैं तो वे भी अपना शत प्रतिशत योगदान करते हैं जिससे उनकी कुशलता में वृद्धि होती है।
4. **सेवार्थियों के साथ परामर्शदाता का संपर्क स्थापन**–समूह गतिकी के माध्यम से सेवार्थियों एवं परामर्शदाता में एक संबंध सा बन जाता है। इसके कारण सेवार्थी अपनी समस्याओं को परामर्शदाता से बिना किसी हिचकिचाहट के साझा करते हैं जिसकी वजह से उनकी समस्याओं का समाधान आसानी से किया जाता है।
5. **सेवार्थियों के तनाव व चिंताओं में कमी**–जब समूह के सदस्यों को समूह की प्रगति एवं विकास के बारे में पता चलता रहता है तो उनकी चिंताओं एवं तनाव में कमी आती है जिसकी वजह से कार्यक्रमों के निर्माण एवं क्रियान्वयन में आसानी होती है।
6. **परामर्शदाता की कुशलता में वृद्धि**–जब समूह की स्थितियों के बारे में जानकारी समूह कार्यकर्ता को पता चलती रहती है तो उसकी परामर्श देने की कुशलता में वृद्धि होती है। इससे कार्यकर्ता की कार्यकुशलता में वृद्धि होती है।
7. **व्यक्तिगत परामर्श की तत्परता की तैयारी**–समूह गतिकी व्यक्तिगत परामर्श की तत्परता में सहायता प्रदान करती है। समूह की स्थितियों की जानकारी जब कार्यकर्ता को होती रहती है तो वह भी अपने आपको परिस्थितियों के अनुरूप समायोजित करता रहता है जिससे वह परामर्श में अपने आप को तत्पर बनाये रखता है।

3.2.5 समूह का महत्व

समूह व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन में बड़े महत्वपूर्ण सिद्ध होते हैं। सभ्यता के विकास के साथ–साथ समूहों की संख्या में भी वृद्धि हो रही है। व्यक्तियों की आवश्यकताओं ने समूहों के महत्व को बढ़ा दिया हैं। व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति तथा समाज

के उच्च लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए अपनी योग्यता तथा निपुणता के प्रदर्शन के लिए समूहों पर निर्भर करता है। समूह के महत्व को अग्रलिखित बिन्दुओं के माध्यम से स्पष्ट किया जा सकता है–

टिप्पणी

1. **समाजीकरण में सहायक**–अबोध बालक का पालन–पोषण उसके माता–पिता द्वारा होता है। वह शिक्षा ग्रहण करता है तथा वयस्क होने पर उसके मित्र होते हैं, पड़ोस एवं समाज के लोगों से उसके संबंध बनते हैं। इस समय वह शारीरिक एवं मानसिक आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। उसके व्यक्तित्व का विकास होता है। समाजीकरण की प्रक्रिया द्वारा वह सामाजिक प्राणी बनता है। अतः समूह व्यक्ति के समाजीकरण में सहायक होते हैं।
2. **संस्कृति के हस्तांतरण में सहायक**–परिवार प्राथमिक समूह के रूप में व्यक्ति की प्रथम इकाई है। परिवार के द्वारा संस्कृति का हस्तांतरण एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक होता है जो कि सांस्कृतिक विरासत को बढ़ावा देता है। अतः समूह द्वारा संस्कृति का हस्तांतरण किया जाता है।
3. **असामाजिक प्रवृत्तियों पर नियंत्रण में सहायक**–समूह के सदस्यों का समूह के अन्य सदस्यों के साथ प्रेम एवं सहयोग के कारण असामाजिक प्रवृत्तियों पर नियंत्रण रहता है एवं मानवीय गुणों का विकास सम्भव हो पाता है। मानवीय गुणों के विकास के फलस्वरूप व्यक्ति समाज के लिए उपयोगी सिद्ध होता है। अतः समूह असामाजिक प्रवृत्तियों पर नियंत्रण करने में सहायक होते हैं।
4. **परिस्थितियों में अनुकूलता**–समूह के सदस्य कठिन परिस्थितियों में सामंजस्यता के द्वारा अनुकूलन का वातावरण विकसित करते हैं जिससे सुरक्षा की भावना का विकास होता है। अतः समूह परिस्थितियों में अनुकूलता पैदा करते हैं।
5. **सामाजिक नियंत्रण में सहायक**–सदस्यों के बीच आपसी संबंधों की घनिष्ठता के कारण समूह के सदस्य सामाजिक आदर्शों के अनुरूप व्यवहार करते हैं तथा सामाजिक प्रतिमानों को बनाये रखने का प्रयास करते हैं। इस प्रकार स्वतः ही सामाजिक नियंत्रण की प्रक्रिया चलती रहती है। इस प्रकार समूह सामाजिक नियंत्रण में सहायक होते हैं।
6. **सामाजिक परिवर्तन तथा प्रगति में सहायक**–द्वितीयक समूह समाज में प्रचलित रूढ़ियों, अंधविश्वासों, परम्पराओं तथा प्रथाओं को समाप्त कर सामाजिक परिवर्तन को प्रोत्साहन देते हैं, जो समाज की प्रगति में सहायक होती है। इस प्रकार के समूह समाज में नये आविष्कारों तथा उनके विकास में महत्वपूर्ण योगदान करके सामाजिक प्रगति के वाहक बन जाते हैं।
7. **क्षमताओं के विकास में सहायक**–द्वितीयक समूह प्रतिस्पर्धा पर अधिक जोर देते हैं। स्वस्थ प्रतिस्पर्धाओं के कारण सदस्यों में कौशल और क्षमता का विकास होता है। ऐसे समूहों में व्यक्तियों को अपने कौशल तथा प्रतिभा प्रदर्शन के अवसर प्राप्त होते हैं। इस प्रकार द्वितीयक समूह सक्षम नागरिकों के निर्माण में सहायक होते हैं।
8. **जागरूकता लाने में सहायक**–द्वितीयक समूह व्यक्ति को उसके अधिकारों और कर्तव्यों के प्रति जागरूक करते हैं। ये समूह बौद्धिकता, विवेक तथा तर्क

टिप्पणी

पर आधारित होते हैं, इनमें रहकर व्यक्ति का दृष्टिकोण बुद्धिवादी और तार्किक बनता है। इन समूहों में रहकर व्यक्ति समाज के मूल्यों, नीति–नियमों, अधिकारों तथा कानूनों से अवगत होता है तथा प्राथमिक समूहों के सीमित दायरे से बाहर निकलकर अपने अधिकारों के प्रति सजग होकर अन्याय के विरूद्ध आवाज उठाने में सक्षम होता है।

9. **श्रम विभाजन एवं विशेषीकरण को प्रोत्साहन देने में सहायक**–द्वितीयक समूह व्यक्ति में कार्य करने की क्षमता का विकास कर श्रम के प्रति लगाव पैदा कर उसे कर्मठ बनाते हैं। ये समूह व्यक्ति को श्रम का उचित पुरस्कार देकर उसे श्रम करने की प्रेरणा प्रदान करते हैं जिससे श्रम गतिशील बनता है तथा व्यक्तियों के अन्दर श्रम विभाजन के अनुसार कार्य करने की इच्छा जागृत होती है।

10. **सामाजिक नियंत्रण में सहायक**–समूह सामाजिक नियंत्रण के साधन होते हैं। वर्तमान युग के समाजों में व्यक्ति के व्यवहारों को नियंत्रित करने के लिए मात्र प्रथायें, परम्परायें, धर्म तथा रूढ़ियां ही काफी नहीं हैं। इनको नियंत्रित करने के लिए नियम कानूनों की आवश्यकता होती है। जिसके निर्माण के लिए द्वितीयक समूह कार्य करता है तथा सामाजिक नियंत्रण करने में सहायता देता है।

11. **आवश्यकताओं की पूर्ति में सहायक**–द्वितीयक समूह वर्तमान समय में समाज में व्यक्ति की बढ़ती हुई आवश्यकताओं की पूर्ति में सहायक होते हैं। व्यक्ति अपने जीवन में शिक्षा, रोजगार एवं राजनीतिक एवं सांस्कृतिक कार्यकलापों के लिए द्वितीयक समूह पर ही निर्भर होते हैं। अतः द्वितीयक समूहों के माध्यम से ही औद्योगीकरण के इस युग में व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं को पूरा कर आत्म संतोष प्राप्त करता है।

इस प्रकार उपरोक्त विशेषताओं के आधार पर हम कह सकते हैं कि समूहों के माध्यम से ही व्यक्ति के व्यक्तित्व का निर्माण होता है तथा वह समाज में अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करते हुए एक अच्छा जीवन जीने के योग्य बन पाता है।

अपनी प्रगति जांचिए

1. "जब दो या अधिक व्यक्ति सामाजिक संबंध स्थापित करते हैं, वहां समूह बन जाता है।" समूह की यह परिभाषा किसने दी है?

   (क) लैण्डिस (ख) विलियम्स

   (ग) बोगार्ड्स (घ) गिलिन एवं गिलिन

2. समूह को कितने भागों में बांटा गया है?

   (क) चार (ख) पांच

   (ग) तीन (घ) दो

3.3 समाज कार्य की प्रविधि के रूप में सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य की अवधारणा

टिप्पणी

सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य समाज कार्य की प्राथमिक प्रणालियों में से एक है, जो सामूहिक कियाओं द्वारा रचनात्मक संबंध स्थापित करने की योग्यता का विकास करता है। विभिन्न सामाजिक विज्ञानों के विकास ने यह सिद्ध कर दिया है कि व्यक्तित्व के विकास हेतु व्यक्ति की सामूहिक जीवन संबंधी इच्छाओं एवं आवश्यकताओं की संतुष्टि आवश्यक होती है। जहां एक तरफ समूह में भाग लेना व्यक्ति के लिए आवश्यक होता है, वहीं दूसरी तरफ समूह में भाग लेने से समुचित लाभ प्राप्त करने के लिए सामूहिक जीवन में भाग लेने, अपनत्व की भावना का अनुभव करने, अन्य व्यक्तियों से परस्पर संबंध स्थापित करने, मतभेदों को मिटाने तथा अपने हितों को ध्यान में रखकर कार्यक्रम नियोजित एवं संचालित करने की योग्यता होनी चाहिए। सामूहिक सेवा कार्य में इन विशेषताओं एवं योग्यताओं का विकास किया जाता है।

सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य में समूह में अन्तःक्रियाओं द्वारा रचनात्मक सम्बंध स्थापित करने का प्रयास किया जाता है। समूह में अन्तःक्रिया के माध्यम से वैयक्तिक सम्बंधों, हम की भावना, सामूहिक एकता, दृढ़ इच्छा शक्ति, व्यक्तिगत हितों या सामूहिक हितों में परस्पर एकरूपता लाने का प्रयास किया जाता है। सामूहिक समाज कार्य एक सेवा है जिसमें व्यायवसायिक निपुणताओं से सृजित कार्यकर्ता समूह की सहायता सामूहिक अनुभवों एवं वैज्ञानिक ज्ञान के आधार पर करता है, क्योंकि कार्यकर्ता समाज कार्य विषय में सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक शिक्षण–प्रशिक्षण प्राप्त किये होता है। अतः कार्यकर्ता समूह की समस्याओं का निराकरण अपने वैयक्तिक अनुभवों एवं निपुणताओं के माध्यम से आसानी से करने में पारंगत होता है।

ट्रेकर साहब कहते हैं कि जब हम कहते हैं कि सामूहिक समाज कार्य एक प्रणाली है तो इसका आशय केवल यह एक कार्य करने का तरीका ही नहीं है बल्कि इसका आशय एक क्रमानुसार व्यवस्थित तथा नियोजित, समूह के साथ कार्य करने का तरीका है। प्रविधि या प्रणाली, उद्देश्य प्राप्त करने का चेतन तरीका तथा अभिकल्पित साधन होती है। अर्थात् प्रविधि कोई भी कार्य करने का तरीका है लेकिन यहां हम सदैव ज्ञान की संगठित व्यवस्था ग्रहण शक्ति, सूझ तथा सिद्धांतों की खोज करते हैं।

प्रविधि और निपुणता में अन्तर होता है। प्रविधि का आशय ज्ञान और सिद्धांतों के आधार पर उद्देश्यपूर्ण ढंग से अन्तर्दृष्टि तथा समझ का उपयोग है। निपुणता, ज्ञान और समझ को निश्चित परिस्थिति में उपयोग करने की क्षमता है। प्रक्रिया का उपयोग प्रविधि है, निपुणता इसके उपयोग की क्षमता है। सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य समाज कार्य की एक प्रविधि है, जिसके द्वारा समाज कार्य के उद्देश्यों की पूर्ति अन्य प्रणालियों के समान ही की जाती है।

सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य की अवधारणा को स्पष्ट करने के लिये हम यहां पर कुछ विद्वानों द्वारा प्रदान की गई परिभाषाओं का जिक्र कर रहें हैं जिसके आधार पर सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य की अवधारणा स्पष्ट हो जायेगी।

क्वायल, ग्रेस के अनुसार, ''सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य का उद्देश्य सामूहिक स्थितियों में व्यक्तियों की अन्तःक्रियाओं द्वारा व्यक्तियों का विकास करना तथा ऐसी

टिप्पणी

सामूहिक स्थितियों को उत्पन्न करना जिससे समान उद्देश्यों के लिए एकीकृत, सहयोगिक सामूहिक क्रिया हो सके।''

विल्सन एण्ड रेलेण्ड के अनुसार, ''सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य एक प्रक्रिया और एक प्रणाली है, जिसके द्वारा सामूहिक जीवन एक कार्यकर्ता द्वारा प्रभावित होता है जो समूह की परस्पर संबंधी प्रक्रिया को उद्देश्य प्राप्ति के लिए सचेत रूप से निर्देशित करता है जिससे प्रजातांत्रिक लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके।''

हैमिल्टन के अनुसार, ''सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य एक मनो–सामाजिक प्रक्रिया है, जो नेतृत्व को योग्यता और सहकारिता के विकास से उतनी ही संबंधित है, जितनी सामाजिक उद्देश्य के लिए सामूहिक अभिरूचियों के निर्माण से है।''

कर्ले, आडम के अनुसार, ''सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य के एक पक्ष के रूप में, सामूहिक सेवा कार्य का उद्देश्य, समूह के अपने सदस्यों के व्यक्तित्व परिधि का विस्तार करना और उनके मानवीय सम्पर्कों को बढ़ाना है। यह एक ऐसी प्रणाली है, जिसके माध्यम से व्यक्ति के अन्दर ऐसी क्षमताओं का निर्मोचन किया जाता है जो उसके अन्य व्यक्तियों के साथ सम्पर्क बढ़ने की ओर निर्देशित होती हैं।''

ट्रेकर के अनुसार, ''सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य एक प्रणाली है जिसके द्वारा व्यक्तियों की सामाजिक संस्थाओं के अन्तर्गत समूहों में एक कार्यकर्ता द्वारा सहायता की जाती है। यह कार्यकर्ता कार्यक्रम संबंधी क्रियाओं में व्यक्तियों के परस्पर संबंध प्रक्रिया का मार्ग दर्शन करता है जिससे वे एक दूसरे से संबंध स्थापित कर सकें और वैयक्तिक, सामूहिक एवं सामुदायिक विकास की दृष्टि से अपनी आवश्यकताओं एवं क्षमताओं के अनुसार विकास के सुअवसरों को अनुभव कर सकें।''

कोनोप्का के अनुसार, ''सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य समाज कार्य की एक ऐसी प्रणाली है जो व्यक्तियों की सामाजिक कार्यात्मकता बढ़ाने में सहायता प्रदान करती है, उद्देश्यपूर्ण सामूहिक अनुभव द्वारा व्यक्तिगत, सामूहिक और सामुदायिक समस्याओं की और प्रभावकारी ढंग से सुलझाने में सहायता प्रदान करती है।''

विंटर के अनुसार, ''छोटे, आमने–सामने के समूहों में तथा उनके द्वारा व्यक्तियों की सेवा करने का सामूहिक कार्य एक तरीका है जिसके सेवार्थी भागीकृत लोगों में इच्छित परिवर्तन आ सके।''

उपरोक्त परिभाषाओं का विश्लेषण करने पर यह स्पष्ट होता है कि सभी परिभाषाओं का उद्देश्य समान है, भिन्नता मात्र शब्दों में है।

इस प्रकार उपरोक्त परिभाषाओं के आलोक में हम कह सकते हैं कि सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य एक प्रणाली है जिसमें कार्यकर्ता संस्था के माध्यम से समूह की उत्तरोत्तर वृद्धि एवं आत्मविकास हेतु कार्यक्रमों का निर्धारण उन्हीं के माध्यम से करता है और अन्तःसंबंधों की इस उत्तरोत्तर वृद्धि और विकास का आधार मानता है।

3.3.1 समाज कार्य की प्रविधि के रूप में सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य के उद्देश्य

सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य का मुख्य उद्देश्य असहाय मानव की सहायता करना तथा समूह द्वारा व्यक्तियों में आत्मविश्वास, आत्मनिर्भरता एवं आत्म निर्देशन का विकास करना है। उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर यह स्पष्ट हो गया है कि सामाजिक

सामूहिक सेवा कार्य द्वारा समूह की मनोसामाजिक समस्याओं का समाधान किया जाता है। वास्तव में सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य समूह में सामंजस्य स्थापित करता है, समूह का निर्देशन करता है तथा आत्मविश्वास में वृद्धि करता है जिससे कि समूह के प्रत्येक सदस्य को लाभ प्राप्त हो सके। सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य के उद्देश्यों के बारे में अलग–अलग विद्वानों ने अलग–अलग उद्देश्य बताये हैं। कुछ विद्वानों द्वारा दिये गए सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य के उद्देश्य अग्रलिखित हैं–

ग्रेस क्वायल ने सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य के निम्नलिखित उद्देश्यों का उल्लेख किया है–

1. समाज में सम्पूर्ण विकास हेतु व्यक्तियों को प्रोत्साहित करना।
2. व्यक्ति का अन्य व्यक्तियों के साथ एवं समूहों, समुदायों के साथ समायोजन स्थापित कराना।
3. प्रजातांत्रिक रूप से समूह के प्रत्येक सदस्यों की आवश्यकताओं और क्षमताओं के अनुरूप विकास के अवसर मुहैया कराना।
4. समूह के सदस्यों के अधिकारों, सीमाओं और योग्यताओं के साथ–साथ अन्य समूह के व्यक्तियों के अधिकारों, सीमाओं एवं योग्यताओं और अन्तरों को पहचानने में सहायता प्रदान करना।

मिर्जा रफिउद्दीन अहमद ने सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य के निम्नलिखित उद्देश्य बताये हैं–

1. व्यक्तियों के सामाजिक सामंजस्य में उन्नति करना और समूह की सामाजिक चेतना को बढ़ाना।
2. व्यक्तित्व विकास हेतु व्यक्तियों को पारस्परिक रूप से संतोषजनक अनुभव उपलब्ध कराना।
3. सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य यह चाहता है कि उन्नति एवं विकास के सर्वोच्च स्तर पर पहुंचने के लिए समूह एक इकाई के रूप में अपनी संस्था और समुदाय के अन्य समूहों से उत्तरदायी एवं सहकारी सम्बंध स्थापित करे।
4. व्यक्तियों की सहायता इस प्रकार की जाये कि वे जिस समूह या समुदाय के सदस्य हैं उसकी क्रियाओं में बुद्धिमतापूर्वक प्रतिभाग कर सकें।
5. व्यक्तियों को इस बात का अवसर प्राप्त हो सके कि वे समूह के प्रति एकता की भावना उत्पन्न कर सकें, दूसरे लोगों की स्वीकृति प्राप्त कर सकें तथा समूह में अपने को सुरक्षित महसूस कर सकें।
6. सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य व्यक्तियों को ऐसा अनुभव प्रदान करता है जो उन्हें शिथिलता प्रदान करते हैं और रचनात्मक शक्ति विकसित करने, सामूहिक जीवन में भाग लेने तथा आत्म प्रकटन करने के अवसर उपलब्ध कराता है।
7. व्यक्तियों में इस बात की योग्यता उत्पन्न करता है कि वे अपने व्यवहार के लिये स्वयं को उत्तरदायी समझे और सामाजिक जीवन में सहयोग करें।

टिप्पणी

मेहता ने सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य के निम्नलिखित उद्देश्यों को बताया है–

1. व्यक्तियों को परिपक्वता प्राप्त करने में सहायता प्रदान करना।
2. पूरक सांवेगिक तथा सामाजिक खुराक उपलब्ध कराना।
3. नागरिकता तथा प्रजातांत्रिक भागीकरण को बढ़ावा देना।
4. कुसमायोजन व वैयक्तिक तथा सामाजिक विघटन का उपचार करना।

विल्सन व रेलैण्ड ने सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य के अग्रलिखित उद्देश्य बताए हैं–

1. समूह के द्वारा व्यक्तियों के सांवेगिक संतुलन को बनाना तथा शारीरिक रूप से स्वस्थ रखना।
2. समूह के उन उद्देश्यों को प्राप्त करने में सहायता प्रदान करना जो आर्थिक, राजनैतिक एवं सामाजिक प्रजातंत्र के लिए आवश्यक हैं।

इस प्रकार उपरोक्त विद्वानों द्वारा दिये गये सामाजिक सामूहिक सेवा कार्यों के उद्देश्यों को देखने से निम्नलिखित उद्देश्य परिलक्षित होते हैं–

1. **जीवन के लिए उपयोगी आवश्यकताओं की पूर्ति करना**–वास्तव में सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य की उत्पत्ति आर्थिक समस्याओं के समाधान के लिए हुआ। लेकिन बाद में यह अनुभव किया गया कि आर्थिक समस्याओं का समाधान सभी समस्याओं का समाधान नहीं है। व्यक्ति के जीवन से संबंधित आवश्यकतायें जैसे स्वीकृति, प्रेम, भागीकरण, सामूहिक अनुभव, सुरक्षा इत्यादि को पूरा करना आवश्यक है। इसके लिए अनेक संस्थाओं का विकास हुआ जो व्यक्ति के लिए उपयोगी आवश्यकताओं की पूर्ति करती हैं तथा व्यक्तियों में सुरक्षा की भावना का विकास करती हैं।
2. **सदस्यों को महत्व प्रदान करना**–सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य प्रजातांत्रिक मूल्यों पर आधारित है जो व्यक्तियों की सहायता समूह के माध्यम से करता है। इसका विश्वास है कि यदि व्यक्तियों को उचित महत्व प्रदान किया जाये तो वे भी अपनी समस्या को हल करने में अपना शत–प्रतिशत योगदान प्रदान करेगें। अतः सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य में कार्यकर्ता समूह के सभी सदस्यों को समान महत्व प्रदान करता है।
3. **सामंजस्य स्थापित करने की शक्ति का विकास करना**–सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य में व्यक्तियों में परिस्थितियों से सामंजस्य स्थापित करने की शक्ति का विकास किया जाता है। चूंकि परिस्थितियां ही व्यक्ति को असहाय बनाती हैं। अतः यदि परिस्थितियों से एक बार सामंजस्य स्थापित करने की कला व्यक्तियों में विकसित हो गयी तो वे अपनी समस्याओं का हल आसानी से कर लेंगे।
4. **आत्मविश्वास व आत्मनिर्भरता को विकसित करना**–सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य द्वारा व्यक्तियों में आत्मविश्वास एवं आत्मनिर्भरता को विकसित किया जाता है। हम जानते हैं कि किसी व्यक्ति में आत्म विश्वास में कमी हो जाती है तो वह कोई भी निर्णय नहीं ले पाता है और समस्या से ग्रसित हो जाता है। उसी प्रकार व्यक्ति अगर आत्मनिर्भर होगा तो उसकी निर्णय शक्ति अपने

टिप्पणी

आप विकसित हो जायेगी। अतः इसके लिए सामाजिक सामूहिक सेवा कार्यकर्ता व्यक्तियों में ऐसे गुणों को विकसित करने का प्रयास करता है जिससे व्यक्तियों में आत्मविश्वास में वृद्धि हो सके व आत्मनिर्भर हो सके।

5. **प्रजातांत्रिक नेतृत्व का विकास करना**–सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य प्रजातांत्रिक मूल्यों पर कार्य करता है। इसके अन्तर्गत व्यक्तियों की सहायता इस प्रकार की जाती है जिसमें सभी व्यक्तियों की राय समान हो। यदि किसी मुद्दे पर व्यक्तियों की राय समान नहीं होती है तो वे मुद्दे छोड़ दिये जाते हैं। अतः सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य में प्रजातांत्रिक नेतृत्व का विकास किया जाता है।
6. **सामाजिक संबंधों को सुदृढ़ बनाना तथा मनोसामाजिक समस्याओं का समाधान करना**–सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य में सामाजिक संबंधों को सुदृढ़ किया जाता है। जब कोई व्यक्ति अपनी समस्या के समाधान हेतु समूह समाज कार्य की सहायता लेने आता है तो सबसे पहले उससे संबंध बनाये जाते हैं जिसके आधार पर उसकी समस्याओं को पता लगाया जाता है। जब समस्याओं का पता चल जाता है तो उसके समाधान हेतु सामाजिक सामूहिक सेवा कार्यकर्ता अपने अनुभवों एवं अभ्यास के द्वारा उसकी मनोसामोजिक समस्याओं का समाधान करता है।

3.3.2 समाज कार्य की प्रविधि के रूप में सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य की विशेषतायें

सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य के उपरोक्त परिभाषाओं के अवलोकन करने के पश्चात् निम्नलिखित विशेषतायें दृष्टिगोचर होती हैं–

1. सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य अपने वैज्ञानिक ज्ञान एवं निपुणताओं के द्वारा समूह की मनो–सामाजिक समस्याओं का निराकरण करता है।
2. सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य की पद्धति प्रजातांत्रिक है।
3. सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य समूह के उद्देश्यों और इच्छाओं पर आधारित कार्य करने के लिए समूह को प्रोत्साहित करता है।
4. सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य रचनात्मक संबंधों को प्राथमिकता प्रदान करता है तथा इसके लिए वह अन्तःक्रिया का सहारा लेता है।
5. सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य समूह के प्रत्येक सदस्य को अपने कार्य–क्षेत्र में केन्द्र बिन्दु मानकर सहायता करता है तथा यदि आवश्यकता पड़ती है तो वैयक्तिक अध्ययन प्रणाली का उपयोग नेतृत्व की क्षमता विकसित करने के लिए भी करता है।
6. इसमें सामूहिक कार्यकर्ता अपनी मुख्य भूमिका का प्रतिपादन समूह को विकसित करने के लिए करता है और अपने अनुभवों से समूह की सहायता करता है।
7. सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य किसी न किसी संस्था के द्वारा किया जाता है।
8. सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य समूह को वास्तविकता से अवगत कराता है और उनके उत्तरदायित्वों, कार्य करने, एक दूसरे की सहायता करने, समस्याओं को जानने, आत्मनिर्भरता लाने के लिए उसको जागरूक करता है।

9. सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य व्यक्तियों में प्रजातांत्रिक जीवन के आदर्शों एवं नेतृत्व की क्षमता का विकास करता है।
10. सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य सदस्यों में आत्म निर्देशन की योग्यता का विकास करता है। कार्यकर्ता समूह की सहायता उसी सीमा तक करता है जिस सीमा तक समूह आवश्यक समझता है।
11. समूह का उपयोग सामूहिक जीवन को आनंदमय बनाने के लिए किया जाता है।
12. सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य की अपनी विशिष्ट निपुणतायें, सिद्धांत एवं प्रविधियां हैं।
13. समूह सदस्यों के लिए सामूहिक कार्य एक नया अनुभव होता है।

अपनी प्रगति जांचिए

3. "छोटे, आमने–सामने के समूहों में तथा उनके द्वारा व्यक्तियों की सेवा करने का सामूहिक कार्य एक तरीका है जिससे सेवार्थी लोगों में इच्छित परिवर्तन आ सके।" सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य की अवधारणा को स्पष्ट करने के लिए यह परिभाषा किसने दी है?

   (क) ट्रेकर (ख) हैमिल्टन

   (ग) विंटर (घ) कोनोप्का

4. मेहता ने सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य के किन उद्देश्यों को बताया है?

   (क) व्यक्तियों को परिपक्वता प्राप्त करने में सहायता प्रदान करना।

   (ख) नागरिकता तथा प्रजातांत्रिक भागीकरण को बढ़ावा देना।

   (ग) उपर्युक्त में से कोई नहीं।

   (घ) (क) और (ख) दोनों

3.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

1. (क)
2. (घ)
3. (ग)
4. (घ)

3.5 सारांश

समूह का स्थान मानव समाज में महत्वपूर्ण है। जब से सभ्यता की शुरुआत हुई है तब से मानव किसी–न–किसी प्रकार से समूह में निवास करता आया है। कुछ प्रमुख विद्वानों का कहना है कि मानव ने अपनी सुरक्षा के लिये समूहों का निर्माण किया तो कुछ का मत है कि मनुष्यों ने समूहों का निर्माण अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये किया, कुछ ने तो यहां तक कहा कि मनुष्य अपनी समूहशीलता की प्रकृति के

कारण ही समूह में रहता आया है। वास्तव में समाज का निर्माण मानवों की परस्पर अन्तःक्रिया द्वारा सामाजिक संबंधों के परिणामस्वरूप होता है। इन संबंधों का निर्माण व्यक्ति समूह के माध्यम से करता है। वह समूह में रहकर ही जीवन–यापन करता है। समूह के बिना मानव जीवन की संकल्पना नहीं की जा सकती है। मानव अपनी जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये अकेला सक्षम नहीं है। इसलिये मानव अपनी जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये समूह में रहने के लिये बाध्य होता है। इस परिप्रेक्ष्य में अरस्तू ने समूह के महत्व को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। अर्थात् समूह में रहने की प्रवृत्ति व्यक्ति मूल में है और समूहो में ही व्यक्ति की सम्पूर्ण आवश्यकतायें पूर्ण होती हैं। व्यक्ति के जन्म से लेकर मृत्यु तक मनुष्य समूह की गतिविधियों पर निर्भर रहता है और सामाजिक समूह का निर्माण व्यक्तियों के संग्रह मात्र से नहीं होता है बल्कि यह एक ऐसा समूह होता है जिसमें व्यक्ति संगठित होकर परस्पर एक–दूसरे से सामाजिक संबंध स्थापित कर सामाजिक क्रिया एवं प्रतिक्रिया, जागरूकता के साथ–साथ कतिपय सामान्य स्वार्थ, हित, उत्तेजनायें एवं सामान्य प्रेरक, चालक तथा संवेगों से प्रेरित होकर एक–दूसरे के व्यवहारों को प्रभावित करते हैं, जो समूह के निर्माण में सहायक होता है।

समूह की अवधारणा विविध रूपों में समस्त प्राणियों में प्रागैतिहासिक काल से ही विद्यमान है। यह एक विश्वव्यापी अवधारणा है। सम्पूर्ण विश्व में कोई ऐसा स्थान नहीं है जहां समूह नहीं पाये जाते हैं। समी छोटे एवं बड़े आकार के प्राणियों में समूह का अस्तित्व पाया जाता है। समूह समाज की मूलभूत अवधारणा है। मानव व्यवहार के परिप्रेक्ष्य में समूह की अत्यधिक महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

समूह व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन में बड़े महत्वपूर्ण सिद्ध होते हैं। सभ्यता के विकास के साथ–साथ समूहों की संख्या में भी वृद्धि हो रही है। व्यक्तियों की आवश्यकताओं ने समूहों के महत्व को बढ़ा दिया हैं। व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति तथा समाज के उच्च लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए अपनी योग्यता तथा निपुणता के प्रदर्शन के लिए समूहों पर निर्भर करता है।

सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य समाज कार्य की प्राथमिक प्रणालियों में से एक है, जो सामूहिक कियाओं द्वारा रचनात्मक संबंध स्थापित करने की योग्यता का विकास करता है। विभिन्न सामाजिक विज्ञानों के विकास ने यह सिद्ध कर दिया है कि व्यक्तित्व के विकास हेतु व्यक्ति की सामूहिक जीवन संबंधी इच्छाओं एवं आवश्यकताओं की संतुष्टि आवश्यक होती है। जहां एक तरफ समूह में भाग लेना व्यक्ति के लिए आवश्यक होता है, वहीं दूसरी तरफ समूह में भाग लेने से समुचित लाभ प्राप्त करने के लिए सामूहिक जीवन में भाग लेने, अपनत्व की भावना का अनुभव करने, अन्य व्यक्तियों से परस्पर संबंध स्थापित करने, मतभेदों को मिटाने तथा अपने हितों को ध्यान में रखकर कार्यक्रम नियोजित एवं संचालित करने की योग्यता होनी चाहिए। सामूहिक सेवा कार्य में इन विशेषताओं एवं योग्यताओं का विकास किया जाता है।

सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य का मुख्य उद्देश्य असहाय मानव की सहायता करना तथा समूह द्वारा व्यक्तियों में आत्मविश्वास, आत्मनिर्भरता एवं आत्म निर्देशन का विकास करना है। उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर यह स्पष्ट हो गया है कि सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य द्वारा समूह की मनोसामाजिक समस्याओं का समाधान किया जाता है। वास्तव में सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य समूह में सामंजस्य स्थापित

टिप्पणी

करता है, समूह का निर्देशन करता है तथा आत्मविश्वास में वृद्धि करता है जिससे कि समूह के प्रत्येक सदस्य को लाभ प्राप्त हो सके।

3.6 मुख्य शब्दावली

- **समूह** : दो या दो से अधिक व्यक्तियों के मिलने से समूह का निर्माण होता है।
- **प्राथमिक समूह** : प्राथमिक समूहों से हमारा तात्पर्य उन समूहों से है, जिनमें सदस्यों के बीच आमने–सामने के घनिष्ठ संबंध एवं पारस्परिक सहयोग की विशेषता होती है।
- **द्वितीयक समूह** : समाज की जटिलता और अन्तःसंबंधों की व्यापकता के परिणामस्वरूप द्वितीयक समूहों का प्रादुर्भाव होता है। इनमें सदस्यों के बीच संबंध अप्रत्यक्ष होते हैं तथा उनमें जटिलता, समीपता एवं अपनेपन का पूर्ण अभाव होता है।

3.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

लघु–उत्तरीय प्रश्न

1. समूह को परिभाषित कीजिए।
2. समूह के प्रकारों का वर्णन कीजिए।
3. समूह की विशेषताओं के बारे में लिखिये।
4. समूह गतिकी पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।
5. समूह के महत्व पर प्रकाश डालिये।

दीर्घ–उत्तरीय प्रश्न

1. समाज कार्य की प्रविधि के रूप में सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य की अवधारणा को स्पष्ट कीजिए।
2. समाज कार्य की प्रविधि के रूप में सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य के उद्देश्यों का वर्णन कीजिए।
3. समाज कार्य की प्रविधि के रूप में सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य की विशेषताओं पर प्रकाश डालिये।

3.8 सहायक पाठ्य सामग्री

- Ogburn and Nimkoff, "A Hand Book of Sociology", p. 172.
- Giddens, Anthony, "Sociology", Polity Press, Cambridge, 1993, p. 285.
- Cooley, C.H., "Social Organization", Charles Scribner's Sons, New York, 1909, p. 23.
- Bierstedt, Robert, "The Social Order". New Delhi, Tata McGraw-Hill, 1970.

इकाई 4 सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य अभ्यास में कार्यक्रम नियोजन एवं नेतृत्व

संरचना

4.0 परिचय
4.1 उद्देश्य
4.2 सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रम नियोजन और विकास
  4.2.1 सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रम का अर्थ, प्रकृति एवं उद्देश्य
  4.2.2 सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रम एक प्रक्रिया के रूप में
  4.2.3 सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रम प्रक्रिया के तत्व एवं सिद्धांत
  4.2.4 नियोजन का अर्थ
  4.2.5 विकास का अर्थ
  4.2.6 कार्यक्रम नियोजन तथा विकास में कार्यकर्ताओं की भूमिका
  4.2.7 सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रम के माध्यम
4.3 नेतृत्व : अर्थ, प्रकार एवं विकास
  4.3.1 नेतृत्व का अर्थ
  4.3.2 नेतृत्व के प्रकार
  4.3.3 समूह कार्य प्रक्रिया के माध्यम से नेतृत्व विकास
4.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
4.5 सारांश
4.6 मुख्य शब्दावली
4.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
4.8 सहायक पाठ्य सामग्री

4.0 परिचय

सामाजिक सामूहिक कार्य के लिए कार्यक्रम क्यों महत्वपूर्ण होते हैं? वास्तव में कार्यक्रम एक अवधारणा है, जिसके अन्तर्गत सभी क्रियायें, सम्बंध, अंतःक्रिया, अनुभव, व्यक्ति, समूह को जान–बूझकर नियोजित किया जाता है और कार्यकर्ता की सहायता से व्यक्तियों और समूहों की आवश्यकताओं की पूर्ति की जाती है। कार्यक्रम कार्यकर्ताओं के लिए एक यंत्र के समान होता है जिसके माध्यम से वह उद्देश्य की प्राप्ति करता है। नियोजन वह प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत किसी भी कार्य के उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए तथा उनको प्राप्त करने हेतु पहले से ही योजना का निर्माण कर लिया जाता है जिससे कि कार्यक्रम की प्रक्रिया को उचित तरीके से पूर्णता तक पहुंचाया जा सके। सामूहिक सेवा कार्य में विकास शब्द का बहुत अधिक महत्व है। कार्यक्रम नियोजन ही पर्याप्त नहीं है, उसका विकास करना उतना ही आवश्यक है। नेतृत्व सामाजिक अंतःक्रियाओं को नये रूप देकर व्यक्तियों में नयी चेतना का संचार करने की एक कला है।

प्रस्तुत इकाई में सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य अभ्यास में कार्यक्रम नियोजन, और विकास पर प्रकाश डाला गया है। जिसमें सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रम की प्रकृति एवं उद्देश्यों पर विस्तृत चर्चा प्रस्तुत की गयी है, साथ ही अधिनायकवादी,

निरंकुशवादी, प्रजातांत्रिक एवं हस्तक्षेप–विहीन नेतृत्व, समूह कार्य प्रक्रिया के माध्यम से नेतृत्व का विकास किस प्रकार हो सकता है? इन तथ्यों पर प्रकाश डाला गया है।

टिप्पणी

4.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप–

- सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रम का अर्थ; प्रकृति एवं उद्देश्यों के बारे में ज्ञान प्राप्त कर पाएंगे;
- सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रम प्रक्रिया के तत्वों के बारे में जान पाएंगे;
- कार्यक्रम नियोजन तथा विकास में कार्यकर्ताओं की भूमिका को समझ पाएंगे;
- नेतृत्व के अर्थ के बारे में जान पाएंगे।

4.2 सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रम नियोजन और विकास

यहां सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रम नियोजन और विकास का विस्तारपूर्वक विवेचन किया जा रहा है–

4.2.1 सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रम का अर्थ, प्रकृति एवं उद्देश्य

समाज कार्य में कार्यक्रम का महत्व अधिक है। सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य में सेवार्थियों के व्यक्तित्व विकास में प्रत्येक क्रिया–कलाप, कार्यक्रमों के माध्यम से ही किया जाता है जिससे लक्ष्यों को आसानी से प्राप्त किया जा सके। वस्तुतः समाज कार्य में कार्यक्रम की विचारधारा ने अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। कार्यक्रम की समाज कार्य में अवधारणा नवीन है। कार्यक्रम को पहले क्रियाओं एवं घटनाओं से संबंधित किया जाता था तथा समूह उन्हीं क्रियाओं को सम्पन्न करता था जो समूह के सदस्यों एवं संस्थाओं को दिखाई देती थीं। लेकिन समय के साथ–साथ परिवर्तन होते गये और सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रम ने अपना महत्वपूर्ण स्थान स्थापित कर लिया। आज सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य में प्रत्येक क्रिया कार्यक्रम के अन्तर्गत सम्मिलित की जाती है।

अर्थ

सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रम के बारे में जानने के लिए हमें इसके अर्थों के बारे में जानना होगा। अतः कुछ विद्वानों द्वारा दी गई परिभाषाओं को हम अग्रलिखित रूप में प्रस्तुत कर रहे हैं जिससे सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रम का अर्थ स्पष्ट हो सकेगा–

ट्रेकर के अनुसार, ''साधारण भाषा में सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य के अन्तर्गत कार्यक्रम का अर्थ कोई वस्तु तथा प्रत्येक वस्तु हो गया है, जो समूह अपनी अभिरूचियों की संतुष्टि के लिए करता है।''

ट्रेकर पुनः कार्यक्रम के बारे में बताते हुए लिखते हैं कि, वृहद रूप में कार्यक्रम एक अवधारणा है, जिसके अन्तर्गत वे सभी क्रियायें, संबंध, अन्तःक्रिया, अनुभव, व्यक्ति, समूह जो जान–बूझकर नियोजित किये जाते हैं और कार्यकर्ता की सहायता से व्यक्तियों और समूहों की आवश्यकताओं की पूर्ति की जाती है, समाहित होती है। कार्यक्रम कार्यकर्ताओं के लिए एक यंत्र होता है जिसके द्वारा कार्यकर्ता उद्देश्य की प्राप्ति करता है।

क्लीन के अनुसार, ''कार्यक्रम के अन्तर्गत वह सभी आता है जिसे समूह के सदस्य करते हैं।'' उन्होंने क्रियाओं तथा कार्यक्रमों में अन्तर स्पष्ट करते हुए कहा है कि कार्यक्रम के अन्तर्गत शिल्प, अभिनय तथा खेल इत्यादि आते हैं।

नार्देन ने समूह में नियोजित तथा संरचित अंतःक्रिया का दर्शन करने के लिए सभी क्रिया प्रधान क्रियाओं का प्रयोग किया है।

मिडलेमैन के अनुसार, ''कार्यक्रम शब्द उन क्रियाओं में प्रयोग किया जाता है जो वार्तालाप के स्थान पर कार्य करने को अधिक महत्व देती हैं।''

विन्टर के अनुसार, ''कार्यक्रम एक सामान्य प्रकार की क्रियायें हैं जिसमें सामाजिक व्यवहारों की कड़ी होती है। ये व्यवहार विस्तृत संस्कृति के अर्थों तथा उपलब्धि स्तर से निर्देशित होते हैं। इन कार्यक्रम–क्रियाओं में एक अनोखे प्रकार का तरीका, एक तारतम्यता तथा निष्कर्ष होता है। कार्यक्रम में भौतिक पदार्थों के साथ अंतःक्रिया का उपयोग होता है तथा अन्तःक्रिया होती है।''

इस प्रकार हम उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर कह सकते हैं कि कार्यक्रम वे क्रियायें हैं जिनको समूह के सदस्यों द्वारा अभ्यास में प्रयोग किया जाता है तथा जिनसे सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य के उद्देश्यों को पूरा करने में सहायता मिलती है।

कार्यक्रम की प्रकृति एवं उद्देश्य

सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रम की प्रकृति क्रियात्मक होती है। इसमें वे सभी क्रियायें सम्मिलित होती हैं जिनके माध्यम से समूह का विकास हो सके। वास्तव में कार्यक्रम का उद्देश्य समूह की क्रियाओं तथा गतिविधियों को इस प्रकार से नियोजित करके संपन्न करना है जिसके समूह व समूह के सदस्यों को अधिकतम लाभ प्राप्त हो सके। इस आशय में कार्यक्रम स्वयं एक प्रक्रिया है। इसमें विषयवस्तु तथा विचार व्यक्त करने का माध्यम तथा कार्यान्वयन का तरीका सम्मिलित होता है। कार्यक्रम विषयवस्तु में जीवन के सामान्य अनुभवों को शामिल किया जाता है, जो व्यक्ति–विशेष के लिए विकास की दृष्टि से अर्थपूर्ण होते हैं। वास्तव में जब सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य की शुरुआत हुई थी तो इसका उद्देश्य लोगों को मनोरंजनात्मक क्रियाओं के माध्यम से उनके तनाव को दूर करना था तथा लोगों के जीवन को खुशहाल बनाना था। इसी परिप्रेक्ष्य में लोगों को क्रीड़ा समूह में जोड़ा जाता था और लोग भी प्रतिभाग करके इसका लाभ लेते थे। वास्तव में सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य के कार्यक्रम की विषयवस्तु में मनोरंजन से संबंधित क्रियायें होती हैं। यह क्षेत्र इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि खाली समय का सदुपयोग सामाजिक कार्यों में हो जाता है। कुछ संस्थायें घर एवं पारिवारिक जीवन को अधिक महत्व प्रदान करती हैं, क्योंकि इनमें आर्थिक तथा सामाजिक संबंधों की अनेक समस्यायें होती हैं।

4.2.2 सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रम एक प्रक्रिया के रूप में

कार्यक्रमों के व्यक्तिकरण के माध्यम वे विशिष्ट साधन होते हैं जिनके द्वारा समूह किसी विशेष क्षेत्र में क्रियायें सम्पूर्ण करता है। कार्यक्रम के माध्यमों मनोरंजन, नाटक, नृत्य, संगीत, वाद–विवाद, वार्तालाप, खेलकूद, कला, शिल्प इत्यादि आते हैं। कार्यकर्ता सर्वप्रथम कार्यक्रम को क्रियान्वित करने के लिए समूह को कार्यात्मक संगठन बनाने के लिए सहायता करता है। वह समूह की विषयवस्तु का क्षेत्र तथा प्रगटन का माध्यम चयन करने में समूह की सहायता करता है। लेकिन वह विषयवस्तु के चयन के पहले समूह की रूचियों को चिन्हित करता है। वह समूह की सहायता इस प्रकार से करता है जिससे वह अपने ही स्रोतों का उपयोग अधिक से अधिक कर सके। कार्यकर्ता का संबंध प्रधानतः तीन तथ्यों से होता है–1. विषयवस्तु क्या है? 2. कार्यक्रम का संचालन किस प्रकार होगा? तथा 3. माध्यम से कार्यक्रम क्यों चलाया जायेगा? अतः स्पष्ट है कि कार्यक्रम के तीन अंग हैं। जिनकी व्याख्या अग्रलिखित है–

1. **विषयवस्तु का क्षेत्र**–इसके अन्तर्गत समूह में होने वाली क्रियायें आती हैं। वास्तव में समूह में होने वाले सभी प्रकार के परिर्वतन जिनमें समूह कार्यक्रमों के बारे में क्या अनुभव कर रहा है? तथा उसका विकास किस दिशा में हो रहा है इत्यादि कार्यक्रम की विषयवस्तु के अंग हैं। समूह के विकास के लिए जितने भी कार्यक्रमों का निर्माण किया जाता है जैसे–मनोरंजन, शिक्षा, मनोवैज्ञानिक सहायता, शारीरिक विकास इत्यादि ये सब कार्यक्रम की विषयवस्तु होते हैं। कभी–कभी कार्यक्रम की विषयवस्तु के आधार पर समूहों का संगठन होता है। ऐसी स्थिति तब आती है जब संस्था समूह की रूचियों एवं आवश्यकताओं को अनुभव करके विषयवस्तु का चुनाव करती है। कार्यकर्ता विषयवस्तु को निर्धारित करने के बाद ही क्रियाओं को सम्पन्न करने के माध्यमों का चुनाव करता है।
2. **कार्यक्रम का माध्यम**–जब क्षेत्र एवं विषयवस्तु का चुनाव कार्यकर्ता द्वारा कर लिया जाता है तो उसके द्वारा कार्यक्रम के क्रियान्वयन हेतु माध्यम का चयन किया जाता है। इन्हीं माध्यमों द्वारा समूह साधनों एवं तरीकों का उपयोग करके अपनी निर्धारित क्रियायें करता है। इस प्रकार माध्यम का आशय उन साधनों से है जिनका उपयोग समूह अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए करता है। कार्यक्रम में नाच, गाना, कहानी, नाटक, खेल, नौटंकी, कला, इत्यादि माध्यमों का प्रयोग किया जाता है। ये क्रियायें समूह को अपनी भावनाओं को समझने व आवश्यकताओं को व्यक्त करने का अवसर प्रदान करती हैं। इस प्रकार कार्यक्रम के माध्यमों द्वारा समूह के सदस्यों की भावनाओं एवं आवश्यकताओं के बारे में आसानी जानकारी प्राप्त हो जाती है।
3. **कार्यक्रम की पद्धति**–समूह में जो भी प्रक्रिया अपनायी जाती है वे सभी कार्यक्रम की पद्धति कहलाती हैं। कार्यकर्ता उत्तरदायित्वपूर्ण निर्णय लेने के लिए सर्वप्रथम समूह की आवश्यकताओं एवं इच्छाओं की खोज करता है तथा समूह को कार्यात्मक संगठन के रूप में संगठित करता है। कार्यकर्ता कार्यक्रम की विषयवस्तु का चुनाव करता है एवं माध्यम निर्धारित करता है। समस्या का निदान करता है तथा कार्यक्रम के तथ्यों का निरूपण करता है। सबसे बाद में उपचार की प्रक्रिया आती है। अतः उपचार क्रिया के सम्पन्न होने के बाद समूह को स्थगित कर दिया जाता है।

टिप्पणी

4.2.3 सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रम प्रक्रिया के तत्व एवं सिद्धांत

सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रम प्रक्रिया के अग्रलिखित तीन तत्व होते हैं–1. सदस्य 2. कार्यकर्ता तथा 3. कार्यक्रम की विषयवस्तु। इन तीनों तत्वों की अपनी विशेषतायें होती हैं और इनके सहयोग से सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य की क्रियाओं का सम्पादन किया जाता है। सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य में सदस्य की बात करें तो स्पष्ट है कि जो भी व्यक्ति समूह से जुड़ेगा वही इसका सदस्य कहलायेगा। व्यक्ति अपनी समस्याओं के समाधान के लिए समूह से जुड़ता है तथा समूह में वह अपनी समस्याओं के निराकरण हेतु प्रयास करता है। व्यक्ति सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रमों में भाग लेता है जिससे उसके व्यक्तित्व का विकास होता है। यदि किसी कारणवश वह समूह में कठिनाई का अनुभव करता है तो उसके समाधान के लिए सामूहिक कार्यकर्ता उसकी सहायता करता है।

कार्यक्रम प्रक्रिया के तत्वों में कार्यकर्ता की भूमिका भी बहुत महत्वपूर्ण होती है। यह वह धुरी है जो सभी सदस्यों को कार्यक्रम को सफल बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करती है। सामाजिक सामूहिक कार्यकर्ता समूह के सदस्यों में सौहार्दपूर्ण माहौल बनाये रखने में अपनी भूमिका निभाता है तथा प्रजातांत्रिक मूल्यों के आधार पर सभी सदस्यों के विचारों को सुनने के बाद कार्यक्रम का निर्माण करता है। यदि कार्यक्रम सफल हो जाता है तो अन्य कार्यक्रम की रूपरेखा तैयार की जाती है अन्यथा यदि कार्यक्रम असफल हो जाता है तो उसकी कमियों की व्याख्या कर उसको दूर करके पुनः कार्यक्रम को लागू करने का प्रयास किया जाता है। वास्तविकता तो यह है कि ऐसे कार्यक्रमों का निर्माण किया जाये जिससे समूह का विकास किया जा सके। इसके लिए कार्यकर्ता हमेशा प्रयासरत रहता है।

कार्यक्रम प्रक्रिया के तत्वों में कार्यक्रम की विषयवस्तु का विशेष योगदान रहता है। यदि कार्यक्रम की विषयवस्तु रूचिकर नहीं होगी तो समूह के सदस्य पूरे मनोभाव से उसमें सहभागी नहीं होंगे तथा कार्यक्रम असफल हो जायेगा। अतः कार्यकर्ता को चाहिए कि ऐसे कार्यक्रमों का निर्माण करे जो सभी सदस्यों को रूचिकर लगे तथा सभी उसमें अपनी सहभागिता करें। इस प्रकार कार्यक्रम की विषयवस्तु के आधार पर समूह का विकास किया जा सकता है।

सिद्धांत

सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रम के सिद्धांत निम्नलिखित हैं–

1. समूह चिकित्सा के रूप में कार्यक्रम का उपयोग किया जाना चाहिए।
2. जो भी कार्यक्रम बनाये जायें वे सदस्यों की इच्छा एवं रूचियों के आधार पर बनाये जाने चाहिए तथा उनको चलाने के लिए जो भी निर्णय किये जायें वो निर्णय समूह द्वारा लिये जाने चाहिए।
3. कार्यक्रम का उपयोग समूह प्रक्रिया को परिवर्तित करने के लिए किया जाना चाहिए।

टिप्पणी

4. कार्यक्रमों का निर्माण सदस्यों की आवश्यकताओं, निपुणताओं और रूचियों के अनुरूप होना चाहिए।
5. कार्यक्रम के प्रभाव का मूल्यांकन निरन्तर होते रहना चाहिए।
6. कार्यक्रम का उपयोग समूह–कार्य के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए होना चाहिए।

4.2.4 नियोजन का अर्थ

कोई भी कार्यक्रम तब तक सफल नहीं हो सकता जब तक उसका उचित नियोजन न किया जाये। अतः कार्यक्रम नियोजन द्वारा ही उद्देश्य पूर्ति के लिए वास्तविक प्रयास किया जाता है। किसी कार्य को निश्चित लक्ष्य प्राप्त करने के लिए व्यवस्थित रूप से सम्पन्न करना ही नियोजन होता है। इसके अन्तर्गत विद्यमान परिस्थितियों तथा सम्भावित परिवर्तनों की उपयोगिता को ध्यान में रखकर एक नियमित, व्यवस्थित तथा सुसंगत रूपरेखा तैयार की जाती है, जिससे भविष्य में परिर्वतनों को अपेक्षित लक्ष्यों के अनुरूप नियंत्रित, निर्देशित तथा संशोधित किया जा सके। वास्तव में नियोजन भौतिक पर्यावरण का कुशलतापूर्वक उपयोग करने की प्रक्रिया है।

समाजशास्त्रीय शब्दकोश के अनुसार, नियोजन लक्ष्यों का आरोपण, उनकी पूर्ति के लिए साधनों की व्यवस्था और क्रियाओं के व्यवस्थित रूपों, जो कि सामान्य सामाजिक व्यवस्था से उत्पन्न होते हैं, का प्रयोग है।

हम नियोजन द्वारा समूह की सभी क्रियाओं को इस प्रकार व्यवस्थित करते हैं कि सारी प्रक्रिया को एकीकृत रूप से क्रियान्वित किया जा सके तथा समूह में परिवर्तन सम्भव हो सके। वस्तुतः नियोजन समूह के कार्यक्रमों को सफल बनाने की एक प्रक्रिया है। इसमें कार्यक्रम से संबंधित सभी पहलुओं पर विशेष ध्यान देते हुए इस प्रकार से कार्यक्रमों को क्रियान्वित करने का प्रयास किया जाता है जिससे समूह के सदस्यों का विकास हो सके। इसमें कार्यक्रम का अवबोधन एवं मूल्यांकन साथ–साथ चलता रहता है।

4.2.5 विकास का अर्थ

सामाजिक सामूहिक कार्य में विकास का महत्व बहुत अधिक है। जब हम कार्यक्रम का नियोजन करते हैं तो केवल नियोजन करना ही आवश्यक नहीं होता है, कार्यक्रम का विकास करना नियोजन करने जैसा ही महत्पूर्ण है। सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य में सामूहिक अनुभव हेतु कार्यक्रम का विकास करना अत्यंत आवश्यक होता है। हम जानते हैं कि समूह में परिवर्तन होता रहता है क्योंकि परिवर्तन एक सामाजिक प्रक्रिया है। अतः विकास की गति भी निरन्तर चलती रहती है। इसलिए कार्यक्रमों का विकास आवश्यक होता है। इसमें विकास के एक स्तर से दूसरे स्तर के साथ संबंध होता है तथा उसकी एक निश्चित दिशा होती है। यह परिवर्तन सरलता से जटिलता की ओर होता है। अतः कार्यक्रमों का विकास समूह के लक्ष्यों को प्राप्त करने में सहायक होता है। इसकी सहायता से समूह के सदस्यों के व्यक्तित्व का विकास किया जाता है।

4.2.6 कार्यक्रम नियोजन तथा विकास में कार्यकर्ताओं की भूमिका

टिप्पणी

सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य में कार्यकर्ता अग्रलिखित प्रकार से कार्यक्रम नियोजन एवं विकास में सहायता प्रदान करता है–

1. **कार्यक्रम नियोजन में समूह के सदस्यों को सहायता प्रदान करना**–समूह में कार्यक्रमों के नियोजन का दायित्व समूह के सदस्यों का होता है। सामाजिक सामूहिक सेवा कार्यकर्ता समूह के सदस्यों की सहायता कार्यक्रमों के नियोजन हेतु करता है। इससे कार्यक्रम को रचनात्मकता एवं प्रभावशीलता मिलती है क्योंकि सामाजिक सामूहिक सेवा कार्यकर्ता अनुभवी व्यक्ति होता है तथा उसे परिस्थितियों का ज्ञान होता है। इस प्रकार कार्यक्रम के नियोजन से समूह की आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। कार्यकर्ता कार्यक्रम नियोजन के लिए अनुभव प्रदान करता है, क्योंकि कार्यक्रम का नियंत्रण और विकास समूह के सदस्यों पर निर्भर नहीं होता, बल्कि अनुभव पर आधारित होता है।

   सामाजिक सामूहिक कार्यकर्ता सभी समूहों के साथ कार्यक्रम नियोजन एवं विकास में सहायता करता है जिससे समूह की आवश्यकताओं एवं रूचियों की पूर्ति होती है। वह समूह के संबंधों को दृढ़ता प्रदान करता है क्योंकि उनके आपस में संबंध तथा समूह और कार्यकर्ता के मध्य संबंध इस बात को प्रभावित करते हैं कि नियोजन किस प्रकार किया जाता है। वह यह भी देखता है कि कार्यक्रम में सभी सदस्य भाग ले रहें हैं या नहीं। यदि भाग नहीं ले रहे हैं तो उन सदस्यों को भाग लेने में कार्यकर्ता सहायता करता है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि कार्यकर्ता कार्यक्रम नियोजन में समूह के सदस्यों को सहायता प्रदान करता है।

2. **समूह के सदस्यों की रूचियों की खोज करना तथा उनको उत्पन्न करना**–समूह के सदस्यों की रूचियों एवं उनको खोजना सामाजिक सामूहिक कार्यकर्ता का उत्तरदायित्व है। समूह की रूचियां यदि पता चल जाती हैं तो कार्यक्रम का निर्माण करना आसान हो जाता है। इसलिए सामाजिक सामूहिक कार्यकर्ता की विशेष जिम्मेदारी है कि वह समूह की रूचियों का पता लगाये तथा उनको समूह के अनुसार ढ़ालने का प्रयास करे। कभी–कभी समूह के सदस्यों की रूचियां समूह के सदस्यों के मध्य अलग–अलग होती हैं। अतः कार्यकर्ता यह प्रयास करता है कि उन रूचियों को समान दिशा दी जाये जिससे कार्यक्रम नियोजन में आसानी हो सके। जब रूचियों का पता चल जाता है तो कार्यकर्ता समूह की उन्नति एवं विकास का स्तर निर्धारित करता है। वह समूह के आयु के आधार पर कार्यक्रम का निर्धारण करता है जिससे कि समूह का अधिकतम विकास किया जा सके। इस प्रकार समूह कार्यकर्ता समूह की रूचियों की खोज करता है तथा उनको सम्पन्न करने का प्रयास करता है।

3. **पर्यावरण का उपयोग करना**–सामाजिक सामूहिक सेवा कार्यकर्ता नये कार्यक्रम क्रियाओं के विकास हेतु पर्यावरण का उपयोग करता है। संस्था के यंत्र तथा सुविधाओं यथा–स्वास्थ्यवर्धक कक्ष, रिकार्ड प्लेयर, पुस्तकालय, तैरने का सामान, फुटबॉल, वालीबॉल आदि समूह के सदस्यों को विशेष प्रकार की क्रियायें करने के लिए उत्साहित करता है। यदि दूसरे प्रकार की सुविधाएं यथा–नाटक, संगीत,

कला, शिल्प इत्यादि उपलब्ध होती हैं तो कार्यक्रम का एक विशेष रूप होता है। यदि संस्था कोई सुविधा नहीं देती है तो समूह की इच्छानुसार ही क्रियाओं का सम्पादन किया जाता है। इस प्रकार कार्यकर्ता पर्यावरण का उपयोग करके समूह का विकास करता है।

4. **सीमाओं का उपयोग करना**–समूह की कार्यप्रणाली संस्था में उपलब्ध आर्थिक, भौतिक एवं सामाजिक साधनों से निर्धारित होती है। अर्थात् समूह वही कार्यक्रम कर सकता है जिसके संसाधन संस्था के पास उपलब्ध होते हैं। सामाजिक सामूहिक सेवा कार्यकर्ता समूह को संस्था में निहित संसाधनों की उपलब्धता के आधार पर ही कार्यक्रम को करने के लिए प्रोत्साहित करता है। कार्यकर्ता ऐसे कार्यक्रमों को समूह द्वारा निर्धारित एवं क्रियान्वित कराने का प्रयास करता है जो संस्था की सीमा के अन्तर्गत किये जा सकते हों। कार्यकर्ता अपनी सुझ–बूझ का उपयोग करते हुए समूह के कार्यक्रमों का निरूपण इस प्रकार कराने का प्रयास करता है जिससे समूह के सदस्यों का विकास भी हो जाये तथा संस्था पर अधिक भार भी न पड़े।

5. **समूह के सदस्यों की बातों को समझना तथा अवलोकन करना एवं कार्य करना**–सामाजिक सामूहिक कार्यकर्ता समूह के सदस्यों की बातों को समझने का प्रयास करता है। वह देखता है कि यदि किसी सदस्य को कोई परेशानी हो रही है तो उसको परामर्श के द्वारा दूर करने का प्रयास करता है। कार्यकर्ता अवलोकन प्रविधि का उपयोग करते हुए समूह के सदस्यों पर अपनी दृष्टि बनाये रखता है तथा सदस्यों के विकास के लिए ऐसे कार्यक्रमों का निर्माण कराने की कोशिश करता है जिसमें सभी सदस्य भाग लें एवं तथा ऐसे कार्यक्रमों का लाभ उनको प्राप्त हो।

6. **विश्लेषण एवं अभिलेखन करना**–सामाजिक सामूहिक कार्यकर्ता समूह की स्थितियों की व्याख्या एवं विश्लेषण करता है। जहां पर आवश्यक समझता है वहां पर अपनी राय भी देता है। वह देखता है कि ऐसी कोई परिस्थिति न उत्पन्न हो जाये जिसके कारण समूह का विकास अवरुद्ध हो जाये। कार्यकर्ता समूह की गतिविधियों के बारे में अभिलेख तैयार करने हेतु अभिलेखन प्रक्रिया का सहारा लेता है। इस अभिलेखन में कार्यकर्ता समूह की सारी गतिविधियों को लिखता है जो समूह की स्थितियों को स्पष्ट करने में सहायता प्रदान करती है। यह अभिलेखन कार्यकर्ता के लिए महत्वपूर्ण होने के साथ–साथ भविष्य में अन्य कार्यकर्ताओं को भी लाभ प्रदान करता है।

7. **निरीक्षण करना एवं परामर्श प्रदान करना**–सामाजिक सामूहिक कार्यकर्ता समूह का सूक्ष्म निरीक्षण करता है। समूह के सदस्यों को यदि किसी प्रकार की समस्या आ रही होती है तो उसको दूर करने का प्रयास करता है। यदि कोई समूह का सदस्य समूह के साथ अपने आप को समायोजित नहीं कर पाता है तो उसको कार्यकर्ता परामर्श प्रदान कर समायोजित करने का प्रयास करता है। इस प्रक्रिया हेतु कार्यकर्ता वैयक्तिक सामाजिक सेवा कार्य का भी उपयोग करने का प्रयास करता है जिससे समूह के सदस्यों की वैयक्तिक समस्या का समाधान किया जा सके।

8. **शिक्षा प्रदान करना तथा नेतृत्व का विकास करना**–सामाजिक सामूहिक सेवा कार्यकर्ता समूह के सदस्यों को शिक्षा प्रदान करता है जिससे समूह के सदस्य सामूहिक क्रियाओं को समझ सकें। जब सदस्य सामूहिक क्रियाओं को समझ लेते हैं तो वे समूह की क्रियाओं मे आसानी भाग लेने लगते हैं। समूह के सदस्यों को लगने लगता है कि समूह की सभी क्रियायें उनके विकास के लिए बनायी जा रही हैं तो वे समूह के कार्यक्रम निर्माण में अपनी राय भी प्रदान करने लगते हैं। कार्यकर्ता समूह के साथ कार्य तो करता है लेकिन नेतृत्व प्रदान नहीं कर सकता। इसके लिए वह समूह के सदस्यों में नेतृत्व का विकास करता है तथा समूह के सदस्यों में से ही प्रजातांत्रिक तरीके से एक नेता का चुनाव कराने का प्रयास करता है जिसके माध्यम से समूह की सभी क्रियायें संचालित कराने का प्रयास करता है।
9. **समूह के सदस्यों को निपुणता प्राप्त करने में सहायता प्रदान करना**–समूह के सदस्य जब समूह से जुड़ते हैं तो उनके पास समूह की समस्याओं से निपटने के लिए निपुणता का अभाव होता है। इसके लिए कार्यकर्ता समूह के सदस्यों को निपुणता प्राप्त करने में सहायता करता है। कार्यकर्ता अपने अनुभव के आधार पर समूह के सदस्यों के मध्य समस्याओं से निपटने के लिए रणनीतियां कैसे बनाई जाय तथा उनका क्रियान्वयन किस प्रकार किया जाय के बारे में जानकारी प्रदान करता है। अतः कार्यकर्ता समूह के सदस्यों को निपुणता प्राप्त करने में सदस्यों की सहायता करता है।
10. **नेतृत्व में सहायता करना**–सामाजिक सामूहिक कार्यकर्ता जब समूह के सदस्यों के मध्य नेता का चुनाव संपन्न करा चुका होता है तो वह नेता को विभिन्न प्रकार की क्रियाओं को करने में सहायता प्रदान करता है। वह नेतृत्व कर्ता को यह बताने का प्रयास करता है कि सभी सदस्य समान हैं जिनके विकास के लिए सभी को साथ लेकर चलना आवश्यक है। वह समूह के सदस्यों को आंतरिक एवं बाहरी संसाधनों की जानकारी प्रदान करता है जिससे समूह का विकास किया जा सके।
11. **विशेशज्ञता का उपयोग करना**–सामाजिक सामूहिक सेवा कार्यकर्ता समूह के विकास के लिए अपनी विशषज्ञता का उपयोग करता है। कार्यकर्ता जो भी समाज कार्य विषय की डिग्री लेने के दौरान ज्ञान अर्जित किया होता है उनका उपयोग समूह के विकास हेतु करता है। कार्यकर्ता समूह में जो भी क्रियायें होती हैं उनका उपयोग वैज्ञानिक प्रविधि के अनुरूप समूह के सदस्यों से कराने का प्रयास करता है।

4.2.7 सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रम के माध्यम

सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य व्यक्ति एवं समूह का विकास विभिन्न कार्यक्रमों के द्वारा करने का प्रयास करता है। कार्यक्रम के इन माध्यमों में खेल–कूद, मनोरंजनात्मक क्रियायें, नृत्य, संगीत, कहानी, नाटक, कला, शिल्प, सिलाई, कढ़ाई, चित्रकारी, प्राकृतिक अध्ययन, शैक्षिक भ्रमण इत्यादि का सहारा समूह के विकास में लिया जाता है। समूह के लिए कार्यक्रम के माध्यम वे यंत्र होते हैं जिनका उपयोग समूह द्वारा इच्छित व्यक्तिगत एवं सामाजिक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए किया जाता है। इस प्रकार समूह

के कार्यक्रम का उद्देश्य उन लक्ष्यों को प्राप्त करना है जिनको सदस्य चाहते हैं तो कार्यक्रम की विषयवस्तु तथा उसके कार्यान्वयन का तरीका उन्हीं के अनुसार व्यवस्थित तरीके से होना चाहिए।

टिप्पणी

मानव जीवन में मनोरंजन संबंधी कार्यक्रम क्रियाओं का विशेष महत्व है, क्योंकि इससे अग्रलिखित आवश्यकताओं की पूर्ति होती है–

1. व्यक्ति को कार्यक्रम क्रियाओं भाग लेने से आनंद की अनुभूति होती है तथा शरीर में ताजगी व स्फूर्ति बनी रहती है।
2. व्यक्ति में शारीरिक व सांवेगिक शक्ति का संचार होता है।
3. व्यक्ति के आत्म नियंत्रण व आत्म उपयोग हेतु निपुणता की प्राप्ति होती है।
4. व्यक्ति अपनी कल्पनाओं को नाटक, नृत्य, संगीत के माध्यम से एक नई उड़ान दे सकता है।
5. व्यक्ति को साहसिक कार्यों को करने का अवसर प्राप्त होता है।
6. व्यक्ति को कार्यक्रम क्रियाओं द्वारा सुरक्षा प्राप्त होती है।
7. व्यक्ति में सामाजिकता का गुण विकसित होता है।
8. व्यक्ति के जीवन में कार्यक्रम क्रियाओं द्वारा मधुर स्मृतियां बनती हैं तथा संबंधों में घनिष्ठता आती है।

सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य में कुछ कार्यक्रम के माध्यमों का वर्णन निम्नलिखित रूप से प्रस्तुत किया जा रहा है जो कार्यक्रम के माध्यमों के महत्व को स्थापित करते हैं तथा जिनसे समूह के सदस्यों का विकास सम्भव हो पाता है।

क्रीडा–क्रीड़ा व्यक्ति के लिये कितनी महत्वपूर्ण है इस बात का पता इस आधार पर चलता है कि क्रीड़ा की सम्प्रेरणा के लिए अनेक दार्शनिकों, मनोवैज्ञानिकों, समाजशास्त्रियों, शिक्षाशास्त्रियों तथा मनोरंजनात्मक ज्ञानविदों ने अनेक सिद्धांतों का प्रतिपादन किया है। इन सिद्धांतों को शारीरिक वृद्धि, शक्तिवर्धन, अतिरिक्त ऊर्जा, सामाजिक आवश्यकता, आत्म–प्रगटन, मनोरेचन इत्यादि नामों से जाना जाता है। रेन वाटन नामक विद्वान ने क्रीड़ा को परिभाषित करते हुए लिखा है कि, ''क्रीड़ा मानव–व्यवहार का वैयक्तिक या सामूहिक माध्यम है जिसमें मनोरंजनात्मक क्रियायें बिना किसी पुरस्कार की इच्छा से सम्पन्न की जाती हैं तथा किसी की आयु स्तर पर सम्पन्न होती हैं। उससे संबंधित विशेष क्रियाएं उसी अवसर पर समूह की दैहिक संरचना तथा सामाजिक मनोवृत्तियों के द्वारा निश्चित की जाती हैं।''

क्रीड़ा सभी आयु वर्ग के लोगों के लिए समान रूप से महत्वपूर्ण होती है। कार्यक्रम क्रिया का चुनाव व्यक्ति–विशेष की रूचि एवं समूह की रूचियों के आधार पर चयन किया जाता है। प्रत्येक व्यक्ति के सामूहिक संबंध तथा व्यक्तित्व कार्यक्रम विषयवस्तु के चयन में महत्वपूर्ण होता है।

खेल–खेल में निश्चित तरीका, निश्चित क्रियायें तथा निश्चित नियम एवं कार्यविधियां होती हैं। जब कार्यकर्ता इन तीनों तत्वों तथा उनके मूल्यों से परिचित हो जाता है तो खेलों को वर्गीकृत करता है तथा समूह विशेष की आवश्यकतानुसार चुनाव करता है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि जब एक बार खेल शुरू हो जाता है तो ये दोनों कारक अन्तःक्रिया–प्रक्रिया के रूप में एक साथ प्रभावकारी होते हैं। खेल के तरीके

टिप्पणी

प्रायः निश्चित होते हैं, जो दो प्रकार के होते हैं–पहला, सदस्यों का स्थान निश्चित होता है तथा दूसरा सदस्य खेल के मैदान में बिखरे रहते हैं, उनका कोई निश्चित स्थान नहीं होता है।

खेल से समूह के सदस्यों में स्वस्थ प्रतिस्पर्धा की रूचि जागृत होती है जिसके कारण समूह का विकास होता है। कार्यकर्ता समूह के सदस्यों में खेल भावना जगाने का कार्य करता है।

नृत्य–हमारे समाज में नृत्य को मानव जीवन में भाव व्यक्त करने सशक्त माध्यम माना जाता है। यह विशेष रूप से उन बातों एवं भावनाओं को स्पष्ट करने में प्रभाकारी है जिन्हें सामान्य रूप से वर्णन नहीं किया जा सकता है। यह एक प्रकार की कला है जिसके माध्यम से सांवेगिक विषयों को व्यक्त किया जाता है जिसके लिए शब्द कम होते हैं। नृत्य न केवल किसी विशेष समूह की भावनाओं को व्यक्त करता है बल्कि इससे सम्पूर्ण संस्कृति का ज्ञान होता है। वर्तमान में भी नृत्य को उपचार के रूप में देखा जाता है जिसको नृत्य चिकित्सा के नाम से जाना जाता है।

समूह कार्यकर्ता समूह के सदस्यों की समस्याओं को सुलझाने के लिए व उनकी भावनाओं को व्यक्त करने के लिए नृत्य का सहारा लेता है। वह समूह के सदस्यों से उनकी रूचि के अनुसार नृत्य करने को कहता है जिससे उनके संवेग नृत्य के माध्यम से कार्यकर्ता के सामने आ जाते हैं। इसका उपयोग बहुत ही सावधानी से किया जाता है।

संगीत–समाज से संगीत का नाता बहुत प्राचीन है। यह एक सार्वभौमिक भाषा है जिसको परिभाषित करने की विशेष आवश्यकता नहीं है, क्योंकि संगीत तथा व्यक्ति का नाता बहुत पुराना है। यह इतना शक्तिशाली माध्यम है कि लोगों के मध्य संबंध अतिशीघ्र निर्मित कर देता है। यह व्यक्ति के जीवन को निराशा की अंतिम सीढ़ी तक ले जा सकता है और जीवन में आशा का संचार भी उतनी ही तीव्रता से कर सकता है। अतः समूह के सदस्यों के मध्य जीवन्तता बनाये रखने तथा उनकी संप्रेरणाओं को जगाये रखने के लिए समूह कार्यकर्ता इसका प्रयोग करता है। संगीत कार्यक्रम के माध्यम से समूह के सदस्यों को एक इकाई के रूप में कार्य करने की प्रेरणा कार्यकर्ता करता है।

कहानी–समूह समाज कार्य में कहानी कार्यक्रम का वह सशक्त माध्यम है जिसके द्वारा समूह कार्यकर्ता लोगों की अव्यक्त भावनाओं को जान लेता है। ऐसा इसलिए सम्भव हो पाता है क्योंकि जब समूह के सदस्यों से कार्यकर्ता कहानी कहने के लिए प्रेरित करता है तो समूह के सदस्य अपने जीवन से संबंधित घटनाओं को कहानी के रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास करते हैं। ऐसा नहीं है कि समूह के सभी सदस्य ऐसी ही कहानी को कहते हैं जो उनके जीवन से संबंधित होती है। लेकिन कुछ सदस्य जरूर अपने जीवन को कहानी के रूप में प्रस्तुत कर देते हैं। इस कार्यक्रम के माध्यम से समूह के सदस्य अपने अचेतन मन की बातों को कार्यकर्ता के सामने प्रस्तुत कर देते हैं।

नाटक–यह एक ऐसा माध्यम है जिसमें व्यक्ति क्रियाओं एवं शब्दों दोनों का इस्तेमाल अपनी प्रतिभा दिखाने में करता है। इसके माध्यम से विचारों एवं भावनाओं को व्यक्त किया जाता है। नाटककार स्वयं आकर्षण का केन्द्रबिन्दु होता है। अतः उसका विचार

अपनी भूमिका को अधिक से अधिक बेहतर तरीके से करने का होता है। इसमें समूह के स्थान पर व्यक्ति सदस्य की उपलब्धियों का मूल्यांकन किया जाता है। इसी कारण नाटक का माध्यम सभी वर्ग के सदस्यों को रूचिकर नहीं लगता है। फिर भी व्यक्तियों तथा समूहों की समस्याओं के समाधान में नाटकों के महत्व को नकारा नहीं जा सकता है।

इस प्रकार हमने देखा कि कार्यक्रम के माध्यम कितने सशक्त होते हैं जिनके माध्यम से समूह के व्यक्तियों की समस्याओं का समाधान करने का प्रयास किया जाता है। माध्यम ही वह युक्ति होते हैं जिनसे सामाजिक सामूहिक सेवा कार्यकर्ता समूह के सदस्यों की भावनाओं को प्रकट करा पाता है और उन भावनाओं के आधार पर उनकी सहायता कर पाता है।

अपनी प्रगति जांचिए

1. "कार्यक्रम के अंतर्गत वह सभी आता है जिसे समूह के सदस्य करते हैं।" सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रम की यह परिभाषा किसने दी है?

   (क) क्लीन (ख) ट्रेकर

   (ग) विन्टर (घ) नार्देन

2. सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रम प्रक्रिया के कितने तत्व होते हैं?

   (क) दो (ख) तीन

   (ग) चार (घ) पांच

4.3 नेतृत्व : अर्थ, प्रकार एवं विकास

यहां नेतृत्व के अर्थ को बताते हुए नेतृत्व के प्रकार और विकास का प्रतिपादन किया जा रहा है।

4.3.1 नेतृत्व का अर्थ

नेतृत्व एक सर्वव्यापी घटना है। समाज में नेतृत्व हमेशा से विद्यमान रहा है और हमेशा ही नेतृत्व होता आया है। समाज की शक्ति संरचना में नेतृत्व का महत्वपूर्ण स्थान है। नेतृत्व ही राजनीतिक संगठनों एवं शक्ति संरचना को जीवन, दिशा और प्रवाह करता है। वर्तमान जटिल समाजों में तो सम्पूर्ण सामाजिक व्यवस्था नेतृत्व पर आधारित है। नेतृत्व के अध्ययन के बिना हम राजनीतिक संगठनों और संरचनाओं की 'कार्य प्रणाली' को नहीं समझ सकते। इसलिए समाज वैज्ञानिकों ने अपना ध्यान नेता और अभिजात वर्ग के अध्ययन की ओर लगाया है। वर्तमान में नेतृत्व से संबंधित अनेक अध्ययन राजनीतिज्ञों, मनोवैज्ञानिकों एवं समाजशास्त्रियों द्वारा किये गये हैं। इनका संबंध नेतृत्व की परिभाषा, उत्पत्ति, सिद्धांत, कार्य, विशेषताओं और स्रोतों को ज्ञात करने से रहा है। शक्ति का सदुपयोग एवं दुरूपयोग नेता की योग्यता एवं क्षमता पर आधारित होता है। प्रत्येक समाज की शक्ति संरचना में कुछ ऐसे व्यक्ति होते हैं जो लोगों को हमेशा प्रोत्साहित करते हैं तथा प्रेरणा प्रदान करते हैं, मार्गदर्शन देते हैं या लोगों को क्रिया

करने के लिए प्रभावित करते हैं। ऐसी क्रिया को नेतृत्व और ऐसे व्यक्तियों को नेता, शक्ति धारण करने वाले, शक्ति मानव, शक्ति केन्द्र और शक्ति अभिजात कह सकते हैं। ऐसे व्यक्ति समूह के अन्य लोगों से अपनी भूमिका, प्रभाव और सामाजिक शक्ति के कारण ही भिन्न होते हैं। अतः जहां भी जीवन है वहां समाज होता है और जहां समाज होता है वहां नेतृत्व होता है। व्यक्ति की प्रतिभा और सामाजिक परिस्थितियां व्यक्ति में नेतृत्व के भाव को जाग्रत करती हैं। वर्तमान में प्रभाव एवं प्रभुत्व ने भी नेतृत्व को जन्म दिया है।

नेता समाज अथवा समूह की गतिविधियों और व्यवस्था संचालन के लिए महत्पूर्ण होता है। वृहद् समूह अथवा समाजों में नेतृत्व का विशाल रूप हमें देखने को मिलता है। लेकिन दो व्यक्तियों के मध्य में भी हमें एक व्यक्ति में नेतृत्व शक्ति का आभास दिखता है। उनमें से एक व्यक्ति यदि किसी कार्य का प्रस्ताव रखता है तो दूसरा व्यक्ति उसे मान लेता है तथा उसके निर्देशानुसार कार्य में लग जाता है। ऐसे व्यक्ति में नेतृत्व करने की शक्ति होती है।

नेतृत्व के अर्थ को समझने के लिए कुछ विद्वानों द्वारा प्रदान की गई परिभाषाओं का अवलोकन करना आवश्यक है। अतः यहां पर नेतृत्व की परिभाषा जो विभिन्न विद्वानों द्वारा प्रदान की गई, का उल्लेख किया जा रहा है–

मैकाइवर तथा पेज के अनुसार, ''नेतृत्व से हमारा तात्पर्य व्यक्ति को मानना या निर्देशित करना है जो चेहरे के अतिरिक्त वैयक्तिक गुणों से होता है।''

लेपियर तथा फांसवर्थ के अनुसार, ''नेतृत्व वह व्यवहार है जो दूसरे व्यक्तियों के व्यवहार को उससे कहीं अधिक प्रभावित करता है जितना कि उन दूसरे लोगों का व्यवहार नेता का प्रभावित करता है।''

सीमेन तथा मोरिस के अनुसार, ''नेतृत्व का तात्पर्य एक व्यक्ति द्वारा की जाने वाली उन क्रियाओं से है जो दूसरे व्यक्तियों को एक विशेष दिशा में प्रभावित करती है।''

ब्रिट्ट के अनुसार, ''नेतृत्व एक चलनशील उत्तेजनात्मक या पारस्परिक पुष्टिकरण की प्रक्रिया है जो महत्वपूर्ण अन्तरों के सफलतम अन्तःक्रिया के द्वारा सामान्य उद्देश्यों के लिए मानव शक्ति को नियंत्रित करती है।''

गिब के अनुसार, ''नेतृत्व एक प्रत्यय है जो दो या अधिक व्यक्तियों की अन्तःक्रियाओं के लिए प्रयुक्त होता है तथा नेता का मूल्यांकन सामान्य लक्ष्यों की प्राप्ति में दूसरों की क्रियाओं को नियन्त्रित एवं निर्देशित करता है।''

कूपर तथा मैकगाथ के अनुसार, ''नेतृत्व को खींचना, ढकेलना कारक के रूप में वर्णित किया जा सकता है जो कि लोगों में प्रभुत्व आज्ञाकारी संबंधों में कार्य करता है।''

किम्बाल यंग के अनुसार, ''प्रभुत्व को शक्ति के ऐसे साधन के रूप में देखा जा सकता है जिसका उपयोग एक व्यक्ति द्वारा दूसरे व्यक्तियों की मनोवृत्तियों और क्रियाओं को निश्चित करने तथा उन्हें परिवर्तित करने के लिए किया जाता है, जिसे हम साधारणतया नेतृत्व कहते हैं। इसकी विवेचना सही तौर पर प्रभुत्व के रूप में ही की जानी चाहिए।''

अतः उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर हम कह सकते हैं कि प्रभुत्व की शक्ति या सत्ता का तत्व आवश्यक रूप से जुड़ा होता है। प्रभुत्व द्वारा व्यक्तियों के व्यवहारों

टिप्पणी

में जो परिवर्तन किया जाता है वह साधारणतया दबाव के द्वारा होता है। इसके विपरीत नेतृत्व व्यक्तियों के व्यवहारों में जो परिवर्तन उत्पन्न करता है, वह ऐच्छिक होता है। जिसे साधारण रूप नेतृत्व कहा जाता है, इसकी विवेचना सही तौर पर प्रभुत्व के रूप में ही की जानी चाहिए।

नेतृत्व की विशेषतायें–

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर नेतृत्व की अग्रलिखित विशेषतायें हो सकती हैं–

1. औपचारिक एवं अनौपचारिक दृष्टि से नेतृत्व में भेद पाया जाता है।
2. नेतृत्व का निर्धारण मात्रा में ही सम्भव है।
3. जो व्यक्ति नेतृत्व करते हैं उनमें कार्य को पूरा करने की प्रभावी योग्यता एवं क्षमता होती है।
4. नेतृत्व की विशेषतायें व्यक्तिगत होती हैं, वंशानुगत नहीं।
5. नेतृत्व का संबंध केवल प्रतिष्ठा, पद, और क्षमता से ही संबंधित नहीं है बल्कि इसका संबंध प्रभावपूर्ण तरीके से कार्य को करने से है।
6. नेतृत्व में सामाजिक अन्तःक्रिया सम्मिलित होती है
7. नेता का समूह में केन्द्रीय स्थान होता है।
8. नेतृत्व की प्रकृति संचयी होती है।
9. नेतृत्व की शुरुआत वहां से होती है जहां सारे समूह द्वारा सामूहिक क्रिया की जा रही होती है।
10. नेतृत्व औपचारिक एवं अनौपचारिक हो सकता है।
11. नेतृत्व एक विशेष प्रकार का व्यवहार होता है जिसमें प्रभुत्व, सुझाव तथा आग्रह इत्यादि का सम्मिश्रण होता है।
12. नेतृत्व द्विमुखी प्रक्रिया है जिसमें दो नेता तथा अनुयायी कार्य करते हैं।
13. नेतृत्व से संबंधित प्रभाव दबाव से मुक्त नहीं होता है। इसे साधरणतया स्वेच्छा से ग्रहण किया जाता है।
14. नेतृत्व नियोजित नहीं होता बल्कि इसमें विचारपूर्वक अनुयायियों के व्यवहारों को एक निश्चित दिशा प्रदान की जाती है।
15. नेतृत्व के द्वारा समूह के सदस्यों की भावनाओं, दृष्टिकोणों, व्यवहारों एवं क्रियाओं को प्रभावित किया जाता है।
16. नेतृत्व कई प्रकार के हो सकते हैं।

4.3.2 नेतृत्व के प्रकार

नेतृत्व के प्रकारों के बारे में दृष्टि डाली जाय तो स्पष्ट होता है कि इसके विभिन्न प्रकार होते हैं। भिन्न विद्वानों ने इसके भिन्न–2 प्रकारों का वर्णन अपने विवेक के अनुसार किया है। यहां पर हम कुछ विद्वानों द्वारा दिये गये नेतृत्व के प्रकारों का वर्णन प्रस्तुत कर रहे हैं जिससे नेतृत्व के प्रकारों के बारे में ज्ञानवर्धन हो सकता है।

1. किम्बाल यंग के अनुसार नेतृत्व के प्रकार–किम्बाल यंग ने नेतृत्व के सात प्रकारों के बारे में वर्णन किया है, जो अग्रलिखित हैं–

(अ) राजनीतिक नेता–आधुनिक प्रजातंत्र की देन है राजनीतिक नेता। इनका कार्य क्षेत्र शहर व राज्य स्तर पर होता है जिनका संबंध किसी राजनीतिक दल से होता है। इस प्रकार के नेता संघर्ष करते हुए अपने अस्तित्व का निर्माण करते हैं तथा सत्ता को अपने हाथ में लेने के लिए संघर्ष के वातावरण का निर्माण करते हैं। इस प्रकार के नेता को एक अच्छा कार्यकर्ता होना चाहिए जिससे कि वे चुनाव में सफलता प्राप्त कर सकें।

(ब) प्रजातंत्रात्मक नेता–इस प्रकार के नेताओं का अस्तित्व प्रजातंत्र ही होता है परन्तु ये राजनीतिक दल के बाहर भी क्रियाशील होते हैं। इस प्रकार के नेता सहिष्णु एवं समझौता कराने वाले होते हैं। इनका कानून एवं व्यवस्था में दृढ़ विश्वास होता है।

(स) नौकरशाही नेता–इस प्रकार के नेताओं का अस्तित्व सरकारी तंत्र से होता है तथा ये व्यावहारिक, सैद्धांतिक, बुद्धिमान और कर्तव्यनिष्ठ व कार्य के प्रति अनुशासित होते हैं। ये कानून के आधार पर कार्य करना पसंद करते हैं तथा एक निश्चित कार्य–प्रणाली को ही बनाये रखने का आग्रह करते हैं।

(द) कूटनीतिज्ञ नेता–इस प्रकार के नेता सरकार या संस्था का प्रतिनिधित्व करते हैं एवं सरकार द्वारा बनाये गये नियमों के आधार पर ही कार्य करते हैं। ये अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए दोहरी नीति का प्रयोग करते हैं। ये अपने शब्दों का प्रयोग बहुत ही नाप–तौल करके करते हैं। कहा जाता है कि कूटनीतिज्ञ नेता 'हां' कहता है तो उसका आशय 'शायद' होता है तथा जब वह 'शायद' कहता है तो उसका आशय 'नहीं' और जब वह 'नहीं' कहता है तो उसका आशय वह कूटनीतिज्ञ नेता नहीं है।

(य) सुधारक नेता–ऐसे नेता प्रचलित सामाजिक व्यवस्था की कमियों और दोषों को दूर करने का प्रयास करते हैं जो प्रजातांत्रिक समाज की देन होते हैं। ये क्रांतिकारी तो नहीं होते हैं परन्तु परिवर्तन एवं सुधार के प्रति भावुक अवश्य होते हैं। ये अपने सिद्धांतों प्रति वफादार होते हैं और सिद्धांतों के प्रति कोई समझौता नहीं करते हैं।

(र) आंदोलक नेता–इस प्रकार के नेता में कट्टरवादिता पाई जाती है जो सिद्ध ांतों का प्रसार चाहते हैं तथा विरोध होने पर तुरन्त उत्तेजित हो जाते हैं। इनमें समझौते की प्रवृत्ति का अभाव होता है। ये स्वभाव से उग्र व असहिष्णु होते हैं जो अपने लक्ष्य की प्राप्ति हेतु हिंसा का सहारा लेते हैं।

(ल) सिद्धांतवादी नेता–ऐसे नेता अव्यावहारिक होते हैं जो आन्दोलन में विश्वास नहीं करते हैं। ये ताक्रिक बुद्धि के होते हैं तथा ये इस बात की परवाह नहीं करते हैं कि इनके सिद्धांत व्यवहार में लाये जा सकते हैं या नहीं। ये अपने सिद्धांतों को संगठित व योजनाबद्ध रूप में प्रस्तुत करते हैं।

2. मैक्स वेबर के अनुसार नेतृत्व के प्रकार–मैक्स वेबर ने नेतृत्व के तीन प्रकारों का वर्णन किया है, जो निम्नवत हैं–

टिप्पणी

(अ) परम्परात्मक नेता–ऐसे नेताओं को नेतृत्व पितृसत्ता के रूप में प्राप्त होता है। ऐसे नेता किसी प्रथा, कानून, रीति या विरासत में नेतृत्व सत्ता प्राप्त होती है, जैसे, राजा का पुत्र अपने पिता के बाद राजा होता है।

(ब) चमत्कारी या करिश्माई नेता–इस प्रकार के नेताओं में कोई विलक्षण योग्यता, करामात या चमत्कार दिखाने की कोई वास्तविक या काल्पनिक शक्ति होती है। इसमें काफी समय, प्रयत्न, साधना और कभी–कभी प्रचार की आवश्यकता होती है। जादूगर, पीर, पैगम्बर, धार्मिक नेता, सैनिक, योद्धा इत्यादि इस प्रकार के नेता होते हैं।

(स) वैधानिक नेता–इस प्रकार के नेताओं को कानून के द्वारा सत्ता प्राप्त होती है जिसमें विभिन्न विभागों के अधिकारी, प्रधानमंत्री, राष्ट्रपति, जिलाधिकारी इत्यादि इस श्रेणी में आते हैं। ये सभी औपचारिक नेता होते हैं।

3. बोगार्डस के अनुसार नेतृत्व के प्रकार–इन्होंने नेतृत्व के पांच प्रकारों का वर्णन किया है, अग्रलिखित हैं–

(अ) प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष नेतृत्व–प्रत्यक्ष नेतृत्व के अन्तर्गत नेता का अपने समूह से प्रत्यक्ष सम्पर्क होता है। इस प्रकार के नेतृत्व में समूह अपने नेता को देख और सुन सकते हैं तथा अपनी बात उससे कह सकते हैं। ऐसा नेता अपने बुद्धि–कौशल से तथा वाक्पटुता से समूह के सदस्यों से अपनी बात मनवाता है और उन्हें यह विश्वास दिलाता है कि वह भी उन्हीं में से एक है। जबकि अप्रत्यक्ष नेतृत्व में नेता अपने अनुयायियों से अप्रत्यक्ष सम्पर्क करता है तथा वह अपनी खोजों, विचारों व कार्यों द्वारा विशाल जनसमुदाय तथा अपने दूर–दूर स्थित व्यक्तियों में भी अपनी ख्याति तथा प्रभाव व्याप्त कर लेता है।

(ब) सपक्षीय एवं वैज्ञानिक नेतृत्व–इसमें नेतृत्व एक पक्षीय होता है, अर्थात् इसमें नेता अपने समूह के अवगुणों को ढक कर दूसरे समूहों की तुलना में अपने समूह के गुणों को बढ़ा–चढ़ाकर व्याख्या करता है तथा अपने समूह के हित के बारे में ही सोचता है। इस श्रेणी में राजनीतिक नेता आते हैं। दूसरी तरफ वैज्ञानिक नेतृत्व में नेता सत्य और असत्य तथा अच्छाई और बुराई दोनों का समान रूप से मूल्यांकन करता है तथा सत्य की खोज में हमेशा लगा रहता है। वह किसी विशेष हित से जुड़ा हुआ न होकर सबके प्रति समान दृष्टिकोण रखने वाला होता है।

(स) सामाजिक अधिशासी व मानसिक नेतृत्व–सामाजिक नेतृत्व में नेता अपने त्यागमयी जीवन द्वारा सामाजिक कार्यों को सम्पन्न कर समस्याओं का समाधान करता है और समूह में प्रसिद्धि पाता है जबकि मानसिक नेतृत्व में नेता में बौद्धिकता अधिक होती है जो अपनी बुद्धि द्वारा अपने विचारों का प्रभाव अन्य व्यक्तियों के मस्तिष्क पर डालकर अपने विचारों को परिवर्तित करने की क्षमता रखते हैं, लेकिन ऐसे नेताओं के लिए शान्ति या जीवन–यापन की सुविधाओं का होना वांछित है। दूसरी तरफ प्रबंधक या अधिशासी नेतृत्व में नेता में समाज–सेवा, बौद्धिक उपलब्धि व प्रबन्ध–योग्यता, आदि सभी गुण होते हैं। ऐसे नेता अपने विचारों से व्यक्तियों को प्रभावित कर समाज–सेवी कार्य करने हेतु उन्हें प्रेरित करते हैं तथा स्वयं भी समाज सेवा में संलग्न रहते हैं। ये प्रबंध क्षमता के कारण अन्य व्यक्तियों पर शासन भी करते हैं।

(द) पैगम्बर, सन्त, विशेषज्ञ व मालिक–पैगम्बर को ईश्वर का दूत समझा जाता है एवं उसके कथनों को ईश्वरीय प्रेरक माना जाता है इसी कारण लोग उसके आध्यात्मिक विचारों को ग्रहण कर उसके अनुयायी बन जाते हैं। ऐसे नेता में अविश्वास उस स्थिति में उत्पन्न होता है जब लोगों में अलौकिक शक्ति के विश्वास में कमी आती है। जबकि संत सात्विक, सादा व पवित्र जीवन–यापन करते हुए ईश्वर की भक्ति में लीन रहते हैं। ये अपने उपदेशों के जरिये लोगों को प्रभावित कर उन्हें सात्विक जीवन जीने के लिए प्रेरित करते रहते हैं।

विशेषज्ञ वे होते हैं जो किसी क्षेत्र में विशेष योग्यता व दक्षता रखते हैं तथा प्रतिस्पर्द्धा में सबसे आगे होते हैं जो अपने क्षेत्र में सर्वोच्च स्थिति रखते हैं। अतः ऐसे व्यक्तियों को लोग उनकी कुशलता के कारण अनुसरण करते हैं तथा उनसे प्रेरित होते हैं। दूसरी तरफ मालिक नेता अपनी चतुराई व सम्पन्नता के कारण दूसरों पर शासन करते हैं। चूंकि ऐसे नेताओं का क्षेत्र विस्तृत नहीं होता है। फैक्टरी, कारखाना, दफ्तरों के अफसर या मालिक या सत्ताप्राप्त राजनीतिज्ञ इसी श्रेणी में आते हैं।

(य) स्वेच्छाचारी, करिश्माई, पैतृक तथा प्रजातांत्रिक नेतृत्व–स्वेच्छाचारी नेता बहुमुखी प्रतिभा से सम्पन्न होते हैं जिनके हाथ में सत्ता संबंधी सभी अधिकार होते हैं। समूह की इच्छा, अनिच्छा व लाभ–हानि की उसे चिन्ता नहीं होती है बल्कि उसकी इच्छा सर्वोपरि होती है। करिश्माई नेता किसी विधि–विधान एवं परम्परा की अपेक्षा अपनी विलक्षण प्रतिभा व करिश्मा के कारण नेतृत्व प्राप्त करते हैं। इनको अपने चमत्कारों से प्रभावित करने के लिए साधना, प्रयत्न एवं प्रचार–प्रसार की आवश्यकता होती है।

पैतृक नेता का अपने अनुयायियों से घनिष्ठ संबंध होता है, वे पितातुल्य होते हैं तथा लोगों के दिलों में उनके लिए अपार श्रद्धा के भाव होते हैं। ये जन–कल्याण की भावना से परिपूर्ण होते हैं। दूसरी तरफ प्रजातंत्रात्मक नेता अपने समूह के हित, सुख–सुविधाओं व विचारों के प्रति हमेशा सजग रहते हैं। तानाशाही की अपेक्षा समूह–कल्याण हेतु वे अपना सर्वस्व न्यौछावर कर देते हैं।

4. नेतृत्व के अन्य प्रकार–नेतृत्व के अन्य प्रकार अग्रलिखित हैं–

(अ) अधिनायकवादी नेतृत्व–इस प्रकार के नेतृत्व में नेता अपने लक्ष्यों एवं कार्यों को प्राप्त करने के लिए भय का सहारा लेता है। अतः अनुयायियों को दण्ड का भय रहता है जिसके कारण वे उसका विरोध नहीं करते हैं। यह नेतृत्व नकारात्मक कार्य प्रणाली पर आधारित होता है, जिसकी मूल मान्यता होती है कि लोगों को कार्य करने के लिए भय दिखाकर प्रेरित किया जाये। नेता लोगों को भय दिखाकर कार्य करने के लिए तैयार करता है। इस प्रकार से प्राप्त परिणाम अपने आप में महत्वपूर्ण हो सकते हैं लेकिन सदस्यों में हमेशा असन्तोष बना रहता है।

(ब) निरंकुशवादी नेतृत्व–इस प्रकार के नेतृत्व में नेता बहुमुखी प्रतिभा से सम्पन्न होता है। इस प्रकार के नेता का कार्य अपने अनुयायियों को आदेशित कर अपनी इच्छा के अनुसार कार्य कराना होता है। ऐसे नेता की इच्छा एवं निर्णय सर्वोपरि होते हैं तथा समूह के कार्य, लाभ एवं इच्छायें उसके व्यवहार में विलीन हो

जाते हैं। उनका अलग से कोई अस्तित्व ही नहीं रहता है। क्रेच एवं क्रचफील्ड ने निरंकुश नेतृत्व के बारे में लिखा है कि, ''निरंकुश नेता प्रजातंत्रात्मक नेता की अपेक्षा अत्यधिक निरंकुश शक्ति रखता है और वह स्वयं समूह की सारी नीतियों का निर्धारण करता है। वही प्रमुखतः योजनाओं को बनाता है। वह अकेला ही सामूहिक क्रियाओं के अगले कदमों के क्रम के निर्धारण के सम्बंध में पूर्णतया सचेत रहता है। वह स्वयं ही सदस्यों की क्रियाओं और पारस्परिक संबंधों के विषय में निर्देशन देता है। वह स्वयं ही अंतिम या सर्वोच्च मध्यस्त और न्यायाधीश के रूप में व्यक्तिगत सदस्यों को पुरस्कार या दण्ड देने का कार्य करता है और इसलिए समूह संरचना के अन्तर्गत प्रत्येक व्यक्ति के भाग्य का निर्णय भी वही करता है।'' इस प्रकार का नेता जानबूझकर सभी कार्यों पर अपना एकाधिकार कर लेता है तथा प्रभुत्व स्थापित करने के लिए विभिन्न प्रकार की प्रविधियों को उपयोग में लाता है, जो अग्रलिखित हैं–

1. समूह के आदर्शों को वह स्वयं निश्चित करता है तथा किसी अन्य को हस्तक्षेप नहीं करने देता है।
2. समूह के सभी नियमों का निर्धारण वह स्वयं ही करता है।
3. वह समूह के सदस्यों के मध्य मनोवैज्ञानिक रूप से ऐसा विश्वास उत्पन्न कर देता है कि किसी भी कार्य को करने के लिए सभी को उसी पर आश्रित होना चाहिए।
4. वह किसी को भी छोटे से छोटे कार्य को नहीं करने देता है।
5. वह अपने समूह के सदस्यों का बौद्धिक ह्रास करता है।
6. वह समूह के सदस्यों में प्रत्यक्ष सम्पर्क व परस्पर सहयोग की सम्भावनाओं को समाप्त कर देता है।
7. वह 'फूट डालो और राज करो' की नीति पर काम करता है।
8. वह समूह के सदस्यों के पारस्परिक आंतरिक संबंधों पर नियंत्रण कर एकछत्र शासन करता है।

इस प्रकार निरंकुश नेता उपरोक्त प्रविधियों के आधार पर अपने अनुयायियों को पंगु बना देता है तथा ऐसे नेता के बिना अनुयायियों के अस्तित्व की कल्पना करना भी निरर्थक होता है।

(स) प्रजातांत्रिक नेतृत्व–इस प्रकार के नेतृत्व में नेता समूह का तथा समूह के लिए होता है। वह अपने समूह के सदस्यों को अधिक से अधिक कार्य करने की प्रेरणा प्रदान करता है, सबके साथ उचित व समान व्यवहार करता है, समूह के सदस्यों की समस्याओं का निराकरण करता है तथा समूह के सदस्यों द्वारा किये गये छोटे से छोटे कार्य को महत्व प्रदान करता है। प्रजातांत्रिक नेतृत्व में नेता के कार्यों का उल्लेख करते हुए क्रेच एवं क्रचफील्ड ने लिखा है कि, ''एक प्रजातांत्रिक नेता समूह की क्रियाओं और उद्देश्यों के निर्धारण में भाग लेने के लिए प्रत्येक सदस्य को अधिक से अधिक प्रेरित करता है। वह उत्तरदायित्वों को अपने में ही केन्द्रित न करके इन्हें सदस्यों में विभाजित करता है। वह समूह की संरचना को शक्तिशाली बनाने के लिए सदस्यों के परस्पर सम्बंधों और सम्पर्क को बढ़ाने हेतु प्रोत्साहन प्रदान करता है। प्रजातांत्रिक नेता विभिन्न समूहों के पारस्परिक तनाव और संघर्षों को कम करने का प्रयत्न

करता है। वह एक ऐसी श्रेणीबद्ध समूह संरचना से बचने की कोशिश करता है जिसमें अधिकार सम्पन्न और उच्च स्थिति वाले व्यक्तियों का प्रभुत्व हो।''

इस प्रकार के नेतृत्व में अनुकरण करने वाले लोग यह समझते हैं कि नेता जो कुछ कर रहा है वह उनकी भलाई के लिए ही कर रहा है। इसमें लोग अपनी स्वेच्छा से नेता के आदेश का पालन करते हैं। इस प्रकार के नेतृत्व सदस्यों में उच्चतम निपुणताओं का विकास करता है तथा अधिकतम संतोष प्रदान करता है। इस प्रकार के संबंधों में घनिष्ठता व पारस्पकि लगाव अधिक होता है।

(द) **हस्तक्षेप–विहीन नेतृत्व**–इस प्रकार के नेतृत्व में नेता समूह के सदस्यों के ऊपर किसी प्रकार का दबाव नहीं डालता है। वह न तो समूह के कार्यों में हस्तक्षेप करता है और न ही किसी प्रकार का सहयोग प्रदान करता है। इसमें सदस्यों को स्वयं अपने लक्ष्य निर्धारित करने होते हैं तथा स्वयं निर्णय लेना होता है। इसमें सदस्यों को निराशा होती है। वे सामान्य लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए इधर–उधर घुमते रहते हैं। इस कारण समूह में असंगठन एवं दिशा भ्रम की स्थिति स्पष्ट देखने को मिलती है।

4.3.3 समूह कार्य प्रक्रिया के माध्यम से नेतृत्व विकास

सामाजिक समूह कार्य प्रक्रिया एक निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है जब तक कि समूह के लक्ष्य जो पूर्व में निर्धारित किये गये थे उनकी प्राप्ति न हो जाये। समूह कार्य की प्रक्रिया में सर्वप्रथम जब सेवार्थी अपनी समस्याओं के निराकरण के लिए संस्था के पास आता है तभी से समूह कार्य में उसके व्यक्तित्व विकास हेतु प्रक्रिया शुरू हो जाती है। समूह कार्यकर्ता उसकी समस्याओं की खोज करता है तथा सजातीय समस्याओं वाले समूह के साथ उसको संदर्भित कर दिया जाता है, जहां पर उसके व्यक्तित्व विकास हेतु विभिन्न प्रकार के कार्यक्रम नियोजित किये जाते हैं जिससे उसके व्यक्तित्व का विकास हो सके। इन्हीं कार्यक्रमों में कुछ ऐसे कार्यक्रमों का निर्माण भी किया जाता है जिससे समूह के सदस्यों में नेतृत्व क्षमता का विकास किया जा सके। यह सर्वविदित है कि समूह कार्य की प्रक्रिया में सामूहिक कार्यकर्ता बाहरी व्यक्ति होता है जो समूह के सदस्यों को निर्णय लेने में सहायता करता है। सामूहिक कार्यकर्ता कभी भी समूह का नेतृत्व नहीं करता है। वह हमेशा समूह के सदस्यों में से ही ऐसे व्यक्ति का चुनाव करता है जिसमें नेतृत्व का गुण हो और जो समूह का नेतृत्व कर सके। नेता का चुनाव प्रजातांत्रिक प्रणाली के आधार पर किया जाता है।

समूह कार्य में ऐसा नहीं है कि सभी सदस्यों में नेतृत्व का गुण पाया जाता है और वे नेतृत्व करने योग्य होते हैं। समूह कार्य प्रक्रिया के माध्यम से समूह के सदस्यों में नेतृत्व क्षमता का विकास किया जाता है जिससे समूह के सदस्यों में नेतृत्व क्षमता विकसित होती है। इसके लिए समूह कार्य प्रक्रिया में समूह के सदस्यों में विभिन्न कार्यक्रमों के माध्यम से निम्न गुणों का विकास किया जाता है जिससे नेतृत्व का विकास संभव हो पाता है। इन गुणों को हम निम्नलिखित बिन्दुओं के माध्यम से समझ सकते हैं–

1. **समूह कार्य प्रक्रिया द्वारा समूह के सदस्यों में बौद्धिक क्षमता का विकास किया जाता है**–समूह कार्य में समूह के सदस्यों के व्यक्तित्व विकास के लिए विभिन्न कार्यक्रमों का निर्माण उन्हीं के प्रयासों द्वारा कराने का प्रयास किया जाता है जिससे समूह के सभी सदस्यों में समान रूप से व्यक्तित्व का विकास

हो सके। इसी परिप्रेक्ष्य में समूह कार्य प्रक्रिया में बौद्धिक क्षमता के विकास के लिए समूह कार्यकर्ता समूह के सदस्यों से समय–समय पर ऐसे कार्यक्रमों का निर्माण कराने की कोशिश करता है जिससे समूह के सदस्यों का बौद्धिक विकास सम्भव हो सके। जैसे, प्रश्नोत्तरी कार्यक्रम, खेल–खेल में जानो इत्यादि कार्यक्रमों के माध्यम से बौद्धिक क्षमता को विकसित किया जा सकता है। बौद्धिक क्षमता चूंकि किसी भी व्यक्ति को नेतृत्व का गुण प्रदान करती है इसलिए इसका व्यक्ति में होना आवश्यक है। जब समूह के सदस्यों का बौद्धिक विकास हो जाता है तो वे निर्णय लेने में निपुण हो जाते हैं। इस प्रकार समूह कार्य प्रक्रिया के द्वारा समूह में नेतृत्व क्षमता का विकास बौद्धिक क्षमता के विकास द्वारा किया जा सकता है।

2. **समूह कार्य प्रक्रिया द्वारा समूह के सदस्यों में पूर्वानुमान की क्षमता का विकास किया जाता है**–पूर्वानुमान की क्षमता किसी भी नेता का वह गुण है जिसके माध्यम से वह भविष्य में होने वाली क्रियाओं का सही–सही आकलन कर सकता है। समूह कार्य की प्रक्रिया में समूह के सदस्यों में पूर्वानुमान की क्षमता के विकास के लिए ऐसे कार्यक्रमों का निर्माण किया जाता है जिससे वे पूर्वानुमान लगाने में महारत हासिल कर सकें। इसके लिए समूह कार्य प्रक्रिया के अन्तर्गत ऐसे माहौल सदस्यों को प्रदान किया जाता है जिसमें वे पूर्वानुमान कर सकें तथा इसके लिए उनमें क्षमता का विकास हो सके। समूह कार्य प्रक्रिया के द्वारा समूह के सदस्यों को बार–बार ऐसे मौके प्रदान किये जाते हैं जिसमें वे अपना शतप्रतिशत योगदान दें तथा यदि किसी प्रकार की कठिनाई आती है तो समूह कार्यकर्ता समूह के सदस्यों की सहायता पूर्वानुमान लगाने में करता है। इस प्रकार समूह कार्य प्रक्रिया में पूर्वानुमान की क्षमता का विकास कर नेतृत्व क्षमता का विकास किया जाता है।

3. **समूह कार्य प्रक्रिया द्वारा समूह के सदस्यों में आत्मविश्वास की क्षमता का विकास किया जाता है**–आत्मविश्वास किसी भी नेता का वह गुण है जिसके आधार पर वह कठिन से कठिन परिस्थितियों का सामना बिना किसी भय के पूरा कर लेता है। समूह कार्य में भी समूह के माध्यम से सदस्यों में आत्मविश्वास की क्षमता के विकास के लिए ऐसे कार्यक्रमों का निर्माण किया जाता है जिससे सदस्यों मे आत्मविश्वास जागृत हो सके। इसके लिए उन्हें कार्यक्रम निर्माण करने के लिए कहा जाता है तथा उन्हें आश्वस्त किया जाता है कि यदि किसी प्रकार की समस्या आयेगी तो उसके लिए समूह के सभी सदस्य उसकी सहायता करेंगे। इस प्रकार एक दो असफलताओं के बाद समूह के सदस्यों में आत्मविश्वास जागृत हो जाता है। अतः समूह कार्य प्रक्रिया में आत्मविश्वास की क्षमता को विकसित कर नेतृत्व क्षमता का विकास किया जाता है।

4. **समूह कार्य प्रक्रिया द्वारा समूह के सदस्यों में संकल्प भाक्ति का विकास किया जाता है**–नेतृत्वकर्ता में संकल्प शक्ति वह शक्ति होती है जिसके आधार पर वह विशेष व्यवहार करता है तथा अधिक से अधिक कठिनाइयों से निपटने के लिए यही शक्ति उत्तरदायी होती है। समूह कार्य में समूह के सदस्यों में इस शक्ति के विकास के लिए विभिन्न कार्यक्रम बनाये जाते हैं तथा समस्यों

टिप्पणी

में इस शक्ति का विकास किया जाता है। सदस्यों को ऐसे कार्य दिये जाते हैं जिससे वे अपने मन में संकल्प शक्ति का विकास कर सकें। अतः हम कह सकते हैं कि समूह कार्य प्रक्रिया द्वारा समूह के सदस्यों में संकल्प शक्ति का विकास कर नेतृत्व क्षमता का विकास किया जाता है।

5. **समूह कार्य प्रक्रिया द्वारा समूह के सदस्यों में जोखिम उठाने की क्षमता का विकास किया जाता है**—नेतृत्व में जोखिम उठाने की क्षमता होती है। अतः समूह कार्य की प्रक्रिया में समूह के सदस्यों में जोखिम उठाने की क्षमता के विकास के लिए उन्हें कई प्रकार के कार्य प्रदान किये जाते हैं जिससे वे सीखकर इस क्षमता का विकास करते हैं। अतः समूह कार्य प्रक्रिया द्वारा समूह के सदस्यों में जोखिम उठाने की क्षमता का विकास किया जाता है।

6. **समूह कार्य प्रक्रिया द्वारा समूह के सदस्यों में व्यवहार को समझने की क्षमता का विकास किया जाता है**—नेतृत्व की सबसे बड़ी आवश्यकता लोगों के व्यवहार को समझने की होती है। इसी के आधार पर नेता अपनी बातों को लोगों के सामने रखते हैं और लोगों को अपना अनुयायी बनाते हैं। अतः इस क्षमता के विकास के लिए समूह के सदस्यों को कार्यक्रमों के माध्यम से प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है कि वे भी लोगों के व्यवहारों को समझ सकें तथा भविष्य में इसका उपयोग अपने नेतृत्व विकास के लिए कर सकें। इस प्रकार समूह कार्य प्रक्रिया द्वारा समूह के सदस्यों में व्यवहार को समझने की क्षमता का विकास किया जाता है।

7. **समूह कार्य प्रक्रिया द्वारा समूह के सदस्यों में निर्णय की तत्परता का विकास किया जाता है**—नेता का कार्य सही निर्णय लेना तथा तत्परता दिखाना होता है, जिससे समूह को आवश्यक निर्देशन प्राप्त हो सके। इसके लिए समूह कार्य की प्रक्रिया में सदस्यों के व्यक्तित्व विकास हेतु निर्णय की तत्परता हेतु अवसर उपलब्ध कराये जाते हैं जिससे कि वे अपने अन्दर इस क्षमता का विकास कर सकें। इस प्रकार समूह कार्य प्रक्रिया द्वारा समूह के सदस्यों में निर्णय की तत्परता का विकास किया जाता है।

8. **समूह कार्य प्रक्रिया द्वारा समूह के सदस्यों में सरलता का विकास किया जाता है**—नेतृत्व के गुणों में सरलता भी एक गुण होता है। इसका तात्पर्य सादा जीवन उच्च विचार होता है। इसके लिए समूह कार्य समूह के सदस्यों में सरलता का विकास करता है। उनके अन्दर यह भावना भरी जाती है कि सभी समूह के सदस्य समान है तथा सभी का महत्व एक जैसा है। इस प्रकार समूह कार्य प्रक्रिया द्वारा समूह के सदस्यों में सरलता का विकास किया जाता है।

9. **समूह कार्य प्रक्रिया द्वारा समूह के सदस्यों में लचीले व्यवहार का विकास किया जाता है**—नेता का व्यवहार समय के अनुसार होता है। अतः समूह कार्य के द्वारा समूह के सदस्यों में लचीले व्यवहार का विकास किया जाता है। उनको विभिन्न कार्यक्रमों के माध्यम से यह दिखाने का प्रयत्न किया जाता है कि यदी कही पर भी असफलता मिलती है तो लचीलेपन का सहारा लेकर पुनः नये कार्यक्रमों का निर्माण करना चाहिए तथा सफलता प्राप्त करनी चाहिए। इस प्रकार समूह कार्य प्रक्रिया द्वारा समूह के सदस्यों में लचीले व्यवहार का विकास किया जाता है।

टिप्पणी

10. **समूह कार्य प्रक्रिया द्वारा समूह के सदस्यों में सामाजिकता का विकास किया जाता है**—नेतृत्व का गुण मिलनसार या सामाजिकता भी होता है। समूह कार्य की प्रक्रिया में समूह के सदस्यों में सामाजिकता का विकास कार्यक्रमों के माध्यम से किया जाता है। उनको समूह के अन्य सदस्यों के साथ उठने–बैठने का अवसर उपलब्ध कराया जाता है जिससे उनके अन्दर सामाजिकता का विकास संभव हो सके। अतः समूह कार्य प्रक्रिया द्वारा समूह के सदस्यों में सामाजिकता का विकास किया जाता है।

11. **समूह कार्य प्रक्रिया द्वारा समूह के सदस्यों में नैतिकता का विकास किया जाता है**—नेतृत्व के लिए आवश्यक है कि नेता में ईमानदारी, दूसरों का कल्याण, उत्तम चरित्र, उदार दृष्टिकोण तथा दूसरों को लाभ पहुंचाने की भावना होनी चाहिए। इसके लिए समूह कार्य प्रक्रिया में प्रजातांत्रिक मूल्यों की स्थापना की जाती है तथा समूह के सभी सदस्यों को एक दूसरे की भावनाओं की कद्र करना सिखाया जाता है। उनमें यह भावना भरी जाती है कि सबका विकास ही समूह का लक्ष्य है। अतः सभी लोग एक दूसरे का आदर करें तथा एक दूसरे की सहायता करें। समूह में ऐसे पर्यावरण का निर्माण किया जाता है कि सभी सदस्य एक दूसरे के कल्याण के लिए कार्य करें तथा एक दूसरे का सम्मान करें। इस प्रकार समूह कार्य प्रक्रिया द्वारा समूह के सदस्यों में नैतिकता का विकास किया जाता है।

इस प्रकार उपरोक्त बिन्दुओं के माध्यम से हम कह सकते हैं कि समूह कार्य प्रक्रिया के माध्यम से नेतृत्व विकास किया जाता है जो विभिन्न कार्यक्रमों के आधार पर निर्भर होता है। इस प्रक्रिया में प्रजातांत्रिक मूल्यों का विशेष ध्यान रखा जाता है।

अपनी प्रगति जांचिए

3. "नेतृत्व का तात्पर्य एक व्यक्ति द्वारा की जाने वाली उन क्रियाओं से है जो दूसरे व्यक्तियों को एक विशेष दिशा में प्रभावित करती हैं।" नेतृत्व की यह परिभाषा किसने दी है?

   (क) लेपियर तथा फांसवर्थ (ख) कूपर तथा मैकगाथ

   (ग) मैकाइवर तथा पेज (घ) सीमेन तथा मोरिस

4. मैक्स वेबर ने नेतृत्व को कितने प्रकार का माना है?

   (क) तीन (ख) चार

   (ग) पांच (घ) सात

4.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

1. (क)
2. (ख)
3. (घ)
4. (क)

4.5 सारांश

समाज कार्य में कार्यक्रम का महत्व अधिक है। सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य में सेवार्थियों के व्यक्तित्व विकास में प्रत्येक क्रिया–कलाप, कार्यक्रमों के माध्यम से ही किया जाता है जिससे लक्ष्यों को आसानी से प्राप्त किया जा सके। वस्तुतः समाज कार्य में कार्यक्रम की विचारधारा ने अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। कार्यक्रम की समाज कार्य में अवधारणा नवीन है। कार्यक्रम को पहले क्रियाओं एवं घटनाओं से संबंधित किया जाता था तथा समूह उन्हीं क्रियाओं को सम्पन्न करता था जो समूह के सदस्यों एवं संस्थाओं को दिखाई देती थीं। लेकिन समय के साथ–साथ परिवर्तन होते गये और सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रम ने अपना महत्वपूर्ण स्थान स्थापित कर लिया। आज सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य में प्रत्येक क्रिया कार्यक्रम के अन्तर्गत सम्मिलित की जाती है।

कोई भी कार्यक्रम तब तक सफल नहीं हो सकता जब तक उसका उचित नियोजन न किया जाये। अतः कार्यक्रम नियोजन द्वारा ही उद्देश्य पूर्ति के लिए वास्तविक प्रयास किया जाता है। किसी कार्य को निश्चित लक्ष्य प्राप्त करने के लिए व्यवस्थित रूप से सम्पन्न करना ही नियोजन होता है। इसके अन्तर्गत विद्यमान परिस्थितियों तथा सम्भावित परिवर्तनों की उपयोगिता को ध्यान में रखकर एक नियमित, व्यवस्थित तथा सुसंगत रूपरेखा तैयार की जाती है, जिससे भविष्य में परिर्वतनों को अपेक्षित लक्ष्यों के अनुरूप नियंत्रित, निर्देशित तथा संशोधित किया जा सके। वास्तव में नियोजन भौतिक पर्यावरण का कुशलतापूर्वक उपयोग करने की प्रक्रिया है।

सामाजिक सामूहिक कार्य में विकास का महत्व बहुत अधिक है। जब हम कार्यक्रम का नियोजन करते हैं तो केवल नियोजन करना ही आवश्यक नहीं होता है, कार्यक्रम का विकास करना नियोजन करने जैसा ही महत्पूर्ण है। सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य में सामूहिक अनुभव हेतु कार्यक्रम का विकास करना अत्यंत आवश्यक होता है। हम जानते हैं कि समूह में परिवर्तन होता रहता है क्योंकि परिवर्तन एक सामाजिक प्रक्रिया है। अतः विकास की गति भी निरन्तर चलती रहती है। इसलिए कार्यक्रमों का विकास आवश्यक होता है। इसमें विकास के एक स्तर से दूसरे स्तर के साथ संबंध होता है तथा उसकी एक निश्चित दिशा होती है। यह परिवर्तन सरलता से जटिलता की ओर होता है। अतः कार्यक्रमों का विकास समूह के लक्ष्यों को प्राप्त करने में सहायक होता है। इसकी सहायता से समूह के सदस्यों के व्यक्तित्व का विकास किया जाता है।

सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य व्यक्ति एवं समूह का विकास विभिन्न कार्यक्रमों के द्वारा करने का प्रयास करता है। कार्यक्रम के इन माध्यमों में खेल–कूद, मनोरंजनात्मक क्रियायें, नृत्य, संगीत, कहानी, नाटक, कला, शिल्प, सिलाई, कढ़ाई, चित्रकारी, प्राकृतिक अध्ययन, शैक्षिक भ्रमण इत्यादि का सहारा समूह के विकास में लिया जाता है। समूह के लिए कार्यक्रम के माध्यम वे यंत्र होते हैं जिनका उपयोग समूह द्वारा इच्छित व्यक्तिगत एवं सामाजिक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए किया जाता है। इस प्रकार समूह के कार्यक्रम का उद्देश्य उन लक्ष्यों को प्राप्त करना है जिनको सदस्य चाहते हैं तो कार्यक्रम की विषयवस्तु तथा उसके कार्यान्वयन का तरीका उन्हीं के अनुसार व्यवस्थित तरीके से होना चाहिए।

टिप्पणी

नेतृत्व एक सर्वव्यापी घटना है। समाज में नेतृत्व हमेशा से विद्यमान रहा है और हमेशा ही नेतृत्व होता आया है। समाज की शक्ति संरचना में नेतृत्व का महत्वपूर्ण स्थान है। नेतृत्व ही राजनीतिक संगठनों एवं शक्ति संरचना को जीवन, दिशा और प्रवाह करता है। वर्तमान जटिल समाजों में तो सम्पूर्ण सामाजिक व्यवस्था नेतृत्व पर आधारित है। नेतृत्व के अध्ययन के बिना हम राजनीतिक संगठनों और संरचनाओं की 'कार्य प्रणाली' को नहीं समझ सकते। इसलिए समाज वैज्ञानिकों ने अपना ध्यान नेता और अभिजात वर्ग के अध्ययन की ओर लगाया है। वर्तमान में नेतृत्व से संबंधित अनेक अध्ययन राजनीतिज्ञों, मनोवैज्ञानिकों एवं समाजशास्त्रियों द्वारा किये गये हैं। इनका संबंध नेतृत्व की परिभाषा, उत्पत्ति, सिद्धांत, कार्य, विशेषताओं और स्रोतों को ज्ञात करने से रहा है। शक्ति का सदुपयोग एवं दुरूपयोग नेता की योग्यता एवं क्षमता पर आधारित होता है। प्रत्येक समाज की शक्ति संरचना में कुछ ऐसे व्यक्ति होते हैं जो लोगों को हमेशा प्रोत्साहित करते हैं तथा प्रेरणा प्रदान करते हैं, मार्गदर्शन देते हैं या लोगों को क्रिया करने के लिए प्रभावित करते हैं। ऐसी क्रिया को नेतृत्व और ऐसे व्यक्तियों को नेता, शक्ति धारण करने वाले, शक्ति मानव, शक्ति केन्द्र और शक्ति अभिजात कह सकते हैं। ऐसे व्यक्ति समूह के अन्य लोगों से अपनी भूमिका, प्रभाव और सामाजिक शक्ति के कारण ही भिन्न होते हैं। अतः जहां भी जीवन है वहां समाज होता है और जहां समाज होता है वहां नेतृत्व होता है। व्यक्ति की प्रतिभा और सामाजिक परिस्थितियां व्यक्ति में नेतृत्व के भाव को जाग्रत करती हैं। वर्तमान में प्रभाव एवं प्रभुत्व ने भी नेतृत्व को जन्म दिया है।

4.6 मुख्य शब्दावली

- **कार्यक्रम** : कार्यक्रम शब्द उन क्रियाओं में प्रयोग किया जाता है जो वार्तालाप के स्थान पर करने पर अधिक महत्व देती हैं।
- **नियोजन** : नियोजन लक्ष्यों का आरोपण, उनकी पूर्ति के लिए साधनों की व्यवस्था और क्रियाओं के व्यवस्थित रूपों, जो कि सामान्य सामाजिक व्यवस्था से उत्पन्न होते हैं, का प्रयोग है।
- **विकास** : कार्यक्रमों का विकास समूह के लक्ष्यों को प्राप्त करने में सहायक होता है। इसकी सहायता से समूह के सदस्यों के व्यक्तित्व का विकास किया जाता है।
- **नेतृत्व** : नेतृत्व का तात्पर्य एक व्यक्ति द्वारा की जाने वाली उन क्रियाओं से है जो दूसरे व्यक्तियों को एक विशेष दिशा में प्रभावित करती हैं।

4.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

लघु–उत्तरीय प्रश्न

1. सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रम के अर्थ को स्पष्ट कीजिए।
2. सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रम की प्रकृति एवं उद्देश्यों पर प्रकाश डालिये।
3. सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रम के सिद्धांतों का नाम लिखिए।

4. नियोजन के अर्थ को स्पष्ट कीजिए।
5. विकास के अर्थ को समझाइये।

दीर्घ–उत्तरीय प्रश्न

1. कार्यक्रम नियोजन तथा विकास में कार्यकर्ताओं की भूमिकाओं का वर्णन कीजिए।
2. सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य में कार्यक्रम के माध्यमों पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।
3. नेतृत्व की विस्तार से व्याख्या कीजिए।
4. नेतृत्व के प्रकारों का वर्णन कीजिए।
5. समूह कार्य प्रक्रिया के माध्यम से नेतृत्व विकास किस प्रकार किया जा सकता है, इस पर अपने विचार प्रकट कीजिए।

4.8 सहायक पाठ्य सामग्री

- Trecker, H. B., "Social Group Work: Principles and Practice", Association Press, New York, 1935, p. 142.
- Kelin, A. F., "Effective Group Work, Association Press, New York, 1972.
- Northen, H., "Social Work with Groups", Columbia University Press, New York, 1969.
- Middleman, R. R., "The Non-Verbal Method in Working with Groups", Association Press, New York, 1968.
- Vinter, R. D., "The Essential Components of Social Work Practice", in R. D. Vinter (ed.) Readings in Group Work Practice, Campus Publisher, Ann Arbor Mi, 1967.
- Chitamber, J. B., "Introductory Rural Sociology", p. 296.
- Lapiere and Farnsworth, "Social Psychology", p. 267.
- Gibb, C. A., "Leadership: Selected Readings", Penguin Book, Baltimore, 1969.
- Cooper, G. B. and Mc Ambgaugh, G. R., "Leadership Integrating Principles of Social Psychology", Schenkmon, Cambridgem, 1963.
- Mishra, P. D., "Samajik Vaiyaktik Seva Karya", Uttar Pradesh Hindi Sansthan, Lucknow, Second Edition, 1997. p. 124-139.
- Krech and Crutchfield, "Theory and Problems of Social Psychology", p. 423, 426.